तरहदार लौंडी

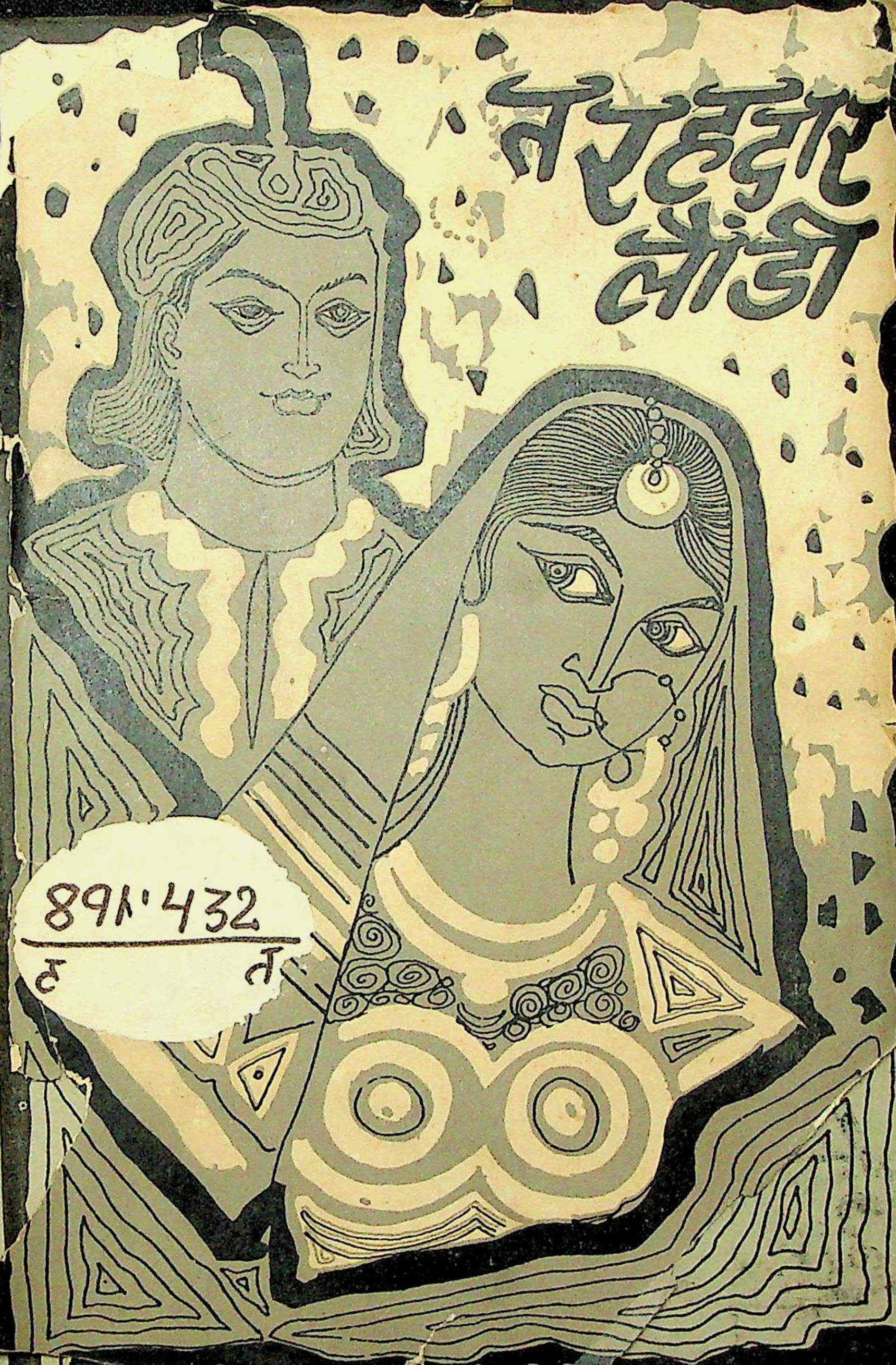

891.432
ट त

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड · इलाहाबाद

यह उपन्यास

अस्सी वर्ष पहिले का ज़माना !

अवध के दरबार की रोशनी धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। जीवन की सच्चाइयों के सम्मुख जागीरदारी के क़िले की चिन्दी उड़ रही थी। और, अफ़्यून के नशे में डूबे हुए मुफ़लिस नवाब अपने झूठे दबदबे की उस गिरती हुई दीवार को सम्भालने की बेसूद कोशिश कर रहे थे जो बालू की तरह धीरे-धीरे ढहती जा रही थी।

'तरहदार लौंडी' में इसी विघटनशील अवध की सभ्यता का रंगीन चित्रण है। इसमें लखनऊ की बेगमाती ज़बान का चटख़ारा है और इस गिरती हुई दीवार के धमाके की आवाज़ भी; लखनऊ के पतनशील समाज की आख़िरी हिचकियाँ हैं और एक सुनहरे भविष्य के आगमन की मधुर रंगीनी भी !

'तरहदार लौंडी' में शोख़ी भी है मोहकता भी !

ow

891.43

State Museum Library
* Lucknow *

तरहदार लौंडी

(रोचक उर्दू उपन्यास)

लेखक
मुंशी सज्जाद हुसैन

अनुवादक
शमीम हनफ़ी

संपादक
श्रीकृष्ण दास

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद

प्रकाशक :
मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
इलाहाबाद ।

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय, लखनऊ
क्रम संख्या 2626
प्राप्ति तिथि 28.5.65
State Museum, Library, Lko.

मूल्य
तीन रुपये

891.432
ह त

मुद्रक :
वीरेन्द्रनाथ घोष,
माया प्रेस प्राइवेट लिमिटेड,
इलाहाबाद ।

भूमिका

१८५७ के राष्ट्रीय आन्दोलन का जब एक बार दमन कर दिया गया तब कुछ दिनों तक ऐसा लगा कि देश का राष्ट्रीय जीवन सर्वथा क्षत-विक्षत हो गया है और उसके पुनर्गठित और जाग्रत होने में काफ़ी समय लग जायेगा। परन्तु पच्चीस वर्ष के भीतर ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का जिस प्रकार उद्भव और विकास हुआ वह इस बात का प्रमाण था कि विदेशी साम्राज्यवादियों के दमन और अत्याचारों के बावजूद हमारी राष्ट्रीय चेतना पूर्णतया लुप्त न हो सकी और वह फिर से सुदृढ़ और संगठित होने लगी।

इसी युग में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं में ऐसे साहित्य का निर्माण होने लगा जिसमें राष्ट्रीय चेतना भली-भांति परिलक्षित होती थी। हिन्दी में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने नाटकों और कविता के माध्यम से देश को सजग और चेतन बनाने का प्रयत्न किया। पश्चिम से सम्पर्क होने के फलस्वरूप उपन्यास के रूप में एक नवीन साहित्यिक विधा हाथ लग गई थी। आरम्भ से ही इस विधा का प्रयोग सामाजिक चेतना को जगाने के लिये किया जाने लगा। यह तो नहीं कहा जा सकता कि इन उपन्यासों में शुद्ध राजनीतिक प्रश्नों और समस्याओं को चित्रित किया गया था और उनका हल ढूँढ़ने का प्रयत्न किया गया था। परन्तु सामाजिक जीवन का और उसके विभिन्न अंगों का चित्रण जिस प्रकार किया गया उससे यह पता चल जाता है कि ये उपन्यास-

कार समाज में मौजूद नाना प्रकार की बुराइयों को दूर करना चाहते थे और ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जो सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टियों से अधिक जागरुक, सचेष्ठ एवं सम्पन्न हो। हिन्दी और उर्दू दोनों में इस प्रकार के उपन्यासों की रचना होती रही।

हमारे ये साहित्यकार केवल पुस्तकों के माध्यम से ही अपना मन्तव्य प्रकट करके चुप नहीं हो जाते थे बल्कि वे अपने विचारों का प्रचार करने के लिये पत्र-पत्रिकाओं का भी सहारा लेते थे और जन समाज को उद्‌बुद्ध एवं सक्रिय बनाने के लिये इन साधनों का प्रयोग करते थे। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने ऐसा ही किया था। उर्दू में भी यह प्रक्रिया चल रही थी।

'अवध पंच' का प्रकाशन उर्दू साहित्य के विकास का एक ऐतिहासिक मोड़ है। भारत की जनता में जाग्रति की लहरें दौड़ चुकी थीं। हम विदेशी साम्राज्य की आँखों में आँखें डाले खड़े थे और हमारी रगों में लहू की ज्वालाएँ भड़क रही थीं। हमारे देश के कोने-कोने में साहित्य के पुजारी अपने लेखों, अपनी कविताओं, अपने नाटकों और अपने उपन्यासों के पौधे हमारी भावनाओं के अमृत से सींच रहे थे।

और, मुंशी सज्जाद हुसैन उस 'अवध पंच' के सम्पादक थे जिसे पण्डित रतन नाथ 'सरशार', पण्डित त्रिभुवन नाथ 'हिज्र', नवाब सैयद मुहम्मद 'आज़ाद', 'अकबर' इलाहाबादी, मुंशी अहमद अली 'शौक़', मिर्ज़ा मुच्छूबेग 'सितमज़रीफ़', मुंशी ज्वाला प्रसाद 'बर्क़' और मुंशी अहमद अली कास्मंडवी जैसे यशस्वी लेखकों की महान् रचनाओं से प्रकाश मिलता था। पण्डित ब्रज नारायण चकबस्त के शब्दों में, 'ये लोग एक नई शैली के आविष्कारक ही नहीं, बल्कि ज़बान और क़लम के धनी भी थे और इनकी भाषा लखनऊ की टकसाली भाषा थी।' मुंशी सज्जाद हुसैन इस उपवन के माली थे जिसकी क्यारियों में हमारी सभ्यता, हमारे साहित्य और हमारे देश के ये रंगारंग फूल खिले हुए थे।

विदेशी साम्राज्य और विदेशी सभ्यता का दामन 'अवध पंच' की लपटों से झुलस रहा था और इस साम्राज्य के गुण गाने वालों से 'अवध पंच' चीख़-चीख़कर कह रहा था—

अख्तर हमारे हमलों से 'हाली' का हाल है।
मैदाने पानीपत की तरह पायमाल है।

मुंशी सज्जाद हुसैन १८५६ ई० में काकोरी में पैदा हुए और भारत के लाखों महान् सपूतों की तरह एड़ियाँ रगड़-रगड़ कर फ़ालिज के हाथों १९१५ ई० में हमसे बिछुड़ गये।

मुंशी सज्जाद हुसैन उस समय की राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रीय नव-निर्माण की विशाल संस्था काँग्रेस के लिये एक लौह-स्तम्भ थे। हमारे देशवासियों का एक वर्ग ब्रिटिश ताज की चमक-दमक में अपनी सभ्यता के अनमोल मोतियों को खो बैठा था। अवध के दरबार की रोशनी धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। जीवन की सच्चाइयों के सम्मुख जागीरदारी के काग़ज़ी क़िले की चिन्दी उड़ रही थी। और, अफ़्यून के नशे में डूबे हुए मुफ़लिस नवाब अपने झूठे दबदबे की उस गिरती हुई दीवार को सम्भालने की बेसूद कोशिश कर रहे थे जो बालू की तरह धीरे-धीरे ढहती जा रही थी।

'तरहदार लौंडी' में इसी विघटन-शील अवध की सभ्यता का रंगीन चित्रण है। इसमें लखनऊ की बेगमाती ज़बान का चटख़ारा है और इस गिरती हुई दीवार के धमाके की आवाज़ भी; लखनऊ के पतनशील समाज की आख़िरी हिचकियाँ हैं और एक सुनहरे भविष्य के आगमन की मधुर रंगीनी भी।

प्रेमचन्द की भाषा के लिये मौलाना सुलेमान नदवी ने कहा था, 'इनकी भाषा हिन्दी और उर्दू का संगम है!' इसी कसौटी पर मुंशी सज्जाद हुसैन की भाषा को भी कसिये। श्री शमीम हनफ़ी ने प्रस्तुत

रूपान्तर में इस बात का अत्यन्त सफल प्रयत्न किया है कि वही भाषा अपने असली रूप में आपके सामने आये जो सज्जाद हुसैन की क़लम से निकली थी, जिसमें रंगीनी, उपमा, उत्प्रेक्षा और हमारी बोल-चाल की ज़िन्दादिली और मज़ा था। कहीं-कहीं आवश्यकतानुसार भाषा में थोड़ा सा परिवर्तन अवश्य कर दिया गया है किन्तु वहाँ भी मुंशी सज्जाद हुसैन की शैली को उसके मूल रूप में ही सुरक्षित रखने की कोशिश की गयी है। मुंशी सज्जाद हुसैन की भाषा में आपको आम बोल-चाल का मज़ा, मुहावरों की सुगंध, अवध की मिट्टी की सोंधी-सोंधी मंहक, गोमती की लहरों की तरल कल-कल स्वर लहरी और लखनऊ के उच्च वर्ग और निचले वर्ग, दोनों के जीवन का धुँधला प्रकाश, सभी कुछ मिलेगा। 'जी हुज़ूरी' का दरबारी अन्दाज़, महलों में बिखरी हुई ज़िन्दगी, बिगड़ते हुए नवाबों का जीवन—मुंशी सज्जाद हुसैन के क़लम ने इस रंगारंगी का वास्तविक चित्रण—'तरहदार लौंडी' के कैनवेस पर बिखेरा है! 'तरहदार लौंडी', 'हाजी बग़लोल', 'मीठी छुरी', 'अहमकुल्लज़ी', 'काया पलट' तथा 'प्यारी दुनिया' आदि रचनाओं के कारण मुंशी सज्जाद हुसैन साहित्य संसार में जाज्वल्यमान् नक्षत्र की भांति सदा जगमगाते रहेंगे।

प्रस्तुत उपन्यास की रंगीनियों में खोने से पहले इस रूखे-सूखे सम्पादकीय की मंज़िलें आपको उकता देंगी इसलिये मैं अब आपके रास्ते से हटा जाता हूँ।

—श्रीकृष्ण दास

तरहदार लौंडी

१

दिन का तीसरा पहर था। साहब-ख़ाना घर से बाहर निकले। शेख़, मिर्ज़ा और लाला ने सादर प्रणाम किया।

साहबख़ाना मिर्ज़ा से बोले—"आहा, मिर्ज़ा, वल्लाह! आज दिन भर कहाँ रहे? शहर की क्या ख़बरें हैं? जब तक तुम्हारे मुँह से नहीं सुन लेते लाख कोई छानी बीनी सुनाये यक़ीन नहीं आता। बात यह है भई कि तुम ठहरे एक घुमक्कड़। कोई मुहल्ला गली ऐसी नहीं जहाँ तुम्हारे क़दम न जाते हों।"

"हाँ हुज़ूर!" मिर्ज़ा ने जवाब दिया, "मर्ज़ ही ऐसा पड़ गया है। बे दो चार जगह गए तबीयत नहीं मानती। जब तक थोड़ा बहुत चल न लूँ खाना नहीं हज़म होता। ऐ हुज़ूर! मैं बड़ा हैरान हूँ! जो लोग ध्रुव के जोड़ीदार, चटाईदास बने बैठे रहते हैं उनका जी क्यूँकर बहलता होगा! यहाँ तो जब से होश सम्भाला है, ख़ुदा झूठ न बुलवाये, कोई दिन ऐसा ही कमबख़्त गुज़रता होगा जब घर में दिन भर क़ैद रहते हों—हाँ बीमारी काहिली का ज़िक्र नहीं।"

"यह न कहो!" शेख़ बोले, "सैकड़ों बन्दए ख़ुदा हैं जो महीने बीसवें कहीं चले गए, न कहीं आना न कहीं जाना।"

"घर हवालात, मकान जेलख़ाना!" मिर्ज़ा ने कहा।

"नहीं नहीं!" लाला जल्दी से बोले—"यह तो अपने मुहावरे की बात है। इसमें बहस की क्या ज़रूरत?"

"अजी होगा भी! हाँ मिर्ज़ा, कुछ इधर उधर की गपशप सुनाओ!" साहबख़ाना ऊब कर बोले।

"हुज़ूर ! क्या अर्ज़ करूँ ? शहर में कुछ जान हो तो ख़बरें पैदा हों। ख़िलक़त तो पेट को मर रही है। एक आलम में सन्नाटा फैला है। यही शहर था—दिन रात क़हक़हे, चहचहे उड़ते थे। अब जिधर निकल जाइये भगदड़ के ज़माने की कैफ़ियत, सैकड़ों दुकानें बन्द ! अरे ! और तो और—अफ़्यून, मदक, चन्डू की, जिनमें अभी कल तक लोग 'बुलबुले हज़ार दास्तान' की तरह चहक रहे थे, आज ख़ाली है, पिंजरे वीरान हैं। इस महंगी ने मार डाला, अब सकत बाक़ी नहीं। ग़जब ख़ुदा का, रुपये का छे सात सेर आटा पक गया। हुज़ूर ! ग़ुलाम के तो होश में कोई महँगी ऐसी नहीं पड़ी। ख़िलक़त एक-एक दाने को तरस गई। अच्छे-अच्छे बिगड़ गये। बाप को अगर चार दाने मिल गये तो वह बच्चों को नहीं पूछता। जोरू को अगर एक टुकड़ा रोटी मिली तो वह मियाँ को नहीं पूछती। ज़माना है कि पुरआशोब हो रहा है। सैकड़ों लाखों फ़क़ीर निकल पड़े ! करें क्या ? पेट बुरी बला है। जो न कराए सो थोड़ा है। औलाद से बढ़ कर तो कोई प्यारा नहीं ? उस तक को तो बेच डाला ! ऐ हुज़ूर ! सैकड़ों लड़के लड़कियाँ बिक गईं; बल्कि कुछ माँ बाप ने तो हँसी ख़ुशी यूँ ही हवाले कर दिये—चलो बला से ! इनकी परवरिश से जान छूटी ! अपना पेट किसी न किसी तरह पाल लेंगे। जहाँ कहीं ये रहेंगे ख़ुदा पेट भर रोटी तो देगा ! जहाँ रहें ख़ुश रहें, ज़िन्दा रहें, जी बचे !"

"आप लड़के लिये फिरते हैं।" लाला जी बोले, "अरे, जानवर तक तो लोगों ने मुफ़्त लुटा डाले !"

"जी हाँ !" मिर्ज़ा ने जवाब दिया, "सैकड़ों लड़की लड़के सरकारी ख़ैरातख़ाने में मौजूद हैं। सरकार आख़िर कहाँ तक खिलाये ? आम हुक्म है जिसका जी चाहे ख़ैरातख़ाने से ले जाए, परवरिश करे।"

साहबख़ाना आँखें फाड़ कर बोले, "तुमने तो मिर्ज़ा वह कैफ़ियत बयान की जिसके सुनने से वल्लाह रोंगटे खड़े हो गए, आए हवास गए ! और, इस अंग्रेज़ी राज में इन्सान की ख़रीद फ़रोख़्त जायज़ नहीं,

बल्कि बहुत बड़ा जुर्म है। और, यूँ भी भई! लौंडी ग़ुलाम रखना जान का अज़ाब ख़रीद करना है—मगर वह हज़त कुछ अरब ही वाले ख़ूब लौंडी ग़ुलाम रखते थे! अपने बराबर पहनाएँ बिठाएँ—भला यहाँ कहाँ? यहाँ काम लेने को आँधी हैं, बाक़ी रूखी सूखी जो मिली वह हवाले की। मोटा, महीन, फटा पुराना कपड़ा दे दिया, लीजिये साहब, अल्लाह अल्लाह ख़ैर सल्लाह! और अगर हज़त उन्होंने कहीं भलमन्सई में आके सताना शुरू कर दिया तो फिर नाकों चने चबवा दिये। अच्छी कसर ली, उल्टी ग़ुलामी करा छोड़ी—और अगर बहुत सख़्ती की, निकल जाने को धमकाया। इधर यह ख़्याल कि इतने दिन आपने खिलाया पहिनाया है, रुपया सर्फ़ किया है, उधर वे लोग हवा से बातें कर रहे हैं। ना भई ना, इस अज़ाब से अलग-थलग रहना अच्छा!"

मिर्ज़ा ने जल्दी से अपनी दलील पेश की, "जी नहीं! हुज़ूर सब बराबर हों तो दुनिया में कोई लौंडी ग़ुलाम क्यों रक्खे? और बड़ी बात तो ग़रीब ग़ुरबा की परवरिश है। अगर आजकल लोग इस क़दर लड़के लड़कियाँ न लेते तो इतनी ख़िलक़त की परवरिश क्योंकर होती? सब चार ही दिन में ख़ुदागंज को पहुँच गये होते।"

साहबख़ाना ने भी मिर्ज़ा की बात मान ही ली। कहने लगे, "हाँ! वह और बात है, ख़िलक़त की परवरिश तक कोई बात नहीं, और इसी मारे तो सरकार भी इनको परवरिश देती है।"

२

"ए जी!" बीवी ने मियाँ से कहा, "हमने सुना है, शहर में ग़रीब ग़ुरबा अपने बच्चों को बेचते हैं। फिर तुम क्यूँ नहीं ले आते?"

मियाँ मुस्करा दिये, "क्या कीजियेगा ?"

"पालेंगे और क्या करेंगे !"

"क्यों ? क्या पालने को अपने बच्चे ख़ुदा ने नहीं दिये ?"

"तुम ऐसी ही बात कह उठते हो !" बीवी ने मुँह बनाया, "हाँ तो बोलो ! लाओगे ?"

"इस बोझ के लादने वाले और ही होंगे। बन्दा इस ग़म का तोता नहीं पालता ?"

बीवी ख़फ़ा हो गई, "अच्छा जाओ ! हम अपनी बी हम्साई से कह के मँगवा लेंगे। मुई गली-गली तो लौंडियाँ बिकती हैं। आजकल महँगे वक़्त में तो लड़के आँधी के आम हो रहे हैं। हाँ बात इतनी थी कि ख़ुदा ने तुमको मर्द की सूरत बनाया है। जो कोई बात होती है पहले तुम ही से कही जाती है। दूसरे तुम ज़रा कचहरी दरबार जाते हो। सब तरह के लोगों से मरासिम हैं। बल्कि तुम्हारी ही ज़बानी मालूम हुआ कि मजिस्ट्रेट साहब के सरिश्तादार से आजकल पेंग बहुत बढ़ रहे हैं। ज़री कह सुन कर ख़ैरात ख़ाने से अच्छे-अच्छे छाँट कर ले आते। वहाँ सुनते हैं बहुत से लड़के जमा हैं और साहब का हुक्म भी है कि जो परवरिश करना चाहे ले जाये। तो वहाँ से जाकर कोई छाँट कर ले आते ! ज़री रंगत साफ़-साफ़, नक़्शा सुडौल, नकसिक से दुरुस्त हो तो अच्छा था—और नहीं तो हम अपने ले ही लेंगे।"

"सुबहान अल्लाह !" मियाँ ने व्यंग्य किया, "क्या अमले के लोगों से इसी दिन के वास्ते मुलाक़ात हुई थी ! और भई ! साफ़ तो यह है कि अपनी सी जान मैं सब की जानता हूँ ! मुझे यह आपके यहाँ की ग़ुलामी पसन्द नहीं। अपने नौकर चाकर; चार पैसे दिये, काम लिया, झगड़े क़ाज़ियों सब से अलग !"

"जी हाँ !" बीवी और ऐंठ गई, "तुम्हारी सी सब की बातें हों तो दुनिया में कोई लौंडी क्यों पाले ? ग़रीब ग़ुरबा की क्यों परवरिश हो ! और साहब ! इसमें क़बाहत ही क्या ? माँ बाप अपनी रज़ामन्दी से

अपनी औलाद देते हैं। सरकार ख़ुशी ख़ातिर से हवाले करती है, लोगों ! फिर इसमें क्या ख़राबी है ? अच्छा साहब ! सौ बात की एक बात मालूम हुई, तुमको नहीं ला देना है। चलो ताँत बजी राग बूझा। हाँ साहब ! तुमको क्या पड़ी ! किसके लिये इतनी तकलीफ़ उठाओगे ?"

"वाह वा ! अब यूँ आई ! अजब हमक़ सवार है। न बात समझती हैं, न मसलहत देखें ! बेमौक़ा इसरार करने लगती हैं !"

"उँह, मुए चूल्हे में गये लड़के, होगा भी ! जाने भी दो ! ग़रज़ होगी ! हम अपने मँगा लेंगे। अब जो तुमसे फ़रमाइश करे गुनहगार—और यह तुम्हारी कुछ नई आदत तो है नहीं ! बुरा वह माने जिसको इसका पता न हो। यहाँ तो क़िस्मत में यही लिखा था।"

इसी चख़चख़ में रात भी ज़्यादा हो गई थी, बात यहीं तक होके रह गई। सुबह को शेख़ ज़माँ मुसाहब अपने मकान से आ रहे थे। यहाँ पहुँच कर उन्होंने देखा मद्दू डेवढ़ी में हुक़्क़ा लिये हुए खड़ा है और बी सेवती हँस-हँस कर कुछ धीरे-धीरे पुकार-पुकार बातें कर रही हैं। इनको देखकर सेवती ने झुक कर जल्दी-जल्दी तीन तस्लीमें कीं।

"अहा ! बी सेवती !" शेख़ जी बोले, "कहो अच्छी तो हो ? नवाब साहब अभी तक बरामद नहीं हुए—अब तक तो कब के तशरीफ़ ले आते थे !"

"जी हाँ आज तो सलामती से अभी तक आराम में हैं। बेगम साहिबा भी अभी उठी हैं, अब हुज़ूर भी उठा चाहते हैं। आईना वाईना लगा आई हूँ—क्या कहें ! कुछ कहने की बात नहीं। यह टाँग खोलो तो लाज, वह टाँग खोलो तो लाज ! जैसी तो हमारी बीवी हैं, अल्लाह रक्खे, अब तक बचपन की आदतें नहीं गईं, वैसे ही मियाँ—ज़री-ज़री सी पर बात उनकी तोड़ते हैं !"

"क्यों ! क्यों ! क्या हुआ ?" शेख़ साहब बेचैन हो गए।

"ऐ कुछ भी नहीं ?" सेवती ज़रा मटक कर बोली, "मैं बात कहती हूँ, भला यह बीवी ऐसी थोड़ी है ! हाँ, आज कोई होशियार

होती तो मियाँ को इस तोरा जताने का मज़ा चखाती। वह बेचारी अल्लाह मियाँ की गाय, निमुही, गिगली, ख़ुदा के फ़ज़्लो-करम से तीन बच्चों की माँ हो चुकी है, अभी तक वही अल्हड़पन है।"

यह कह कर सेवती ने मद्दू के हाथ से हुक़्क़ा लिया और अन्दर जाने के लिये बढ़ी। शेख़ जी ने उसे पुकारा।

"अरी ठहर! ठहर! ज़रा एक बात सुने जा।"

सेवती पलट आई, "शेख़ जी! ख़ुदा की क़सम नाव (नवाब साहब) उठे होंगे, मेरा बुरा ढहाड़ा करेंगे।"

"अच्छा यह तो बता।" शेख़ जी उत्सुकता से बोले, "रात कुछ खटपट हो गई थी?"

"खटपट?" सेवती ने आँखें झपकाईं, "ऐ, अच्छी ख़ासी तू बदू गुफ़्तगू आ गई और सच पूछो तो कोई बात नहीं थी।"

"आख़िर मामला क्या था? कुछ ख़ुलासा तो मालूम हो।"

"ऐ मियाँ, मैं डरती हूँ, कहीं कोई सुनगुन पाये तो मुझ निगोड़ी का सिर मूँडा जाये। दूसरे आदत कम्बख़्त नहीं, ले देखिये! घर में लाख बातें होती हैं। आप मद्दू से क़सम खा के पूछ लीजिये जो आधी बात थुक्के मुँह से निकलती हो।"

"अच्छा, वह बात तो कहो।"

सेवती ज़रा आगे बढ़ कर दाएँ बाएँ देखने लगी।

"कोई सुनता न हो, मेरे शेख़! इसको अपने ही तक रखियेगा। रात को जब मियाँ बाहर से गये तो लौंडी ग़ुलामों की बातें चलीं। बीबी ने कहा—दो तीन लड़कियाँ ला दो! हम परवरिश करेंगे। उस पर मियाँ ने बड़ी-बड़ी बातें कीं, फिर उसी में मुझ जनम जली और मुए रहम क़ुली की बातें भी निकलीं। बीबी सिर पटक मरीं। मुल उफ़ रे जिगरे मियाँ के, ज़रा दिल न पसीजा, एक नहीं जो की तो फिर हाँ निकलना क़सम हो गया, आख़िर बीबी ख़ामोश हो रहीं।"

इतने में अन्दर से आवाज़ आई, "सेवती, सेवती।" सेवती 'हाज़िर', 'हाज़िर' करती डवल चाल पहुँच गई और शेख़ साहब कमरे के अन्दर आकर उसी बात को सोचते रहे।

साहब ख़ाना अभी घर के अन्दर ही थे। इतने में मिर्ज़ा भी इत्तफ़ाक़ से मटरगश्ती करते आज सवेरे ही से दाख़िल हुए! अब क्या! दोनों मुर्शिद इकट्ठा हुए। यक नशुद दो शुद! शेख़ ने जो वी सेवती से सुना था सारा हाल कह दिया और लगे सलाह करने कि किस तरह इसमें कुछ लेन देन की ठहरे।

"हाँ यार मिर्ज़ा!" शेख़ बोले, "इस मामले को यूँ ही रहने दोगे या कुछ यारों के वास्ते भी फ़िक्र करोगे?"

'भई सुनो!" मिर्ज़ा धीरे से बोले, "पहले तो मैं किसी मामले में हाथ नहीं डालता और जो किसी काम में शरीक़ होता हूँ तो फिर चाहे जान जाय, मगर उससे मुँह नहीं मोड़ता। पहले मंसूबा कर लो, इस मामले में एक जान दो जिस्म रहेंगे और किसी को कानों कान ख़बर न होगी। तो ख़ैर क्या हर्ज़! आख़िर बड़ी-बड़ी सरकारों में पहुँच किस दिन के वास्ते पैदा करते हैं!"

"हाँ! वल्लाह! आजकल विल्कुल बेख़र्च ही रहे हैं। तुम्हारी भाभी आज कई दिनों से बच्चों की सरमाई के वास्ते कह रही है, मँहगाई कुछ बचने ही नहीं देती।"

"अजी अभी लो! आने तो दो, देखो तो कैसा फ़लीता दाग़ता हूँ।"

फिर दोनों ने धीरे-धीरे तय किया कि किसी तरकीव से दो चार भुखमरे बच्चे लाकर कुछ वसूल करना चाहिये। थोड़ी देर बाद साहब ख़ाना वाहर आये और शेख़ साहब ने यह मामला छेड़ दिया।

"मुजरा अर्ज़ है!" मिर्ज़ा झुक गए।

"आदाब बजा लाता हूँ, हुज़ूर का मिज़ाजे आली?" शेख़ बोले।

"शुक्र है!" साहब ख़ाना ने कहा।

"क्यों ! दुश्मनों को इस वक़्त कोई परीशानी है ? चेहरे पर सोच के आसार पाए जाते हैं !" शेख़ बोले ।

"नहीं तो, ख़ुदा नख़्वास्ता कोई बात नहीं है ।"

"शायद रात को ठीक से सो नहीं सके !" मिर्ज़ा ने कहा ।

"हाँ किसी क़दर ! मगर इस वक़्त उसका असर नहीं । हाँ रात को बेगम ने बच्चों की परवरिश की बातें छेड़ दी थीं । उसी में ज़रा देर को सोने की नौबत आई ।"

मिर्ज़ा यह सुन कर खिल उठे, "तस्लीम, हुज़ूर ! गुस्ताख़ी माफ़, देखिये नमकख़्वारों का अन्दाज़ा सही निकला ।"

"भला इस क़दर भी मिज़ाज शनास न हों तो इन्सान काहे को हैवान हैं ।" शेख़ ने टीप लगाई ।

"अच्छा अब इस क़िस्से को जहन्नुम में डालो—हाँ मिर्ज़ा कुछ इधर उधर की सुनाओ ।"

"बेगम साहब ने भी दो एक की परवरिश के वास्ते फ़रमाया होगा !" मिर्ज़ा फिर उसी बात पर आ गये ।

"जी हाँ !" शेख़ ने गर्दन हिलाई, "सब ख़ुदा तरसों की यही हालत है । एक हमारे हुज़ूर हैं, इससे कोसों दूर भागते हैं । वरना आज किसी अमीर का मकान ऐसा नहीं जहाँ दस पाँच बच्चे परवरिश न पाते हों ।"

"माफ़ रखिये, बन्दा ऐसी परवरिश से बाज़ आया । जिसको ख़ैरात ख़ुदा की राह पर देना हुआ दिया लिया और कहा, 'साहब चलता धन्धा कीजिए !' और बेगम की समझ का क्या भरोसा ? कोई फ़लसफ़ी है, हकीम है, पार्लमेन्ट की मेम्बर है जो उनकी राय आप पेश करते हैं ! एक बेअक़्ल क़ौम से जिनको सिवा खाने, हाँडी चूल्हे के किसी काम की लियाक़त नहीं, बड़ी बड़ाई रंगों का जोड़ लगाना, पकाना, सीना, पिरोना, चिकन निकालना, अनवत बनाना, सो वह भी वैसी ही हैं ।"

"हुज़ूर !" शेख़ दाँत निकाल कर बोले, "बेअदबाना माफ़, आपके शहर की औरतें ऐसी नहीं, वह कहीं और फूहड़ घराने की होंगी। अपने शहर की बेगमात, नामे ख़ुदा, कमसिनी ही से बड़े पढ़े लिखों के कान काटती हैं; और फिर यह भी जाने दीजिये, अगर कोई बेवक़ूफ़ अच्छी बात कहे तो क्या न मानना चाहिये ?"

"यह तो सरकार की हठधर्मी है !" मिर्ज़ा ने शेख़ की हाँ में हाँ मिलाई, "बात तो उन्होंने ठीक कही होगी, क्योंकि वह हैं निहायत समझदार, गम्भीर और साहब बेटी किसकी हैं ! अच्छा तो मैं कहता हूँ इसमें हर्ज ही क्या है ? अगर दो एक बच्चे परवरिश को मँगा दिये जायँ तो काम काज भी करेंगे, माशाअल्लाह सकीना बेगम हैं, मुन्ने साहब हैं। उनके साथ खेलेंगे, उनकी ख़िदमत करेंगे। उनकी भी परवरिश हो जायगी और आख़िर काम भी करेंगे !"

"हुज़ूर बहुत नहीं।" मिर्ज़ा ने राय दी, "एक तीन लड़के, एक तो लड़की सक्कू के लिये मुन्नी-मुन्नी, दूसरे एक लड़का मुन्ने साहब के वास्ते और एक लड़की ज़रा होशियार बेगम साहब के लिये !"

"ऐ वाह !" साहब ख़ाना ने मुँह बनाया, "तो सारा ख़ैरात ख़ाना बन्दे ही के घर में भरती करा दीजियेगा !"

"हाँ, हाँ, हुज़ूर !" शेख़ बोले, "इसमें हर्ज ही क्या है ! भूखों मरते हैं कमबख़्त परवरिश पाएँगे, बड़े होंगे, होश सम्भालेंगे; तमीज़ के, सूझ बूझ के हो जाएँगे, सब तरह का आराम देंगे। नौकर लाख बरस का हो तब भी अलग है। और यह तो हर हाल में हुज़ूर के क़दमों से लगे रहेंगे। और अच्छे बुरे सब में होते हैं, अगर नौकर पर ख़फ़ा हुए, लो साहब उनको नौकरी नहीं मन्ज़ूर है। चलते फिरते नज़र आये। अपना नौकर मिज़ाज से नावाक़िफ़, जब बरसों सिखाओ तब सूझ बूझ आये, आराम दे सके सो वह भी सौ में एक ! और इनको ख़फ़ा होना क्या ! मार तक लीजिये, मगर यह दर छोड़ कहाँ जाएँगे ?"

"हुज़ूर है इजाज़त ?" मिर्ज़ा जल्दी से बोले, "अगर हुक्म हो अभी ले आऊँ !" फिर चींखने लगे, "भई मद्दू ज़री अन्ना से कहना सक्कू को बुलाते हैं। हम इनको तो ख़ुशख़बरी सुना दें, तुम्हारे लिये लौंडी आती है।"

मद्दू ने आवाज़ दी और अन्ना तीर की तरह सकीना को लिये निकल आई।

"आओ, आओ !" मिर्ज़ा ने गोद फैला दी, "लौंडी लोगी ! देखो आज तुम्हारे लिये अच्छी सी लौंडी लाते हैं ! क्यों ? बोलो ! लौंडी लोगी ?"

सकीना ने गर्दन हिला दी—"हूँ !"

"अच्छा बेगम से तो पूछ लूँ !" साहब ख़ाना धीरे से बोले और उठकर महल के अन्दर चले गए।

३

बेगम चुपचाप बैठी हुई थीं। साहब ख़ाना ने मुस्करा कर उनकी ओर देखा और तेज़ी से बोले, "कल तुम बहुत लौंडी लौंडी करती थीं, कहो ! कै लोगी ? मिर्ज़ा साहब और शेख़ जी की भी यही सलाह है !"

"नहीं कोई ज़रूरत नहीं।" बेगम जले कटे लहज़े में बोलीं, "एक बात थी हो गई। उसका ज़िक्र ही क्या ? जाने दो ! वल्लाह मुझे ज़रा भी ख़्याल नहीं मैं तो अपने बल भर यही चाहती हूँ कि तुम्हारे ख़िलाफ़ कोई काम करूँ। यह सब तो तुम्हारी मर्ज़ी पर है।"

"अच्छा तो मैं बख़ुशी इस बात को कहता हूँ। मेरी ख़ुशी इसी में है।"

"फिर मैं क्या बताऊँ, जितनी मुनासिब जानो मँगा लो !"

बी मुग़लानी चुपचाप सुनते-सुनते एकबारगी बोल पड़ीं, "दो चार बच्चे आएँ, उनमें से जो पसन्द हो रख लिया जाय ।"

"क्या ख़ूब ! यह भी कोई बाज़ार का सौदा है ?" साहब ख़ाना मुस्करा दिये ।

बेगम बिगड़ने लगीं, "देखो मुग़लानी ! मैंने सौ दफ़ा मना कर दिया, भई, तुम हमारे बीच में न बोला करो !"

"फिर कुछ कहोगी भी ?" साहब ख़ाना उकता कर बोले !

"ऐ, मैं क्या कहूँ, यही एक लड़का एक लड़की बस !"

मुग़लानी चुप न रह सकी, "ऐ मियाँ मैं सदक़े गई, एक लड़की मुझ निगोड़ी के लिये भी ।"

"क्या ख़ूब !" साहब ख़ाना स्करा दिये ।

"साहबो ! यह कौन आदत तुम लोगों की है ? मुझे ऐसी बातें नहीं भाती हैं !" बेगम फिर बिगड़ने लगीं ।

साहब ख़ाना उठ कर बाहर चले आए ।

"भई मिर्ज़ा !" साहब ख़ाना बोले, "वह तो सिर्फ़ दो को कहती हैं । देखो मौक़े से कोई सूरत शक्ल की अच्छी लड़की और होशियार लड़का मिले तो ले आओ । मगर भई देखो ! दूध पीते बच्चे न उठा लाना । कम्बख़्त हवस के मारे बहुत खा जाते हैं, फिर दवा करते-करते नाक में दम हो जाता है ।"

"ऐ नहीं हुज़ूर ! आपके फ़रमाने की बात ! क्या ग़ुलाम ऐसा नादान है ? हम लायेंगे तो अच्छी तरह देखभाल कर न लायेंगे ?"

"हुज़ूर एक से भूल-चूक हो गई, दूसरा मौजूद है ।" शेख़ जी जल्दी से बोले ।

"हाँ भई ! इसका ख़याल ज़रूर रखना ! कोई झगड़े का लड़का न

हो ! मैं इन बातों से कोसों भागता हूँ । आजकल जानते हो कैसा बेढब ज़माना है ! भले आदमी की इज़्ज़त बचे, ग़नीमत समझो ।"

"शेख़ साहब ! फिर अब चलिये, देर होती है ।" मिर्ज़ा बोले, "सरकार भी ख़ासा तनाविल फ़रमा कर आराम फ़रमायेंगे । मुझे याद पड़ता है, कल एक शख़्स अपना लड़का मुझे देने आया था । मैंने कहा, अच्छा ! तू ठहर जा ! मैं अपनी सरकार से पूछ लूँ, वह अभी होगा ! और, अगर न भी होगा तो अभी हुक्म के साथ बीसियों लड़के हाज़िर होते हैं ।"

"चलो, चलो, भई ।" शेख़ बोले ।

"तो हुज़ूर रुख़सत होता हूँ ।" मिर्ज़ा ने झुक कर कहा ।

"मैं भी आदाब अर्ज़ करता हूँ !" शेख़ बोले ।

"बिस्मिल्लाह ! मगर भई, ज़रा देख भाल के, हाँ कहीं ऐसा न हो कि पीछे को कोई झगड़ा ख़ुदा-न-ख़्वास्ता उठ खड़ा हो ।"

"ऐ हुज़ूर ! इसका इत्मीनान रखें !" शेख़ बोले और दोनों बाहर निकल गये ।

रास्ते में मिर्ज़ा ने शेख़ को कोहनी का ठोंका दिया—'क्यों एहसान तो न मानोगे ? आज कैसे काफ़िर को चित्त किया है ! अरे—वे पढ़े जिन पर अमल चल गया, वह तो कहिये इस वक़्त हज़रत का शैतान ख़ुदा जाने कहाँ हवा खाने गया था, वरना बड़ा झंझट पड़ता । अच्छा, अब सीधे हमारे मुहल्ले चलो । इस काम को तय करके ही छोड़ो ।"

"चलो हमको क्या ! खाना पीना तो है नहीं ! रमज़ान के तो दिन हैं ।"

दोनों आगे बढ़ गए—

वह लड़की जो आगे चलकर क़िस्से की जान होगी—बाहर की रहने वाली, तबियतदार, चेहरे मोहरे से दुरुस्त, कहीं किसी गँवार के साथ शहर भाग आई थी । कुछ दिन के बाद वह भगाने वाले साहब

उसको छोड़ कर कहीं और चल दिये। अब यह इधर उधर परीशान होकर तेरे मेरे टुकड़ों पर बसर करने लगी। मिर्ज़ा तो एक ही लफ़ंगा, आठों गाँठ कमैत था। कहीं उसने अपने पड़ोस में पड़े रहते देख भाल लिया होगा; ग़रज़ कि वहीं पहुँचे। उसे कह सुनकर राज़ी किया और अपने मकान पर ले आये। अब रहा लड़का! सो, शेख़ साहब के यहाँ एक लौंडी थी। उसका लौंडा ख़ुदाबख़्श कोई बरस आठ एक का होगा। वह तो मानो घर की पैदावार, ख़ाना साज़, उस पर सब क़िस्म का अख़्तियार; दोनों को अच्छी तरह पढ़ा लिखा यह जोड़ा लिये कोई चार दिन घड़ी रहे डेवढ़ी पर आन पहुँचे।

वहाँ पहुँचते ही सेवती को पुकारा—कड़क कर बोले, "यह लड़के परवरिश को हाज़िर हैं!"

आवाज़ का बेगम के कान में पहुँचना था कि चौंक ही तो उठीं। जब तक सेवती जाय जाय कई बार बोलीं, "अरी देख नामुराद, नानसीब, कौन पुकारता है!"

चारों तरफ़ से सब टूट पड़े। बेगम मुस्करा कर बोलीं, "ऐ है! लड़की तो मुई निक-सुक से ठीक है। माशाअल्लाह सयानी भी है, होशियार भी है!"

"इस मुई का नाम क्या है?" मुग़लानी ने पूछा।

"होगा कुछ नाम, अब जो यहाँ रक्खा जाय, सनद है!" सेवती बोली।

"भई ज़रा हटो हम भी तो देखें!" साहब ख़ाना भी आ गये, "मिर्ज़ा और शेख़ कैसी लौंडी लाये!"

लौंडी ने जल्दी से सलाम किया।

"अजी यह तो ख़ासी जवान छोकरी है!"

साहब ख़ाना उसे ग़ौर से देखते हुए बोले।

"हाँ और क्या!" बेगम बोलीं, "चलो पालने पोसने की मेहनत

बची। सूरत में भोली-भाली है। ऐ है ! किसी भले आदमी की मालूम होती है !"

"क्यों लड़की तेरा नाम क्या है ?" मुग़लानी ने पूछा।

लड़की ने अपना सिर झुका लिया, "जी ! मुझे तो अपने घर में मिठनिया कहते थे, मुल अब सब नजिबनिया नजिबनिया कहते हैं।"

"लो फिर क्या ?" मुग़लानी मटक सी गई, "किसी का एक नाम होता है, तुम्हारे दो नाम हैं—अरे—बेगम साहब ! बेगम साहब लीजिये जैसी छोकरी होशियार मिली नाम भी अपना रखा लाई है !"

"क्या ?" बेगम ने पूछा।

"एक नाम मिठनिया दूसरा नजिबनिया !"

"चलो अच्छा तो है। नजिबनिया के नाम से पुकारो, ज़रा इससे और हाल तो पूछो ! किसकी है ? कहाँ की रहने वाली है ? क़ौम कौन है ?"

लौंडी धीरे से बोली, "जब हम छोटे से थे तो एक मेहरिया हमको हमारे घर से बुला लाई थी और हमको यहाँ एक जने के पास छोड़ गई। फिर वह कहीं चली गई। हम दिन भर भीख माँगते थे। एक दिन मिर्ज़ा साहब के मुहल्ले में आए। हुवाँ एक हैं, वह तारकसी का काम करते है। अपने घर ले गये। हम उनके घर का काम काज कर दिया करते थे। हमको रोटी दिया करते थे। फिर महँगी जब से पड़ी, उनके हियाँ भी दो-दो दिन रोटी न पकती थी। फिर हमको जवाब दिया। उनकी बीवी ने कहा, "भई अब हमसे नहीं हो सकता, हम आप मुहताज हो गये हैं।" तब से हम भीख दिन भर माँग लाते थे और उन्हीं के हियाँ रात को पड़ रहते थे। हुईं से मिर्ज़ा साहब हमको ले आए। कहा, चलो एक नवाब साहब हैं, तुमको नौकर रखा दें।"

मुग़लानी सिर हिला-हिलाकर सुन रही थीं। उधर बेगम साहब ख़ुदा बख़्श से पूछने लगीं—

"ऐ लड़के ! तेरा क्या नाम है ?"

"ख़ुदा वक्स !"

"तेरे बाप का क्या नाम है ?"

"अब्बा !"

"और माँ का ?"

"अम्माँ !"

"और कोई भाई नहीं ?"

"ऊँ हूँ !"

"फिर तेरे माँ बाप कहाँ हैं ?"

"घर में !"

"घर कहाँ है ?"

"हुवाँ है !" लड़के ने एक तरफ़ हाथ उठाया ।

बेगम हँस दी, "अरे इस लड़के की बातें कैसी प्यारी-प्यारी हैं !"

बेगम के हँसने पर लड़का ज़री हवास में आया । अब किसी क़दर निडर हुआ ।

"अच्छा तेरी उम्र क्या होगी ?" बेगम ने पूछा ।

"हमारी अम्मा को मालूम है ।"

"अरे तुझको भी कुछ मालूम है ?"

"आए कोई एक बरछ की !"

बेगम खिलखिला कर हँस पड़ीं, "चल झूठे ! तुझे कुछ मालूम वालूम नहीं !"

"अजी अब जो पूछना पाछना है, फिर पूछ लेना ! इनको लगे हाथों खाना तो खिलाओ । बेचारे भूखे होंगे !" मियाँ बोले ।

"देख तो सेवती !" बेगम ने आवाज़ दी, "कुछ खाना इन दोनों को ला दे । फिर जब रात को तैयार होगा पेट भर कर खिला देना ।"

"मुन्ने साहब कहाँ हैं ? ऐ लो ! जिनके वास्ते आए उनको कुछ ख़बर ही नहीं ?" मियाँ ने पूछा ।

"जी हुज़ूर !" मुग़लानी ने गर्दन हिलाई, "वासू के साथ कनकउवे उड़ा रहे होंगे !"

इतने में मुन्ने साहब भी माँझा लिये आ ही गए ।

"लो मुन्ने साहब ! तुम्हारी ख़िदमत के लिये एक लड़का आया है !" बेगम मुस्कराई ।

"ये जो बैठा है ?" मुन्ने साहब इशारा करके बोले, "ओ हो हो हो ! इसको कपड़े तो अच्छे बना दो ।"

"लो, कल लो, आज जिस तरह बने कट जाने दो । कोई तुम्हारा फटा पुराना अँगरखा घुटना हो तो तुम ही दे देना ।"

मुन्ने साहब चिल्लाए, "अरे वासू ! वासू ! हुचका कर लो, अब न लड़ायेंगे । अब कल, और नीचे तो आ ! देख अब्बा ने हमारे लिये गुलाम मँगाया है ।"

"ले बेटी !" मुग़लानी बोली, "इस वक़्त तो तुम इतनी रोटी खा के पानी पियो । खाना पक ले, फिर मिलेगा, लड़के ! तू भैया इधर आ !"

"देखना ! अभी सिर्फ़ हड्डी चमड़ा है, चार दिन पेट भरकर खाएँगे, यही आदमी की सूरत निकल आएँगे ।" बेगम ने कहा ।

"बीवी ! बड़े शुक्र की बात है ! बीवी हैं हमारी बड़ी भागवान, जो चीज़ मिलती है साजिल मिलती है !"

"जी हाँ, सिवा एक मुग़लानी के ।" बेगम हँस दीं ।

"अरे बीवी मेरी भली चलाई ! मैं तो सारे ज़माने से बदतर निखत्तर हूँ । यही मेहरबानी है जो इस बन्दी को समेटे हो । पर इतना बंदी को दम दाइया है कि दूसरी कोई अब्बासी ख़ानम के बराबर निकल आए तो जनम भर की लौंडी हो जाऊँ । बीवी मुझसे अच्छी मिलेगी, ख़ुदा हुज़ूर का रुपया सलामत रखे । मगर मुझसे बुरी कोई न मिलेगी !"

इतने में डेवढ़ी से किसी के पुकारने की आवाज़ आई। सेवती बाहर से लौट कर आई—"हुज़ूर! मिर्ज़ा साहब हाज़िर हैं और कहते हैं कुछ सरकार से अर्ज़ करना है!"

मियाँ उठकर बाहर चले गए।

"हुज़ूर आदाब अर्ज़ करता हूँ।" मिर्ज़ा बोले।

"तसलीम बजा लाता हूँ।" शेख़ ने कहा—

"आहहा! आप लोग मौजूद हैं? मुझसे असलन किसी ने ख़बर नहीं की, मैं समझा चले गए होंगे!"

"जी नहीं हुज़ूर! भला नमकख़्वार दरे दौलत पर हाज़िर हों और बिला क़दमबोसी चले जायँ!" मिर्ज़ा जल्दी से बोले।

"लड़के तो आप अच्छे लाए। लौंडी भी अच्छी है। लड़का भी ख़ूब है।"

"लड़की तो माशाअल्लाह होशियार है! ऐसी भला कहीं मिलती हैं!" शेख़ ने टीप लगाई।

"यह कौन हैं? कोई वाली वारिस इनके?" साहब ख़ाना ने पूछा।

"जी दोनों के!" मिर्ज़ा बोले, "लड़के के माँ बाप दोनों ज़िन्दा हैं। मगर चूँकि लड़की समझदार होशियार है, इसलिये कहती है कि मैं इनके घर में रहा करती हूँ। बात यह है वह बेचारे किसी ज़माने में थे आबरूदार! अब कुछ साल से ज़माना नामुवाफ़िक़ है। तंगी से पहले भी बसर होती थी, इस महँगी ने रही सही वह भी आबरु खो दी। आख़िर मरता क्या न करता, लड़की को भीख माँगने को छोड़ दिया? मैं उनके पास गया और सब हाल बयान किया। वह तो दून की हाँकते थे, मगर ख़ैर, दस पर राज़ी हो गए। मेरी कमर में शेख़ इनायत अली के पन्द्रह रुपये बंधे थे। चटपट कार्रवाई मुनासिब समझा। दस उनको दिये, दो रुपये थाने पर लिखवाई में सर्फ़ हुए और लड़के की माँ तो

शेख़ साहब के यहाँ से रोटी पाती है, सौदा-सुल्फ़ ला देती है, वह पाँच पर राज़ी है। कोई सात उसमें भी ख़र्च होंगे। दो रुपये उसकी भी लिख-वाई में जायेंगे। रुपया आठ आना थाने पर जमादार को हुक़्क़ा पान के नाम से देंगे। चलिए, बीस रुपये में अच्छे ख़ासे दो लड़के मिलते हैं...........!"

"तो क्या इस वक़्त लोगे?"

"जी हाँ, अगर मिल जाते तो सब कार्रवाई कर दी जाती, लड़के ही का झगड़ा बाक़ी रहे!"

साहब ख़ाना अन्दर से बीस रुपये लेकर आये।

"लो भई मिर्ज़ा गिन लो।"

"जी गिने हुए हैं, तो आदाब अर्ज़ करता हूँ!"

"ग़ुलाम भी अब मुरख़्ख़स होता है।" शेख़ साहब बोले।

"ख़ुदा हाफ़िज़!" साहब ख़ाना ने जवाब दिया।

रात के नौ बजे मियाँ बीवी खाना खा रहे थे।

"क्यों बी मुग़लानी साहब?" मियाँ बोले, "मैंने कहा इन बच्चों को भी खाना वाना खिला दिया या वही शाम की सूखी रोटियों पर टाला?"

"ऐ हुज़ूर दिया न जायगा तो क्या यूँ ही? मुल हाँ! बात यह है कि हम बिला इज़्ज़त के ख़ासा नोश किये मजाल है दे सकते हैं? और दूसरी बात यह भी तो है—जिस तरह वह ख़ास बन्दे हैं उसी तरह सर-कारी उल्श भी उनको मिलना चाहिये। तब जाके खिलाई पिलाई सुवा-रथ होगी, नामुरादों पर बोटी चढ़ेगी।"

"बस बी मुग़लानी!" बीवी ने हस्तक्षेप किया, "बात बढ़ाना तो कोई तुमसे सीख ले और मुझे यह आदत तुम्हारी ज़हर मालूम होती है!"

"हुज़ूर! बे अदबाना माफ़, जब तक ज़बान है मैं क्यों न अपनी सरकार से बात करूँ?"

"ख़ैर अब तो यह बातें जाने दो !" मियाँ ने मुँह बनाया, "लो अब आदमीयत से सुनो, और बेगम तुम भी ज़रा ख़्याल रखना। अगरचे हम जानते हैं कि जो बातें हम इस वक़्त समझायेंगे वह थोड़ी बहुत ख़ुद तुमको मालूम हैं और तुम लोग ख़ुद उसका ख़्याल रखोगी मगर फिर भी इन्सानियत आदमीयत से औ धरम-करम से अपनी तरफ़ से कह देना ज़रूरी है क्योंकि एक तो तुम लोग कम अक़्ल दूसरे यह भी न सही !"

"सही क्यों नहीं ?" बीवी तेज़ी से बोलीं, "किताबी बात में क्या शक ?"

"दूसरे आख़िर इन्सान हो, मुमकिन है, किसी वक़्त ग़म में, ग़ुस्से में कोई बात ख़ुदा रसूल के हुक्म के ख़िलाफ़ शायद हो जाय तो इन बातों का कान में पड़ा रहना अच्छा है !"

"यह तो तुम जानती हो !" मियाँ धीरे-धीरे बोले, "आज जो यह दो बच्चे फ़ाक़े के मारे, नंगे, भूखे, अकेली हड्डी, चमड़ा आये हैं इनको भी ख़ुदा ने उसी तरकीब, उसी विधि, उसी अन्दाज़ से पैदा किया है जिस तरह हम सब लोग हैं। जो ख़ुदा ने नाक आँख हमको दिया है वही इनको, जिस तरह हम पैदा हुए उसी तरह यह, जो जान हमारी है वही इनकी। अगर सचमुच देखा जाय तो हमारे इनके में कोई फ़र्क़ नहीं है !"

"ऐसे ऐसे दस हज़ार मियाँ पर से मंगल, इतवार सदक़े करूँ।" मुग़लानी आँख नचा कर बोली।

"हाँ तो जिस ख़ुदा के हम बन्दे हैं उसी के यह और यह बेचारे ग़रीब के घर हुए जो इस गरानी और क़हत में मर मिटे, लावारिस हो गए............ कहीं खाने पानी का ठिकाना न रहा, फ़ाक़ों से मरने लगे, मुसीबत और ग़रीबी घसीटते-घसीटते हमारे यहाँ इस मुसीबत से लायी। अब इनकी परवरिश का अख़्तियार हमको है। अब हर क़िस्म

के आराम और तकलीफ़ का सवाब अज़ाब हमारी गर्दन पर आया ।"

"ले अब तो यहाँ नसीहत नामा छिड़ गया, खाना ज़्यादा हो, हाथ धोइये !" बीवी तिनक कर बोलीं ।

"अच्छा ! मैं खा चुका, ज़्यादा हो ना ! हाँ तो सुनिए, अब हमको लाज़िम है कि अपने आराम, आसाइश, खाने, पीने से पहले इन सब बातों का लिहाज़ रखें । अगर किसी तरह भूल करेंगे तो अल्लाह रसूल की मर्ज़ी से मुजरिम होंगे । ग़ौर करने की बात है कि जब हममें और इनमें जाति और जन्म के तौर पर किसी क़िस्म का कोई फ़र्क़ नहीं है, न हमको इस बात का कोई अख़्तियार है कि हम इन लोगों पर जो किसी न किसी रूप से कमज़ोर हैं, लाचार हैं, मुहताज हैं, ऐसी हुकूमत करें जो इनकी असली आज़ादी पर असर करे । मर्दानगी और असली नेकी के मानी यह हैं कि जो हमसे कमज़ोर हैं उनका हम हाथ थामें, उनको मदद दें, न कि ज़बर्दस्ती उनसे अपनी ख़िदमत लें । अगरचे नौकरी में भी लोगों को भेदभाव है मगर मजबूरन ! वहाँ तक कोई हर्ज नहीं, अपने काम, अपनी ख़िदमत को जिन लोगों को मुक़र्रर करें, उसकी उजरत दोनों की मर्ज़ी से तय करें, उसमें इस क़दर तो आज़ादी है जब नौकर को मन्ज़ूर होगा नौकरी छोड़ देगा !"

"या अल्लाह !" बीवी उकता कर बोलीं, "आज हदीस का सारा पाठ यहीं ख़त्म होगा, लो गिलौरी लो, हुक़्क़ा सत्यानाश हो रहा है !"

"ज़रा आप भी दम खाइये ।"

"जी ! इन बातों का यहाँ कोई ज़ामिन नहीं है !"

"हाँ हुज़ूर !" मुग़लानी बोल पड़ी ।"

"बरख़िलाफ़ लौंडी ग़ुलाम के ।" मियाँ फिर शुरू हो गये, "अगरचे उनके साथ इन्तहाई बदसुलूकी, ज़ुल्म हम करें वे बेचारे सब सहते हैं, बशर्ते कि कोई नेक निकला, और अगर ख़ुदा ने किसी शरीर बदज़ात से मामला डाला तो वह भी फिर छट्ठी का दूध याद करा देता है । वह

जानता है मरेंगे और भरेंगे। लाओ जहाँ तक हो सके ख़ूब सता-सता कर बुख़ार निकालो।"

"हाँ हुज़ूर !" मुग़लानी बोल पड़ी, "यह तो सच है, लौंडी ग़ुलाम रखने को पत्थर का कलेजा चाहिये !"

"नहीं, नहीं, यह हक़ीक़त में ऐसे लोगों की सज़ा है, आख़िर कुछ तो अपना किया आगे आये। हम रोज़ सुनते हैं, आज फ़लाने की लौंडी चोरों से गठ गई और सारा घर मूस लिया गया। आज उस ग़ुलाम ने मालिक को छुरी मारी। कल उसने संखिया दी। फिर यह क्यों है ? यह सब कांटे उन मालिकों के बोए हुए हैं, जैसा करते हैं वैसा पाते हैं और जो कहीं मालिक ज़ालिम, ख़ूंख़्वार, चंगेज़ ख़ाँ का रिश्तेदार मिल गया तो फिर रोज़ ही शबबरात हाँथ बांधे मौजूद ! आए दिन ज़रा सी बात पर जूती, लात, घूँसा हाज़िर और गदहा, सुवर, पाजी वग़ैरह तो तकिया क़लाम है। आज क्या है ? साहब लड्डुओं का चूरा खा लिया था इसलिये उलटे टंगे हैं ! कल क्या है, सरकारी तेल सर में डाल लिया था, चाबुकें पड़ रही हैं। खाने पीने की यह तकलीफ़ कि आप तो क़लिया, क़ोरमा, पुलाव, ज़हरमार करते हैं, उनको वही रूखी सूखी ! कपड़ा हम तो चिकन, जामदानी, तनज़ेब, ग्रन्ट, कशमीर, सर्ज़ डाटे फिरते हैं; उनको वही गज़ी गाढ़ा नसीब ! इन्हीं बातों पर लिहाज़ करके हमारी अंग्रेज़ी सरकार ने ग़ुलामी को बिल्कुल मिटा दिया और इन्सान का व्यापार एकदम ख़त्म कर दिया। अब जो लोगों की लौंडी ग़ुलाम नज़र आते हैं वे या तो इसी क़िस्म के होते हैं जैसे ये दो हमारे यहाँ आए हैं। अब यह जिस तरह होगा हमारे यहाँ परवरिश पायेंगे, रहेंगे। अगर हम ज़ुल्म व सितम भी इन पर करेंगे, ये हमारी सब सहेंगे। क्या वजह कि एक तो इनके दिल में हमारा डर इतना होगा, जाने का नाम सिर्फ़ इस ख़ौफ़ से ज़बान पर न ला सकेंगे, कहीं ख़फ़ा न हो जायँ कि फिर और ज़ुल्म का दरिया बाँसों चढ़ जाय। दूसरे यह भी ख़्याल है कि जायें कहाँ ? जायेंगे तो वही टिकिया रोटी ! नौकरी कहीं हर वक़्त

तो धरी रहती नहीं कि जो चाहे उसको मिल जाय। और दूसरी क़िस्म के वह हैं जो अक्सर लोग अरब, मिस्र वग़ैरह से ख़रीद लाते हैं या अगर किसी हिन्दोस्तानी रियासत ख़ुसूसन् हैदराबाद में हुए ख़रीद किये।

"क्यों ? क्या वहाँ सरकार का इतना अख़्तियार नहीं जो वहाँ ग़ुलामी को ख़त्म करा दे ?" बीबी ने पूछा--

"है क्यों नहीं ? मगर चोरी छिपे को क्या किया जाय, ख़ैर इस बहस को और वक़्त पर उठा रखो—ग़रज़ कि अगर ग़ुलाम रखे तो अरब वालों की तरह कि उनका खाना पीना, कपड़ा लत्ता, सब अपने बराबर ! सो वह तो यहाँ ख़ैर—सल्लाह है, मुसलमान इस पर मरते हैं कि हमारे मज़हब में रवा है उनकी ख़बर लेना, उनका पालन पोशन करना। कुछ नहीं, मैं सच कहता हूँ, जहाँ मुसलमानों की क़ौम की बरबादी, तबाही के और बहुत से कारण हैं उनमें से बहुत बड़ा क़ौमी कारण यही कमबख़्ती है, जिससे ख़ुदा और रसूल दोनों नाराज़ रहते हैं। हाँ, तो ग़रज़ मेरी यह है कि कभी जो दो ख़ुदा के बन्दों की परवरिश तुमने अपने सर ली है तो ज़रा हर एक बात का ख़्याल रखना। किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होने पाये; वरना काम ख़िदमत तो गई अपने घर, यहाँ लिल्लाह, रुफ़्ते ख़ुदा गुनहगार होने की फ़ुर्सत नहीं। और करम क्या कम है जो यह अज़ाब अपने सर ख़रीदें। और, जिस दिन मैं देखूँगा कोई काम ज़्यादती और लापरवाही का ऐसा हुआ, उन बेचारों के दिल पर सदमा पहुँचा, फ़ौरन उनको रुख़सत कर दूँगा !"

"या अल्लाह !" बेगम माथे पर हाथ रख कर बोलीं, "अब ख़ुदा रसूल हो चुका, कहीं झगड़ा भी चुके, बी मुग़लानी ! जाओ साहब, उनको खाना दो, आज सब की आंतें तुमको कोसती होंगी।"

"बी मुग़लानी !" मियाँ बोले, "ज़रा देखिये तो वे दोनों जागते हैं ?"

"अरी सेवती, सेवती, ओ सेवती, अरी मुई क्या अभी से मर गई ?" मुग़लानी चिल्लाई।

"आई आई ! बी मुग़लानी साहब आई !"

"ज़री देख तो ! वे दोनों सो गए ?"

"जी ! लड़की जागती है !" सेवती क़रीब आकर बोली ।

"अच्छा ! उसको यहाँ बुला लाओ !" मियाँ बोले ।

"अरी लड़की ! ए लड़की, ज़रा इधर आना । हुज़ूर ने याद फ़रमाया है ।" सेवती उसे जगाने लगी । नजिबनिया आँख मलती हुई उठ बैठी और मियाँ के सामने आकर खड़ी हो गई ।

"यहाँ बैठ जाओ !" मियाँ ने हुक्म दिया, "सुनो बी, तुम होशियार, होश हवाश की हो । कुछ बच्चा नहीं हो, तुम रोटी कपड़े पर हमारे यहाँ हो । जितने दिन तुम्हारा जी चाहे यहाँ रहो । जब तकलीफ़ हो हमको ख़बर कर दो । हम हँसी ख़ुशी तुमको रुख़सत कर देंगे ।"

"मैं तो लौंडी हूँ ! सिवा आपके मेरा कौन है ?"

यह सुनकर बीबी ने बी मुग़लानी को आँख मारी और मुस्करा कर बोलीं—"चलो, डोरा तो अच्छा डाला ।"

"नहीं नहीं ! यह कोई ज़बरदस्ती नहीं ।" मियाँ बौखला कर बोले ।

"अच्छा साहब ! अब क़ौल व क़रार हो चुका, अब रुख़सत हो, ले जा लड़की । खाना वाना खा, बी मुग़लानी, इसको जाकर खाना दीजिये और जो तोतों की कोठरी है उसमें दोनों को सोने को कह दीजिये ।" फिर बीबी मियाँ की ओर मुड़ी, "और तो जो कुछ तुमने कहा सब ठीक कहा, अब अगरचे वह भी बेकार था उससे ज़्यादा मुझे मालूम है, मगर ख़ैर ! लेकिन इस लड़की को बुलाकर कहना चाहिये था, यह लोग कमीने, ज़रा सी मुँह लगाने से ख़ुदा जाने क्या-क्या समझने लगते हैं । देखो, इसी सेवती को, जब से हसीना को गोद में लेने लगी है, अपने को ख़ुदा जाने क्या समझती है !"

"हाँ हाँ !" मुग़लानी ने गर्दन हिलाई, "बुलाया तो हुज़ूर ने नाहक़ को !"

"क्या ख़ूब ?" मियाँ व्यंग से बोले, "साहब हम साफ़ आदमी हैं, ख़ुदा को जान देनी, हमसे ज़ब्त नहीं हो सकता !"

"बहुत अच्छे ।" बीवी ने मुँह बनाया, "वजह तो ठीक है !"

४

यहाँ का यह क़िस्सा तो छोड़ो यहाँ !
सुनो बेईमानों की फिर दास्ताँ !

मियाँ की नसीहत तो हो चुकी । ज़बानी जमा खर्च अच्छी तरह सुन चुके । रहा उसका पालन ! सो, वह आगे चल कर मालूम होगा । अभी तो मियाँ बीवी को आराम के लिए छोड़ दें । और मिर्ज़ा साहब और शेख़ साहब की ज़री ख़बर लें, जो बीस रुपया नकद अन्टी करके शाम ही से लापता हुए ।

"क्यों शेख़ साहब ! वल्लाह क्या तड़ाक् पड़ाक् मामला हुआ !" मिर्ज़ा बोले ।

"यार, मैं तो तेरी फुरती का क़ायल हूँ !"

"एक बात की कसर रह गई; सो वह भी ख़ुदा ने चाहा तो अभी थाने पर जाके यूँ चुटकी बजाते तय किये लेता हूँ ।"

"क्या थाने पर लिखवाओगे ?"

"देख तो सही, क्या कार्रवाई करता हूँ ?" मिर्ज़ा मुस्कराए, "बन्दए दरगाह अधूरा काम नहीं करते । पहले से बचाव कर लेता हूँ । फिर चाहे हो कुछ । मगर मैं अपनी वाली से नहीं चूकता ।"

"और अच्छी बात है, लेकिन भाई ज़री उस गली से होकर चलो।" शेख़ साहब बाईं तरफ़ हाथ उठा कर बोले, "आसफ़ मिर्ज़ा की दूकान से एक चार टके की अफ़्यून भी लेते चलें।"

"अजी सीधे चलो भी।" मिर्ज़ा कन्धा झिटक कर बोले, "सब से पहले थाने जाना है, दूकान तो ठीक थाने के बराबर है, वहीं से ले लेना।"

"नहीं भैया, ज़री इसके यहाँ वारे से मिलती है।"

"क़ुर्बान आपके वारे के, अफ़्यून सब जगह बराबर, यहाँ इसकी उसकी ख़ासियत क्या?"

"बस यही तो कहते हैं, अक़्लमन्द होकर आप बच्चों की से बातें करते हो, भैया इसमें लिम है।"

"अच्छा साहब चलिये, हमको मंजूर है। पर यह तो बताइये, क्या मिर्ज़ा आसफ़ छुप कर वेचते हैं?"

"हाँ कुछ हैं और नहीं भी हैं।"

"वाह वा, यह तो एक ही कही!"

"क्यों? कुछ तो सरकारी ख़रीद करते हैं और कुछ बाहर से चोरी छिप्पे मँगा लेते हैं। अभी उन दिनों इसी कारण यार लोगों ने बिचारे को मुफ़्त धरवाया था। वारे जाइये उस ख़ुदा के, छूट आया।"

इतने में ये लोग दूकान पर पहुँच गये। आसफ़ मिर्ज़ा शेख़ साहब को देखते ही बड़े तपाक से बोले—"आइये शेख़ साहब, एक कश हुक़्क़ा पिये जाइये।"

"तुम्हारे यहाँ तो आए हैं, ले भई मिर्ज़ा, इक चार टके की झपाक अफ़्यून तो दे देना।"

"आप तशरीफ़ तो रखें, हुक्म हो तो चुस्की तैयार करूँ, है हुक्म?"

शेख़ ने हाथ हिलाया, "नहीं नहीं, नहीं भैया, इस वक़्त नहीं, यह बताओ है, मैं बैठूँगा भी नहीं।"

आसफ़ मिर्ज़ा ने अपनी चमचुड़, सर से पैर तक अमचोर आशना को, जो घर में आग सुलगा रही थी, पुकारा—"अजी बी घर बसी, देखो तो शेख़ साहब बाद मुद्दत तशरीफ़ लाए हैं और तुमसे ऐसे खफ़ा हैं कि दूकान पर नहीं आते, दूर ही से अलैक सलैक फेंकते हैं।"

"अरे! आज तो मालूम होता है शेख़ानी से लड़ के आए हैं। यह लो पुड़िया दे दो।" अन्दर से आवाज़ आई। आसफ़ मिर्ज़ा उठ कर पुड़िया ले आए। फिर हुक़्क़ा पेश किया और शेख़ साहब भी एक टाँग सड़क पर एक दूकान पर रख अधझुके हुक़्क़ा पीने लगे कि इतने में एक कान्सटेबिल भी आ धमका।

"बन्दगी, मियाँ हो।" कान्सटेबिल ने बाएँ हाथ से सलाम किया।

"सलाम जमादार साहब, सलाम, मिज़ाज ख़ुश हैं?" आसफ़ मिर्ज़ा ने पूछा।

"हाँ! दया की नज़र रहे।"

"महाराज, चिलम पिये जाओ ना!" आसफ़ मिर्ज़ा बोले। कान्सटेबिल निकट आ गया। मिर्ज़ा ने एक पैसा डबल मुट्ठी में दबा कर चिलम के साथ चुपके से दे दिया।

"बन्दगी!" कान्सटेबिल बोला। फिर एक ज़ोर से दम लगा के खाँसा—"कहो मियाँ, कुछ दुकान चलत है। का कही, मुख़ुत माँ तुम बेचरु धर दिये गए रहे। मुल ख़ैर, छुट आयो; ले, अब तनी हाथ पैर बचाए रह्यो। ले, जात हैं।"

"बैठो बैठो, महराज बैठो ना।"

"नाहीं हो, आज पहली नौकरी है, फ़िरागत करके पहुड़ी, आज ठन्ढाई जरा ज्यादा हो गई तो एस मालूम होत है कि कोऊ आकास पर ले जात है और पाताल में फेंक देत है।" यह कहते हुए कान्सटेबिल साहब चले गए।

"क्यों हज़रत!" मिर्ज़ा मुस्करा कर बोले, "हमने एक बात देख ली। हम भी क्या नज़रबाज़ हैं!"

"क्या क़िबला क्या ?" आसफ़ बौखला गए ।

"वही चिलम देते वक़्त की बात ।"

आसफ़ धीरे बोले, "इसको अपने ही तक रखियेगा । इन बद-माशों को एक पैसा रोज़ देते हैं । किसी ने कहा है, 'कुत्ते का मुँह नेकी है, बदी है तो बला से ।' किसी वक़्त तो आड़े आयेगा । भई जमादार, हवलदार को देने का मुँह नहीं, उनके पेट बड़े हैं ।"

इतने में मिर्ज़ा को कोई बात याद आ गई और पट्टा तोड़ा कर कान्सटेबिल के पीछे लपका ।

"अजी अजी महराज, महराज, ठहरो तो एक बात सुनो ।" मिर्ज़ा ने पुकारा ।

"को आय हो ! अरे कोऊ हमका पुकारत है ?"

"हाँ हाँ, ज़री ठहरिये तो !"

"का कहत हो ?"

"क्यों भई तुम इस थाने पर तैनात हो ?"

"और का ?"

"महराज, एक काम है जो आप मानें और कोई बुरी बात नहीं ?"

"अच्छा का है ? कहो ।"

"वह जो आगे बढ़ के नवाब रहते हैं, उनके यहाँ कल सुबह को जाके तुम इतना पूछ आओ कि कै लड़के परवरिश को लिये गए हैं ?"

सड़क के किनारे कान्सटेबिल साहब खड़े हो गए, समझ गए कुछ चखौतियों के मामले हैं ।

"तो का नवाब साहब के यहाँ लौंडी आई है ?" उन्होंने पूछा ।

"हाँ, फिर जो कुछ समझो ।"

"थाने पर इत्तला होय गई ?"

"पहले सब माजरा तो सुन लो ।"

"अच्छा, तुम आपन मतलब कहो ।"

"बस वही, ज़री वहाँ तक कल तकलीफ़ करो।"

"हुँह !" कान्सटेबिल ने मुँह बनाया, "हमका पट्टी पढ़ावे चले हैं, भला अस जाब्ता है जस तुम मियाँ हमसे बतियात हो ? कम्पनी बहादुर की अमलदारी माँ बुर्दाफ़रोसी जानत हो बड़ा जुर्म है, बिना ज़मानत।"

"अरे भई, यह तो जानते हैं, मगर जब बुर्दाफ़रोशी भी हो ! एक औरत, अच्छी ख़ासी जवान, वहाँ भूख की मारी आई है, रोटी कपड़े पर रह रही है। मगर नवाब साहब के मिज़ाज को तुम जानो शक्की, वह इत्मीनान चाहते हैं।"

"हम सब जानत हैं, तो हमका का पड़ी है जो जाई ? सकारे हवलदार साहब से बोल देब नवाब साहब के यहाँ लौंडी बाँदी खरीदी जात है और लिखावे थाने पर कोऊ नाहीं आवत। ई आपन दरयाफ़्त कर लेइ हैं।"

"अरे भई सुनो तो, क्या अब ऐसा अन्धेर है ? हवलदार साहब बे तहक़ीक़ात किये खा जाएँगे ? और मियाँ, सच पूछो तो कोई बात नहीं। हमने कहा, तुम्हारा मुहल्ला है, पान खाने को थोड़ा बहुत नफ़ा हो जाएगा।"

कान्सटेबिल हँस दिया—"मियाँ हो, मुहल्ला मेहतरानी केर होत है।"

मिर्ज़ा ने इतना जो मुँह पाया झट हाथ पकड़ लिया—"अजी महराज यह लो, तम्बाकू पीने को चवन्नी लो; फिर कभी देखा जायगा। अब तो हमारा तुम्हारा सम्बन्ध चला है। अब ज़री आइन्दा से मेहरबानी की नज़र रखियेगा।"

कान्सटेबिल ने ढीली ढाली पतलून ज़री कूले से नीचे खसका कर अन्टी में चवन्नी रखी फिर मिर्ज़ा से बोला—"अच्छा ले अब तुम जाओ, निसाखातिर रहो, सवेरे जस होई देख लीन जाई।"

"मगर देखो भई, कल भूलना नहीं।" मिर्ज़ा चलते-चलते बोले।

कान्सटेबिल मुड़ कर बोला--"अच्छा, तुम ख़ातिर जमा रखो।" फिर उसने अपने आप से कहा—"ससुर लिफाफिया कहीं के, कल की कल के हाथ, जस इनकर नौकर अही।"

मिर्ज़ा ने दूर ही से शेख़ साहब को आवाज़ दी और घर को चले। रास्ते में कान्सटेबिल की बातचीत का ज़िक्र रहा, फिर अपने घर चले गए।

अब हमारे पाठक ज़री आँख बन्द करके छे महीने ज़न से गुज़र जाने दें--नजिबनिया छिल-छिला कर सुडौल बने, काम से वाक़िफ़ हो, बीवी की मिज़ाजदां बने, चिप्पी करना, पलंग की डोरियाँ कसना, नह-लाना, मुँह धुलाना, सर में तेल लगाना सीख जाए।

इस बीच जो घटनाएँ हुईं उनमें से केवल इतनी मालूम हैं कि एक दिन खड़े-खड़े कान्सटेबिल पूछताछ को आया और एक रुपया इनाम का ले गया। और नजिबनिया पर एक दफ़ा ज़री सी ओढ़नी जला लेने पर ख़ूब पिटाई पड़ी।

दूसरी बार बी मुग़लानी की कमर दबाने में उसने आना कानी की। उन नेकबख़्त ने उठकर उसकी ख़ूब ही मरम्मत की और कोठरी में बन्द कर दिया। दिन भर खाना नहीं मिला। तीसरी बार मुन्ने साहब ने कनकउवा जोड़ने को लेई पकवाई थी, उसमें देर हो गई। उस पर बेगम साहब ने इतना मारा कि सेर भर हल्दी थोपी गई।

५

नवाब साहब घर पर बैठे हुए थे। इतने में मिर्ज़ा आ धमके।

"मिर्ज़ा कहो, किधर से आते हो, कोई ताज़ा ख़बर?" नवाब साहब ने तपाक् से पूछा।

"जी हुज़ूर, कुछ भी नहीं, वह तो हुज़ूर ने सुना ही होगा, हस्सू जान की बी नाइका पर जो आफ़त आई।"

"क्या हुआ ? वल्लाह, हमको नहीं मालूम, क्या कोई और नोची चल दीं ?"

"जी नहीं ! वह बेचारी एक मामले में फँस गई।"

"इस सिन में और फँसना, अजी किसी को फाँसा होगा ?"

"क्या अर्ज़ करूँ ! ज़माना ऐसा बेढब लगा है। अगर एक लमहा इज़्ज़त आबरु से कट जाए तो इन्सान को सजदए शुक्र बजा लाना चाहिए। आजकल आबरुदार की मौत है। ज़रा देखिये ! दो लड़कियाँ उसने ली थीं, माँ राज़ी, बाप राज़ी !"

"इक़रार हो गया था ?"

"क़ौलो क़रार कैसा ? लिखा पढ़ी हो गई थी--अब सुनिये कि बेचारी पकड़ी गई, साहब कहते हैं तुमने क्यों मोल लिया ? उस बेचारी की जान अज़ाब में है, कुछ करते धरते नहीं बनता। सारे शहर में हलचल है, अगर यही रंग है तो कोई काहे को अब परवरिश को लड़कियाँ लेगा ?"

"भई मिर्ज़ा !" नवाब साहब घबरा गए, "हमारे यहाँ तो दो हैं। दोस्त दुश्मन को किसने देखा ? कहीं कोई हलालज़ादा, हरामज़ादा आग न लगा दे। भई इसकी तदबीर ज़रूर चाहिए !"

"ऐ हुज़ूर, ख़ुदा ख़ुदा कीजिये, सारा शहर लाखों बच्चे लिये बैठा है, ऐसी बात हो सकती है ?"

"नहीं साहब ! तुमने लिखाया पढ़ाया भी नहीं, ले उस पर जब यह आफ़त आई और कोई इक़रारनामा तम्मसुक काम न आया, तो यहाँ का ज़बानी जमा ख़र्च क्या होगा ?"

"वाह, वाह, हुज़ूर की बातें भी वल्लाह लिख लेने के लायक़ हैं ! और चलो अच्छा है ! ऐ ख़ुदावन्द यह कोई अक़्ल की बात है ? ख़ुदा देखा नहीं, अक़्ल से पहचाना !"

"नहीं, भई मुझे उलझन हो चली। अरे कोई है? चौकी पर पानी रखो। मिर्ज़ा साहब, आप जाइएगा नहीं, मैं अभी आया।"

"नहीं, हुज़ूर मुझे काम है एक; थोड़ी देर में हाज़िर होता हूँ।"

"अच्छा तो भई ज़री इसकी तहक़ीक़ करो। कितना सच है, मुझे अफ़वाही बाज़ारी गप मालूम होती है।"

"आदाब अर्ज़ करता हूँ!" मिर्ज़ा ने कहा और बाहर चले गये।

नवाब साहब कुछ सोच में डूबे हुये चौकी से उतरे। सामने बी मुग़लानी दीख पड़ीं। नवाब साहब ने पूछा—"अजी बी मुग़लानी, तुम्हारी बेगम कहाँ हैं?"

"शायद पिन्डा धोने गई हैं!"

"लाहौल वला, अरे साहब यहाँ आइये, एक बात कहनी है।" नवाब साहब ने आवाज़ दी।

"हुज़ूर, बेगम साहब कहती हैं, ज़री देर में आई।" नजिबनिया बोली।

"अजी उनसे कह दो आएँ भी!" नवाब साहब झुंझला गए, "और मैं कहता हूँ यह वक़्त कौन नहाने का है? अभी उस दिन तो सर धो चुकी हैं, इसी मारे तो हवा ज़दगी हो जाती है, फिर पन्द्रह बीस दिन पड़ी सेंका करती!"

बड़बड़ाते हुए नवाब साहब बाहर आए। फिर पुकारा—"अरे कोई है?"

"हाज़िर!" मद्दू बोला।

"अरे क्या मिर्ज़ा चले गये?" नवाब साहब ने पूछा।

"जी हुज़ूर!"

"अच्छा ज़री मुंशी माता परसाद साहब को तो बुला लेना।" यह कहते हुए नवाब साहब अन्दर चले गए—"क्यों साहब अभी तक

हमाम नहीं हो चुका ? अरे साहब खड़े-खड़े एक बात सुन जाते !" उन्होंने आवाज़ लगाई।

"या अल्लाह ! ऐसी क्या जल्दी है, ख़ैर तो है ?" बेगम गुस्लखाने से बोलीं।

"ख़ैरियत है, मगर एक बात कहनी थी।"

"मामा जी !" मद्दू अन्दर आकर बोला, "सरकार को खबर कर दीजिये, मुंशी साहब तशरीफ़ लाये हैं।"

नवाब साहब यह सुनकर बाहर निकल आए।

"आदाब बजा लाता हूँ !" मुन्शी साहब बोले।

"कोरनिश ! माफ़ फ़रमाइयेगा, मगर एक ज़रूरी काम था, मजबूरी थी।"

"फ़रमाइये, ख़ैर तो है ?"

"हाँ, आपकी दुआ से सब ख़ैरियत है, मगर आज मैंने सुना है, हस्सू की नाइका गिरफ़्तार हो गई !"

"हाँ सुना तो मैंने भी है। क्यों ! आपको बेचैनी क्यों है ?"

"कुछ नहीं, मैंने कहा, इसकी तसदीक कर लेनी चाहिए--ज़री अन्दर हो आऊँ, अभी हाज़िर होता हूँ।"

"ऐ बिस्मिल्लाह, मेरा तो घर है, मैं बैठा हूँ।"

नवाब साहब अन्दर आके बोले, "बेगम आई ? अजी निकलो भी, कब तक बैठी रहोगी, बी मुग़लानी गिलोरी तो देना !"

इतना कह कर नवाब साहब बाहर आ गए—"मुन्शी साहब !" नवाब साहब बोले, "मैं तो जानता हूँ, इस ख़बर में बनावट भी है। कोई और बात भी ज़रूर होगी। लड़की ख़रीदने पर यह पकड़ गई होगी !"

"नहीं जनाब, मैंने जो सुना है वह तो यही सुना है। बाक़ी पूरी बात तो इस वक़्त नहीं अर्ज़ कर सकता। लेकिन हाँ पूछताछ करके

ख़बर दूँगा। और, यह तो ख़बर बहुत मशहूर है, शहर के अखबारों में भी छप गई है।"

नवाब बदहवास हो गए—"हाँ हैं! वल्लाह सच कहो, भई तुमने कहाँ देखा?"

"मेरे एक दोस्त हैं, उनके यहाँ से ११ जून का 'अवध पंच' ले आया था। उसमें भी यही ख़बर लिखी थी।"

"वह इस वक्त मिल सकता है? आपके दौलतख़ाने पर है?"

"जी हाँ! वहाँ मेरा छोटा भाई है, आदमी जाय और 'पंच' माँगे, वह दे देगा।"

"अरे मद्दू जा तो सही!" नवाब साहब चिल्लाए।

मद्दू गया और ११ जून का 'अवध पंच' माँग लाया।

"वह ख़बर निकालिये तो।" नवाब साहब ने मुंशी साहब से कहा।

"लीजिये, यह क्या! लोकल ख़बरों में है।"

"ज़री, आवाज़ से पढ़िये!"

"सुर्ख़ी लिखता है—हात तेरी की थी—जिन-जिन रंडियों ने इस क़हतसाली में लड़कियाँ लेकर नोचियाँ बनाई थीं, नाच, हाव-भाव, नख़रे, चोंगे की तालीम देती थीं अब तो उनके पेट में चोंगे पड़ गए, हवास जाते रहे। वजह क्या? कई दिन हुए हस्सू जान की नाइका गिरफ़्तार हो गई। उन नेक बख़्त ने दो लड़कियाँ ली थीं। देखिये अब अंजाम क्या होता है? हमने उसी ज़माने में डंके की चोट पर कह दिया था कि ख़ैरात ख़ाने से जो लोग लड़कियाँ माँग ले जाते हैं उनकी निगरानी चाहिये। आजकल रंडियों ने ज़र व ज़ेवर की फ़रमाइश छोड़ कर अपने आशनाओं से लौंडियों का चोंगा अख़्तियार किया है और हमारे एक और अख़बार 'रहबरे हिन्द' ने भी इस पर अपना अफ़सोस ज़ाहिर किया था। चुनानचे देखिये, आख़िर वही हुआ, हमारी बात सच निकली। अरे भई तुम जानो, हम गुप्त विद्या भी तो जानते हैं

और गुप्त विद्या पर क्या ? कौन विद्या नहीं जानते--सिर्फ़ इतनी बात है कि मानो तो देव नहीं पत्थर !" मुंशी साहब ने पूरी ख़बर पढ़ डाली।

नवाब साहब हँस पड़े--"भई क्या दिल्लगी का परचा है, तो क्यों साहब, फिर अब क्या होगा ?"

"अभी कोई हुक्म नहीं हुआ, जैसे ही कुछ मालूम हुआ मैं पूरी ख़बर दूँगा। मैं इस वक़्त आदाब अर्ज़ करता हूँ, कचहरी जाना है।"

"बहुत ख़ूब ! बन्दगी !" नवाब साहब ने जवाब दिया और अन्दर आ गए। फिर बेगम को पुकारा—"बेगम, बेगम ज़री इधर आओ !"

"ज़री बाल ख़ुश्क कर लूँ !"

"अच्छा सुनो तो सही !"

"या अल्लाह ! वहीं से न कहो !"

"नहीं ! यहाँ कहने की बात नहीं।"

"यहाँ कोई है थोड़ी !"

नवाब साहब ने दाहिने बाएँ नज़र दौड़ाई फिर धीरे से बोले—"बड़ा ग़ज़ब हो गया, कुछ तुमने सुना ?"

"कहो ! क्या है ? ख़ैर तो है ? मैंने कुछ नहीं सुना।"

"हस्सू की नाइका आज गिरफ़्तार हो गई। उसने पालने के वास्ते दो लड़कियाँ ली थीं, अब देखिये, क्या सज़ा तजवीज़ होती है। मैं इसी दिन को मना करता था। तुमने मेरी एक न मानी, अब बताओ क्या फ़िक्र करूँ ?"

"सच है ?"

"क्या ख़ूब ! सारा शहर जानता है, अख़बारों में ख़बर छप गई है।"

"ले अब मैं क्या बताऊँ, मुझसे जो कहो करूँ, इनको छिपा दूँ।"

"लाहौल वला क़ूवत इल्ला बिलाहो अलीयुल्अज़ीम।" नवाब साहब झुंझला गए—"भई औरतों की बातचीत जब मानी, ऐसे ही

चक्कर में फँसे, और देखो, हम इसी दिन के लिये रोकते थे। न माना पर न माना। अपनी ही हठ करके छोड़ी और उस मर्दूद मिर्ज़ा ने भी हाँ में हाँ मिलाई। अब सब अलग हो गए। अज़ाब मुझ कमबख़्त की जान पर पड़ा। भई, तुम लोगों ने तो मेरी जान अज़ाब में कर दी है।"

"बस बस! इसमें किसी का कुसूर नहीं, भला सुनो तो सही मेरी ज़बान से एक दफ़ा ज़री कहीं कुछ निकला था। तुमने टंगड़ी ली। मैं दम खाके रह गई। दूसरे दिन ख़ुद ही आए, ख़ुद ही कहा। मैं इनकार किये जाती थी, नहीं भई नहीं, मुझे नहीं चाहिये, मैं दर गुज़री, मियाँ तुम ही ने तो ला ज़बरदस्ती मौजूद की।"

"ऐ सुबहान अल्लाह! क्या उल्टा धड़ा बाँधा है। सब झूठ, झूठ बरब्बे काबा! मेरी हरगिज़ नियत न थी, बी मुग़लानी बोलती नहीं हो, तुम ही ईमान से कह दो।"

"हुज़ूर का फ़रमाना बजा और बेगम साहब का भी।" मुग़लानी बड़े इत्मीनान से बोली।

"नहीं नहीं! यह दोफ़स्ली बात अच्छी नहीं, दो टूक कहो।" नवाब साहब बोले।

"अजी इसमें मुग़लानी का क्या बीच? मुझसे कहो ना जो कहना है।" बेगम बिगड़ कर बोली।

"लोगों!" मुग़लानी ने कहा—"आख़िर यह बात क्या है जो गड़े मुर्दे उखाड़ने लगे? मुई साल भर की बात होने आई, अब इसकी बहस ही क्या? चलो! किसी ने कहा! अब इस हुज्जत से क्या होगा?"

"नहीं साहब!" नवाब साहब ज़ोर से बोले, "आज तो अजीब ख़बर सुनने में आई, वल्लाह, जब से सुना है हवास ठिकाने नहीं।" फिर धीरे से बेगम से कहा—"कहो! मुग़लानी से कहूँ?"

"ऐ चलो हटो! मुझे तुम्हारी यही बातें तो अच्छी नहीं मालूम

होतीं। कहो न मना कौन करता है ? मुग़लानी अरस्तू की मिट्टी है ना ! कहीं चूहे का बिल ढूँढ़ देंगी कि लौंडी ग़ुलाम दोनों को उसमें छुपा रखें !"

"क्यों तबीअत को और दुख दिलवाती हो ? अपनी ग़लती पर शर्मिन्दा नहीं होती हो, उलटे ताने-माने करती हो !"

"वाह वा ! अच्छी कही ! कोई ज़बरदस्ती अपने ऊपर इल्ज़ाम ले ले। भई मुझे कपड़े भी पहनने दोगे ? हटो भी।"

नवाब साहब इस झक-झक से ऊब कर माथे पर शिकनें डाले बाहर तशरीफ़ ले गए और चिल्लाए--"कोई है-? कोई है-?" जब तक मद्दू "हाज़िर !" बोले दस पाँच बार और पुकार डाला।

"हाज़िर, हाज़िर !" मद्दू बोला।

"नमकहराम ! कामचोर, सब को एक बारगी मौत आ जाती है। रोटियाँ लगी हैं, मरदूदो ! सब के सब गूँगे बहरे हो गए। किसी के मुँह से आवाज़ नहीं निकलती ! दूर हो मेरे सामने से ! कमबख़्त, नालायक, नाहंजार, मादर ब ख़ता, गिलोरियाँ मँगवा !" नवाब साहब का पारा बुरी तरह चढ़ गया था--इतने में शेख़ साहब आ पहुँचे।

"तसलीम अर्ज़ है !" शेख़ साहब ने कहा।

"सलाम अलैक !" नवाब साहब की आवाज़ धीमी थी।

"ख़ैर तो है ? यह इस वक़्त चेहरा उतरा हुआ कैसा है ?"

"हज़रत क्या कहूँ, जान आफ़त में है वल्लाह, मुरौवत बुरी बला है। यह सब आप लोगों की ख़राबियाँ डाली हुई हैं।"

"बजा है, पीरो मुर्शिद, कुछ मालूम तो हो।"

"मालूम करके क्या कर लीजियेगा ? बी हस्सू की नाइका गिरफ़्तार हो गई।"

"ऐ हुज़ूर तो इसमें मेरी क्या ख़ता ? जो जैसा करेगा वैसा पायेगा।"

"जी नहीं ! यह भी मालूम है किस बात पर ?"

"लड़की किसी की ख़रीदी थी। उसकी जवाब देही है, इतना तो मैं भी जानता हूँ।"

"जी तो, फिर आप भी तो दो लाये हैं !"

"सारा लखनऊ भी तो लाया है !"

"सुना शेख़ साहब ! मेरा मिजाज़ खिफ़क़ानी ठहरा, एक तो मैं इस बीमारी ही से पनाह माँगता हूँ। उस पर तुम लोगों ने मजबूर किया। मुझे मानते ही बना, वल्लाह मैं ख़ुदा की ख़ुदाई में कह दूँगा कि तुम लोगों ने मुझे धोका दिया। मिर्ज़ा तो पराये आदमी हैं। मगर शेख़ साहब ! मुझे यह उम्मीद न थी आप से।"

"यूँ तो ग़ुलाम बाल-बाल ख़तावार है, मगर यह बात कोई परेशानी की है नहीं। वैसे जो हुज़ूर फ़रमावें सब ठीक है।"

इतने में मुन्ने साहब ने ख़ुदाबख़्शा की मरम्मत शुरू कर दी। उसने मंझे का तिकला ज़मीन पर फेंक दिया था।

"क्यों मुन्ने साहब !" नवाब साहब चिल्लाए, "यह क्या है ? हाय हाय ! नहीं मानते, भला, भला मुन्ने साहब !"

भला मुन्ने साहब के मंजे हुए हाथ कब रुकते हैं ! और यह जानते न थे कि आज नवाब साहब और बेगम साहब से चख़चख़ फिर चली है। नवाब साहब ने उठ कर मुन्ने साहब को दो तीन चांटे रसीद किये—"नालायक़, मरदूद, मनहूस, नंगे ख़ानदान, आक़ कर देने के लायक़ है।" धप, चटाख़, तड़-पड़, चांटे पड़ते रहे।

"ऊँ ऊँ ऊँ, हमारा तिकला फेंक दिया था, कनकौवा चुरा ले गया—ऊँ ऊँ कनकौवा कटवा दिया, ऊँ ऊँ ऊँ।" मुन्ने साहब रोते रहे।

"मरदूद !" नवाब साहब बोले, "तेरी यही सज़ा है, तेरी जान है और किसी के नहीं, वह बन्दए ख़ुदा नहीं ? इधर आ बे ख़ुदा बख़्शा, जिस दिन तुझे यह मारे हमको ख़बर कर, हम ज़रूर सज़ा देंगे।"

खुदाबख़्श गर्दन नीची किये उँगलियों से तिकला बना रहा था। धीमे स्वर में बोला, "अच्छा !"

नवाब साहब शेख़ से थोड़ी देर बददिमाग़ी करके वे खाना खाए सो रहे। उधर बेगम ने भी न खाना खाया, न सर में तेल डाला, उसी तरह निहार मुँह लेट रहीं। बी मुग़लानी के तख़्त के पास सेवती और नजिबनिया बैठी थीं।

"क्यों बी मुग़लानी साहब? आज बेगम साहब ख़ाना न नोश फ़रमायेंगी?" सेवती ने पूछा।

"हाँ खाएँगी, इसका कलेजा।" मुग़लानी ने चटक कर नजिबनिया की तरफ़ इशारा किया।

"वाह वा, बी मुग़लानी, मैंने क्या किया?" नजिबनिया बोली।

"मुरदार ! तेरे ही कारन !"

"हाँ कुछ सुन गुन तो मैंने भी पाई थी। यह बात क्या है? मेरी मुग़लानी कुछ तो कहो।" सेवती ने कहा।

"बात क्या है?" मुग़लानी बोली, "मियाँ का मिजाज़ तो जानती हो, कैसा ख़ुदा का सँवारा है। ज़रा सी बात हो जाय चाहे, फिर उस पर वह हाशिये, फ़ुदने कि अब क्या कहें? भई मेरी तो इत्ती उम्र आई, जाँपनाह की भी आँखें देखीं, महलों में भी रही, इनकी उनकी नौकरी की, मुल ऐसा मिज़ाज किसी का न देखा। आए दिन एक न एक बात! कोई गिरफ़्तार हुआ सरकार के पेट में हौल समाई है। छींक हुई और नवाब साहब बौखलाए फिरते हैं।"

"आखिर यह बात क्या जो आज सरकार बीवी को बोल रहे थे?" सेवती ने पूछा।

"बात क्या?" मुग़लानी बोलीं, "कहीं उड़ती-उड़ती ख़बर सुन आये हैं, कोई रंडी लौंडी ख़रीदने पर जवाबदेही में गिरफ़्तार है। अब मियाँ के पेट में साँस नहीं समाती। बेगम से अलग नाराज़ हैं। बिचारे मुन्ने

को, जिसको कभी गर्म आँख न देखा था, आज मुए खुदाबख़्शा के कारन खुदा के वास्ते दो तीन चटख़ने ऐसे मारे कि पाँचों उँगलियाँ बन गईं। कहते हैं, तुम्हीं ने लौंडी मँगवाई। अब मुग़लानी बन्दी की जान को भी वही मुसीबत पड़ेगी, खुदा न करे, जो उस मुई रंडी पर पड़ी है।"

"मुग़लानी बीवी!" नजिबनिया बोली, "तो हम कुछ बिके नहीं। मियाँ ने कहा, तुम रोटी कपड़े पर हो और बीवी हमें घर में रहना है कि बाहर जाना, हम किनसे कहने जाएँगे ?"

"चल ! चल !" मुग़लानी ने धुतकारा, "अपनी क़ाबलियत लड़की अपने पास रख, वही मसल--मुँह लगाई डोमनी, गाए ताल बेताल ! यही बातें तो सरकार की मुझे ज़हर लगती हैं। लो साहब लड़की तो अभी सलामती से लगी हराम हदीस क़ानून, आईन, पिनल कोड छाँटने !"

बीवी के पेट में भूख के मारे घोड़दौड़ लगी थी। दूसरे बी मुग़लानी कड़कड़ा कर लौंडी पर बरसीं तो आँख खुल ही गई।

"ऊँह ! ऊँह।" बेगम ने अँगड़ाई ली, "क्या है यह आज सर पर क्या कौंसिल लगाई है ?"

"कुछ नहीं हुज़ूर सेवती से बातें करती थी।" मुग़लानी धीरे से बोली, "और सुना बेगम साहब, मियाँ की लौंडी की बातें सुनती हैं आप ?"

"क्या, क्या ? मुझे सुनाई नहीं देता !" बेगम ने कहा।

"लौंडी ने मसला निकाला है !" मुग़लानी ज़रा खींचकर बोली।

"किस बात का ?"

"कहती है, मैं कुछ ज़र खरीद हूँ ? जिस वक़्त जी चाहेगा उठ खड़ी हूँगी, चलती फिरती नज़र आऊँगी।"

"हाँ साहब ! सलामती से अब यह हौसले हुए, ख़ुदा की क़ुदरत, पाल पाल, मेरे जी का काल !" बेगम ने ठंडी साँस ली।

"अब इस बात को समझ जाइये, आज इसके मुँह से निकला है, इसी मारे कहते नहीं, घर में ज़रा समझ बूझ के बात करनी चाहिये।" मुग़लानी बोलीं।

"मैं खूब समझती हूँ! यह उनकी समझ, जो चाहे सो करें। उनका तो दस्तूर है, ग़ुस्से के वक़्त आँख बन्द कर लेते हैं, मुँह खोल देते हैं।"

"नहीं, इसकी अभी से तदबीर चाहिये।"

"बी मुग़लानी!" नजिबनिया बोली, "मेरा मुँह थुके जो मैंने कहा हो। मेरी ज़बान में साँप डसे जो यह निकला हो। अभी तुमने तूफ़ान लगा लिया, अभी तो बहन सेवती भी बैठी हैं।"

"बस छोकरी बस!" मुग़लानी बिगड़ी, "और साँप की ऐसी क्या खाट कटी जो तेरी ज़बान डसने आयेगा? मेरा क्या बूढ़ा चूंडा मुंडवाएगी? मैं तेरे तो मुँह लगती नहीं, मैंने बीबी से बात कही थी।"

सेवती ने जो यह रंग देखा तो वह चलती हुई और बावरचीख़ाने में आ बैठी। इसके बाद नजिबनिया भी वहीं उठ आई।

"बाजी देखा, बी मुग़लानी ने अभी कैसी बात बनाई, खड़ी गाय में कीड़े डालती है।" नजिबनिया बोली।

"अभी देखो तो इस घर के कारख़ाने!" सेवती ने कहा, "जहाँ सुई न जाए, वहाँ लट्ठा करें!"

"बहिन! नेकी उतरे ऐसी मुग़लानी पर, लट्ठा रखें अपने होते सोतों के वास्ते।"

"भला भला!" मुग़लानी चींख पड़ी, "मैं सब सुनती हूँ। तू मुझे कोसे काटे जा। बेगम साहब, मैं कहती हूँ, आज तो इसने सारा घर सर पर उठाया है। सब को एक सिरे से पाजामे में डाल कर पहन लिया है। मुँह दर मुँह कोसने दिये जाती है।"

"क्यों री मुरदार? तू न मानेगी? आऊँ?" यह कह कर जो बेंत मारना शुरू किये तो अल्लाह दे और बन्दा ले।

"अरे बीबी, तोबा है तोबा, हाय रे, हाय रे!"

"हरामज़ादी, क़ुत्तामा।" बेगम ने फिर एक बेत लगायी। "लो साहब! चल निकलीं, बुला अपने होते सोते को, देखूँ तो कौन आता है? मालज़ादी! आपे ही में नहीं।"

"नहीं बेगम साहब, अब जाने दीजिये, मुई मर जायगी।" मुग़-लानी ने सिफ़ारिश की।

बीवी एक तो यूँ ही उससे जली हुई थीं, दूसरे भूख की झाँझ! एक तो करैला कड़ुवा, दूसरे नीम चढ़ा, ख़ूब ही बेचारी पर कुन्दी हुई। उसके बाद लकड़ियों वाली कोठरी में बन्द कर दिया!

"ख़बरदार! कोई मुरदार को न खोले।" बेगम बोलीं।

"नहीं अब सज़ा हो गई, जाने दीजिये, यह निगोड़ी कोसने देगी।"

"नहीं साहब! बछड़ा तो खूँटे के बल कूदता है न, इसके दिमाग़ में हवा बुरी भर गई है।"

६

नवाब साहब अभी सोकर उठे थे। उठते ही आवाज़ लगाई—"अरे कोई है? इधर आओ!"

"हाज़िर।" मद्दू की आवाज़ आई।

"शेख़ साहब चले गए?" नवाब साहब ने पूछा।

"जी हुज़ूर! कब के!" मद्दू ने जवाब दिया।

"अच्छा! मिर्ज़ा को बुला ला, और देख, अगर मिर्ज़ा घर पर न हों तो कहते आना कि जिस वक़्त आएँ फ़ौरन भेज दें, एक ज़रूरी काम है।"

"बहुत अच्छा !" यह कह कर मद्दू चला गया और नवाब साहब अन्दर तशरीफ़ ले गए।

"क्यों बेगम, अब बताओ ! क्या तदबीर करें ?" नवाब साहब ने बेगम से पूछा।

"अब तदबीर मैं क्या बताऊँ ? तुम मर्द ज़ात होके मुझसे पूछते हो, मुझसे जो कहो वह करूँ !"

"या अल्लाह !" मुग़लानी बोल पड़ीं, "यह बात क्या है ? यह आज हुज़ूर को क्या वहम समा गया है ? कुछ हमारे यहाँ नई बात है ? सारी दुनिया परवरिश करती है, और एक तो यह कि किसी को घर के अन्दर का हाल मालूम ही क्या ? लोगों पर डिगरियाँ जारी होती हैं और बरसों महल में रहते हैं और किसी को कानों कान ख़बर नहीं होती। यह लोग न गुनहगार न ख़तावार, ऐसा क्या शहर शिमला है ?"

"अरे साहब !" नवाब साहब बोले, "तुम नहीं जानती हो। मैं बहुत दूर हूँ, वह एक और बात है, यह फ़ौजदारी का मामला, बड़ी टेढ़ी खीर है। ख़ुदा हर एक इज़्ज़त आबरू वाले को बचाए, आजकल के ज़माने में।"

"अच्छा ! एक बात मेरी समझ में आई है, चाहो वह कर देखो !" बेगम ने कहा।

"अच्छा कहो कहो ! क्या है ? सलाह तो दीवार से भी लेते हैं !" नवाब साहब बोले।

"जब तक हुल्लड़ है, आओ तब तक इनको किसी के यहाँ रख दें, बाद दो एक महीने के सब ख़त्म हो जायगा तब बुला लेंगे।"

"सलाह तो वल्लाह माक़ूल है।" नवाब साहब खिल उठे, "मगर मेरा कोई दोस्त नहीं जिस पर मुझे इस क़दर एतबार हो, तुम ही कोई जगह तलाश करो !"

"इसमें तलाश क्या करना ? कोई बड़ा घर तो दरकार नहीं और न मुनासिब है ! ऐसी जगहों में बात छिपती नहीं, यही किसी नौकर चाकर के यहाँ रखा दो, जो कुछ खाने पीने में ख़र्च होगा, दे दिया जायगा। उसमें यह भी है मारे ख़ौफ़ के वह बात ज़ाहिर कभी न होने देगा।"

"बहुत उम्दा ! हमको दिल से मन्ज़ूर, आज ही शाम को बिस्मिल्लाह कीजिये, इस अज़ाब को मेरे घर से निकालिये।"

इतने में मिर्ज़ा साहब के आने की ख़बर हुई।

"अच्छा ! तो मैं बाहर जाता हूँ, तुम उसकी फ़िक्र करो और तजवीज़ करो कौन शख़्स इस लायक़ है। अगर सलाह हो तो कहो, मिर्ज़ा से भी इसका तज़किरा करूँ, शायद वह भी कोई तदबीर अच्छी सोचें।"

"हाँ हर्ज़ ही क्या है ?" मुग़लानी बोली, "अपने आप बाहर भी मशविरा कर लें, मर्दों की और बात है। उनकी चार आँखें होती हैं !"

नवाब साहब बाहर निकल आए।

"आदाब अर्ज़ !" मिर्ज़ा देखते ही बोले।

"कहो मिर्ज़ा, अब तदबीर बताओ, क्या किया जाय ?"

"पीरो मुर्शिद, कुछ भी नहीं, आप तो यों ही तबीयत को परेशान करते हैं। सारा जहाँ मज़े से हज़ारों लौंडियाँ लिये बैठा है, किसी को अल्ला ख़याल तक नहीं !"

"अगर तुम्हारी सलाह हो तो इनको किसी के यहाँ भेज दें, जब यह हंगामा ठंडा हो जाय बाद दो एक महीने के फिर बुला लें !"

"जी हाँ ! क्या हर्ज है ? मगर ऐसा कौन शख़्स हुज़ूर ने तजवीज़ किया है जो इनको अपने घर रक्खे ?"

"तुम्हीं सोचो ! बेगम ने मुझे इस वक़्त यह सलाह दी।"

"नहीं वल्लाह ! सलाह तो निहायत ही ख़ूब है ! मशाअल्लाह से, मैं भी हुज़ूर के यहाँ से उठ कर इसी फ़िक्र में डूबा था, इसी उलझन

में आज कहीं नहीं गया। भला मुझ सा घुमक्कड़ आदमी और इतनी देर घर पर रहे ? मगर वल्लाह यह मुझे नहीं सूझी !"

"लाओ शेख़ साहब के यहाँ भेज दिये जाएँ, मगर भई मुझको तो तुम्हीं पर भरोसा है, अगर तुम अपने घर ले जाओ तो मुझे सब तरह इत्मीनान हो जाय !"

"हुज़ूर ! मुझे इसमें कोई इन्कार नहीं, सर आँखों से बजा लाता, मगर यह काम शेख़ साहब ही से ख़ूब होगा। अब जैसी आपकी मर्ज़ी। ताबेदार को इन्कार ही क्या ? हुक्मे हाकिम, उनके दो चार बाल बच्चे भी हैं, मिल-जुल कर रहेंगे। और यहाँ तो ख़ाना बदोश आदमी, एक वह आपकी लौंडी और एक गुलाम लीजिये, अल्लाह अल्लाह ख़ैर सल्लाह, अगर यह दो और जाकर शामिल हुए और मुहल्ले से बू फूटी तो और लेने के देने पड़े। और बरब्बे काबा, ख़ुदा और रसूल गवाह है जो किसी और बात का ख़्याल हो। सिर्फ़ यह डर है कि अगर कल को कोई झगड़ा फ़साद हुआ, मुहल्ले वाले तो जानते हैं कि हुज़ूर के गुलामों के झुन्ड में यह भी है तो दुश्मनों पर भी झपट आने का अन्देशा है।"

"मेरा अन्दाज़ा है कि शेख़ भी यही कहेंगे।"

"यह भी बजा इरशाद होता है !"

"फिर ?" नवाब साहब ने पूछा।

"बख़्शुआ इस ख़िदमत को बहुत मुनासिब है ! वह बाल बच्चे भी रखता है और मातबर भी है। इस सरकार का क़दीम नमक ख़्वार है, बिल्कुल गोश्त पोस्त यहीं का है।"

"बख़्शू इधर तो आ।" नवाब साहब ने बख़्शू को पुकारा।

"हाज़िर।"

"वह जो लड़की और लड़का है ना, अभी ज़रा ज़्यादा शरारत और ख़ुदसरी करने लगे हैं, उनके वास्ते रोक थाम मुनासिब है। कुछ

दिन के लिये घर से निकाल दें, ताकि आइन्दा ऐसी मनमानी न करें। तुम उनको अपने घर ले जाओ और कहो कि सरकार ने तुमको निकाल दिया है। अगर कुछ दिन सीधे रहोगे तो फिर ख़ैर, मैं कह सुन कर क़ुसूर माफ़ करा दूँगा। नहीं, तुम कम्बख़्त निकाल दिये जाओगे, दाने-दाने को मुहताज होगे।"

"बहुत खूब!" बख़्शू बोला, "मुहाल है सरकार के हुक्म के ख़िलाफ़ किया जाय, पीरो मुर्शिद! अगर जान भी निकल जाय तो उफ़ न करें, हैं किस दिन के वास्ते? मगर खानाज़ाद ज़री सरकार की क़नीज़ से पूछ आए।"

"अच्छा क्या हर्ज! मगर पूछ कर जल्द आओ।"

बख़्शू वहाँ से सीधे अपने घर आया।

"अजी बी घर बसी!" उसने अपनी बीवी को पुकारा—"बात तो सुनो, आज सरकार ने बुला के हमसे कहा कि वह लड़के जो अरसा हुआ परवरिश को लिये गए थे, कुछ दिन के लिये तुम अपने यहाँ रक्खो, तो मैंने कहा सोच लूँ फिर जवाब दूँ। कहो तुम्हारी क्या राय है?"

"हटो भी!" बीवी ने झिड़का, "कहाँ का झंझट निकाला, मैं समझी कोई अपने फ़ायदे की बात है, मुझे चला है फ़िक़रा देने।" बीवी ने चुटकी बजाई, "चलिये हवा खाइये, अगर आपने उड़ाई है तो हमने भी भून-भून के खाई है।"

"यह बातें तो इस वक़्त तह कर रक्खो। बताओ सलाह क्या है? हमारे नज़दीक तो ले आना मुनासिब है। एक तो सरकार की ख़ुशी, दूसरे आख़िर जब यहाँ महीना दो महीना रहेंगे, जो कुछ खाने पानी में ख़र्च होगा सरकार ही से मिलेगा, चलो तुम्हारा फ़ायदा ही रहेगा। किसी तरह का घाटा नहीं है। यह बात नफ़ा से ख़ाली नहीं। और, तुम जानती

हो इसमें हिकमत है, फिर किसी वक़्त तुमको बता देंगे। बड़ा क़िस्सा है, चुड़ैल की चोटी हाथ आना है।"

"अच्छा ले आओ ना, मना कौन करता है ? मुल एक बात है, जो मेरे यहाँ रहेगा मैं काम ज़रूर लूँगी ! हाँ भई, सच्ची बात, सादल्लाह कहें, सब के मन से उतरे रहें।"

"शौक़ से !" बख़्शू मुस्करा के बोला, "मज़े से बेगम बन के काम लो, अब ख़ुश हुई ?"

मियाँ बख़्शू ने जाकर अपनी रज़ामन्दी ज़ाहिर की और रात को उन दोनों को अपने घर ले गए। नवाब साहब के हवास दुरुस्त हुए, इत्मीनान से रहने सहने लगे। कभी-कभी सेवती उन्हें देखने जाया करती थी। एक रोज़ जैसे ही सेवती पहुँची नजिबनिया बड़े तपाक से बोली—"आहा, आओ बाजी ! आज कई दिन के बाद नज़र आई दीन, ऐ हाँ, अब हमको निकाल बाहर ही किया, छूटे गाँव से क्या, अब हम कौन हैं जिसको पूछने कोई आए !"

"अच्छा, अब तुम सब कह लो तो मैं भी उसके दर जवाब में कहूँ।"

"अच्छा अच्छा, कहो, शौक़ से कहो। मैं कह चुकी, हम ग़रीबों का कहना सुनना क्या ?"

"भला सच बता, तुझे अपनी आँखों की क़सम, हम लोगों ने निकाला ? हम अकल खेर जग से बुरे नहीं जो अपनी क़दह की ख़ैर मनाया करें।"

"अच्छा तुम अपने दम से न सही, और तो तुम्हारे बेड़े में ऐसी-ऐसी अल्लाह की सवारियाँ महजूद हैं।"

"सच कहूँ ! यह सब करतूत उसी ढड्ढू के हैं।"

"बहिन, अपना सोना खोटा, परखने वाले को क्या दोस ? बी मुग़लानी मुक्के की आदमी क्या कर सकती अगर जो हमारे मालिक न ऐसे मोम की नाक होते।"

"हाँ यह तो सच है ? मगर नहीं, वह मुग़लानी बड़ी कतर-बेंवत की आदमी है।"

"अच्छा कहो तो कुछ हमारे बुलाने को बीवी कहती हैं ?"

"बहिन, यह तो मियाँ की मर्ज़ी पर है।"

"अब आजकल बीवी की डील का कौन काम करता है, मुँह कौन धुलाता है, बदन कौन मलता है ?"

"ऊँह ! अब तो कोई काम नहीं, जिसको कह दिया, मुल हाँ आज कल मुग़लानी की तरफ़ से कुछ दिल फीका है।"

"हाँ चलो, शुक्र है, जैसे उस पुच्छलपाई ने मुझे दूध की मक्खी की तरह निकाल बाहर किया, ख़ुदा करे उसका चूँडा मूँडा जाय, बड़ी कंगाला है। मेरा ही जिगर जानता है, मुग़लानी है, अरे कलेजा पकाती है। उसके घर में मैयत पड़े ! या पाक परवरदिगार, जैसा उसने मेरे साथ किया वैसा उसके दीदों घुटनों के आगे आए।"

"अरे अब कोसने काटने से क्या होता है ? चुप भी रहो, इसमें और भी तो बहुत सी बातें थीं जिनके चलते तुम इसके यहाँ भेजी गई।"

"हाँ वाजी, तुझे मेरी जान की क़सम और क्या बात थी ?"

"कुछ खुल के तो मैंने सुना नहीं, यही इधर उधर से एक आध बात ले उड़ी और न कोई खुल के कहता है, मध्यम में सब बातें होती हैं। मुल इतना खुला है, अंग्रेज़ बहादुर ने हुक्म लगाया है—ख़बरदार कोई अब लौंडी न ख़रीद करे।"

"तो यहाँ ख़रीद किसको किया है ? मिर्ज़ा साहब ने बुलाते वक़्त यही कहा था, चल तुझको रोटी कपड़े पर रखा दें। हाँ इतना है, दो दिन रह कर भाग न आना। मैंने कहा, मुझे जो खाने को दे तो उम्र भर वहीं पार कर दूँ।"

"वाह वा ! यहाँ तो उन्होंने दस रुपिया नगद उसी वक़्त खड़े-खड़े

लिये, बल्कि मुझे इससे याद है, मैं ही तो उस वक़्त सन्दूक़्चा बीवी के पास लाई थी।"

"ऐ है! सत्यानाश हो जाय इस मिर्ज़ा का, उसने तो मेरे हाथ पांव काट डाले।"

"इसमें हर्ज क्या है, तुम तो नावाकिफ़ हो, तुमको कोई रोक थोड़ा ही सकता है?"

"बाजी सच कहूँ, अब तो सरकार में जाने को जी नहीं चाहता। इधर से इधर ही कहीं निकल जाऊँ।"

"अरे एक दिन यह तो होना ही है, हाँ क़लाम अल्लाह क़सम, बाज़ वख़्त तो मेरा जी भी उकता जाता है, अब हम भी इसी सबिते में हैं।"

नजिबनिया ने सेवती के गले में बांहें डाल दीं, फिर धीरे से बोली—"बाजी एक बात कहें, किसी से कहोगी तो नहीं।"

"मैं भला तेरी बात किसी से कहूँगी? अपनी जवानी क़सम जो कहीं ज़िक्र करूँ।"

"बाजी देखो, अपने ही तक रखना, अभी तक दो जनों से तीसरा कोई नहीं जानता—बख़्शू आज बहुत दिनों से मेरे पीछे पड़ा है। पूरियाँ, तरकारियाँ, मिठाईयाँ ला देता है। कहता है कोई दिन कुछ खा लूँगा, दरियाव में डूब मरूँगा, अब तुम सरकार में क्या जाके करोगी? यहीं रहो, मैं तुम्हारी सब तरह ख़बर करूँगा।"

"ई, यह बख़्शू!" सेवती की आँखें फैल गईं, "बख़्शू भला बाल-बच्चे वाला आदमी, ना भाई हमारी सलाह नहीं।"

"वह तो यहाँ तक वादा करता है, चाहे इस्टाम लिखा लो, मैं उम्र भर रोटी कपड़ा देने को तई हूँ। और भई ईमान की तो यह है आज तक उसी के दम से यहाँ हमको सब तरह का चैन है, मज़े से घर

की बीवी बने खाते हैं, नहीं तो उसकी वाली ऐसी चंचल, नटखट है, दम भर तो रहने देती नहीं।"

"अच्छा तो, अभी देखो तो ऊँट किस कल बैठता है? उसको भी लगाए रहो, साफ़ जवाब न दो।"

"क्या, कोई कर लेगा? दाइयों में नौकरी कर लेंगे, पाँच छः रुपया कहीं नहीं गए।"

"मैं तो अब जाती हूँ, मूँग की दाल भिगोना है, मियाँ पहरेज़ा परहेज़ करते हैं।"

"अभी और बैठो, तुम्हारे आए ज़रा जी लगता है।"

"नहीं फाटक मामूल करने का भी वक़्त आ गया, ऐसा न हो मुवा सिपाही ज़ंजीर दे दे तो रात भर टापती फिरें।" सेवती उठती हुई बोली।

"अच्छा बहिन, अच्छी रहना।" नजिबनिया ने कहा।

× × ×

इस समय बख़्शू और उसकी बीवी में बड़ी घमासान लड़ाई हो रही थी। बीवी चिल्लाई—"सुन तो सही! यह आज अपनी बहिनिया बी नजबुन बेगम को अच्छी बड़ी सी दरपनी ला देने को पैसे अच्छी तरह निकल आए! और उस वक़्त मस्तान सुर्मेवाले ने आवाज़ लगाई, अल्लाह हम एक पैसा मिस्सी को माँगा किये, क़समें खाने लगा, किस शिम्र के बच्चे के पास एक झंझी भी हो, न देना था, न दिया, अब यह कहाँ से दाम निकले?"

"मैं कहता हूँ नसीबन की माँ!" बख़्शू दहाड़ा, "तुम अपने होश में हो? कहीं घास तो नहीं खा गई? वह बातें करती हो जिससे गदहे को भी बुख़ार आता है। शक की भी हद कर दी। आज कई दिन से उसने पैसे दिये थे। कहा था बाज़ार अगर तुम जाना तो मेरे लिये आईना ले आना। तुम जानो, मेरी भूल जाने की तो आदत है, न ख़्याल रहा, आज ध्यान आया, लेता आया।"

"चल हट मरदुए !" जोरू बोली "यह मुंह देखी बातें अपने होतों सोतों के वास्ते तह कर रख। हम से चला चकमेबाज़ी करने ? और एक आईना ! गिनाने पर आऊँ, ख़ुदा जाने कै हज़ार बातें बताऊँ। बारे छेड़ ख़ानी की मुझ में आदत नहीं, अभी साहब मेहरबानी नौचन्दी को चूड़ी वाली को किसने अपनी जेब से निकाल कर पैसे दिये थे ? यह कीपों तेल किसके लिए चला आता है ? और यह पैसा रोज़ बेगमी पान बी साहब कहाँ से खाती हैं ?"

"सुना नसीबन की माँ !" बख़्शू चिल्लाया, "क्यों किसी का सब्र समेटती हो ? जो कुछ कहो मुझको कहो। देखो इस मामले में ज़्यादा तू-तू मैं-मैं अच्छी नहीं। देखो तुम कहे चली जाती हो और मुझे ग़ुस्सा चढ़ता चला आता है।"

"अच्छा आपको ग़ुस्सा आएगा तो क्या कर लिजियेगा ? रानी रुठेंगी, अपना राज लेंगी। लो साहब, इनके पीछे अपने आप को ग़ारत कर दे, ख़ाक में मिला दे, और इनके भावें नहीं।"

इतने में नजिबनिया सामने कोठरी से पाँइचे सँभालती निकली —"देखो भई !" वह बोली, "पुकार कर कहे देती हूँ जो मेरा ज़िक्र किसी ने किया तो मुझसे बुरा कोई न होगा। प्याज़ के छिलके की तरह उतार के धर दूँगी। बन्दी कुछ निमुही नहीं। मैं भी क़सम कलामल्लाह की, ऐसी ऐसी सुनाऊँगी तो फिर मुद्दतों तक दाग़ न छोड़ेंगे।"

"बी साहब !" बख़्शू की जोरू बोली, "तुम से तो मैं कुछ कहती नहीं, भला मेरी क्या मजाल ? मैं तो बख़्शू मुर्दे की जान को रोती हूँ।"

"देखो" बख़्शू बोला, "वल्लाह, जो ज़रा उससे बात की तो इसका मज़ा चखा दूँगा, चलो तब न सही अब सही, क्या कोई मेरी... कर लेगा ! इस ज़िद पर देख तो सही हरामज़ादी तेरे सर पर लाता हूँ, चल जहाँ तक तुझसे चला जावे।"

"ले आ अपनी और कोई अम्मा बहिनिया ? एक को तो ले

आया, अब सारा चकला बसा दे, तुझ को भी बाएँ हाथ का खाना हराम है, जो अपना सारा कुनबा न ले आए। वह तो मैं पहले से समझे बैठी हूँ। मेरा माथा तो तब ही ठनका था, पहले ही तूने ख़ुश ख़बरी सुनाई थी।"

"चुप रह हरामज़ादी, क़ुत्तामा, नहीं मारे जूतों के फ़र्श कर दूँगा।"

"ऐ तू मारने वाला ग़ारत हो, तेरा जनाज़ा निकले, तेरी सूरत को मुर्दा शू ले जाए।"

"मानती ही नहीं, चरख़े की तरह चली जाती है, ले जो कम-बख़्ती आई है तो ले"—यह कह कर मियाँ बख़्शू ने जूता उतारा ही था कि जोरू कमर से चिमट गई। फिर तो अल्लाह दे और बन्दा ले। अगर एक घूँसा मियाँ बख़्शू ने लगाया तो तीन चाँटे जोरू ने रसीद किए। उन्हों ने उसके झोंटे पकड़े, उसने पट्टे लिये! औरत थी ताक़त-वर, यह अफ़ियूनी जवान, सींकिया पहलवान, चोटी हाथ से सुट से निकल गई। उधर पट्टे गए उंगलियों में उलझ, न वह छोड़ती है न वह ख़ुद छूटते हैं, अब यह गर्दन झुकाए कह रहे हैं—"अच्छा बाल मेरे छोड़ दे, देख तो आज तेरा कैसा भुरता बनाता हूँ।"

"अच्छा अच्छा, तू जूती से ठोकर मारे जा, सारा पाँव लहू लहान हो गया।"

"आज चाहे अंगरखा चूनी चूनी हो जाय, मगर तुझे आज बे दुरुस्त किए नहीं छोड़ूँगा चाहे फाँसी हो जाय।"

"क़सम जनाबे अमीर की नाक ही दाँत से उड़ा लूँगी, छे महीने को चली जाऊँगी।"

जोरू हूँ करके जो सामने से रेलती है तो उधर मियाँ पीछे को हटे, उधर पांइचे में पाँव फंसा, धड़ाम से ज़मीन पर। इस लंगर में मियाँ बख़्शू भी बाल बाँधे झुक गए। मौक़ा जो पाया तो आप ऊपर और जोरू

तले, नीचे से निकाल कर उल्टा हाथ जो मारती है तो गाल में टूटी चूड़ी का खरौंचा लग गया, भल भल ख़ून बहने लगा ।

"अच्छा हरामज़ादी !" बख़्शू दाँत पीस कर बोला, "तूने तो आज मुझे ज़ख्मी किया । मैं कहता था, क्या औरत ज़ात पर हाथ चलाऊँ, ले अब बे जान लिए नहीं छोड़ूँगा ।"

नजिबनिया ने जब देखा कि मियाँ साहब का वाक़या हुआ जाता है तो दौड़ी और छुड़ाने लगी—"हांय हांय, यह क्या है ? बस हो चुका, ऐ नेक बख़्त, क्या जान लोगी, घायल तो कर दिया, नेकी उतरे ऐसे ग़ुस्से पर ।" फिर बख़्शू का हाथ पकड़ कर बोली "तुम भी छोड़ो ।"

"नहीं नहीं बहन ! तुम न बोलो इस बीच में ।" बख़्शू की जोरू बोली ।

"तुम जाओ, बैठो, अपना काम करो, मुझे आज ठीक करने दो ।" बख़्शू ने कहा ।

"चलो चलो बस हो चुका, कोई अपने आदमी पर इस तरह हाथ चलाता है ! देखो तो तुम्हारे उनके सारे कपड़े लहू में तर हो गए, दोनों जने कैसे नहा गए ।"

"अच्छा तो वह मेरे पट्टे छोड़ दे ।" बख़्शू बोला ।

"ले, मैं क्या तुझे पकड़े हूँ !"

क़िस्सा मुख़्तसर दोनों अलग हुए । बख़्शू तो दामन से खड़े लहू पोंछ रहे हैं और बी साहब ने बैन में लग्गा लगाया । थोड़ी देर बाद चट नसीबन से डोली मगंवा कर सरकार में जा पहुँची ।

× × ×

"हुज़ूर ।" सेवती ने बेगम से कहा, "बख़्शू की बीबी की डोली आई है । कहती है मुझे कुछ नवाब साहब से और बेगम साहब से कहना है, हुक्म हो तो उतारी जाए !"

"कौन बख़्शू ?" बेगम ने पूछा

"हुज़ूर ! सरकार का ख़वास ।"

"वह तो कभी पहले आई नहीं ।"

"नहीं आई तो क्या हुआ ?" मुग़लानी बोली, "बुलवा लेने में क्या हर्ज है ?"

"अच्छा आने दो ।"

सेवती जाकर उसे बुला लाई, बख़्शू की जोरू तीन तस्लीमें बजा लाकर एक ओर खड़ी हो गई ।

"अच्छा बैठो, क्या है ? आज कहाँ चली ?" बेगम ने पूछा ।

बख़्शू की जोरू तीन तस्लीमें करके बैठ गई--

"जी बेगम साहब, बहुत दफ़ा, जी चाहा, कि अपनी सरकार में हाज़िर हुआ करूँ, मुल एक तो आपके ख़ानाज़ाद का मिज़ाज इतना ख़राब, छींकते नाक काटता है, जो बाहर निकलता है दरवाज़े की बाहरी ज़न्जीर बन्द करके जाता है, घर के काम काज में दम लेने की मुहलत नहीं मिलती !"

"अच्छा कहो ! आज क्योंकर आई ?"

"आज तो हुज़ूर के पास फ़रियादी बनकर आई हूँ, आप ही मुन्सिफ़ी कीजिए, बेअदबाना माफ़, सरकारी लौंडी मेरी सौत बनना चाहती है । वह मुर्दा भी ऐसा उस पर मरा धरा है, मजाल क्या एक बात कुछ ज़बान से निकाल सकूँ ! यह हुज़ूर की ख़फ़गी लौंडी पर ऐसी क्या हुई जो एक सौत भेजी ? यूँ ही आए दिन की तू-तू मैं-मैं, दाँता किट-किट से सूख कर काँटा हुई थी, उस पर और ईज़ार हुआ ।"

"होश की दवा करो औरत ! मेरी लौंडी ऐसी नहीं । तू अपने ख़ाविन्द को रोक नहीं फिर मुझसे बुरा कोई नहीं जो मेरी लौंडी में किसी तरह का दाग़ आया ।"

इतने में इत्तफ़ाक़ से नवाब साहब तशरीफ़ लाए, "क्या है बेगम ?" उन्होंने पूछा, "यह कौन नेकबख़्त हैं ? कहाँ से आई हैं ?"

"यहीं से आई हैं, बख़्शू की जोरू हैं ?"

"हाँ तो यह कहो, हमने पहले कभी नहीं देखा।"

बख़्शू की जोरू ने उठ कर तीन तस्लीमें कीं—"सरकार को खुदा सलामत रक्खे, आज तो लौंडी फ़रियाद लेकर आई है, ऊपर ख़ुदा है और नीचे हुज़ूर हैं, अब और किसके पास जाकर फ़रियाद करूँ ?"

"फ़रियाद कैसी, कहो तो।" नवाब साहब ने पूछा फिर बेगम की ओर मुड़े, "क्यों बेगम यह क्या मामला है ?"

"पूछो न ! नेकबख़्त कह जो कुछ कहना हो।"

"हुज़ूर क्या अर्ज़ करूँ ! सरकार के ग़ुलाम ने आपकी लौंडी पर आजकल ऐसा ज़ुल्म कर रक्खा है जैसा ख़ुदा दुश्मन को भी नसीब न करे। उठते बैठते मारपीट कोसने मौजूद, जहाँ कोई बात हुई, 'बीवी अपना चलता धन्धा करो।' इधर जब से सरकार से लौंडी ले गया है तब से उसकी बदौलत जो इस जनम जली पर आफ़त है खुदा पांवतले की च्यूँटी को भी नसीब न करे।" यह कह कर बख़्शू की जोरू आंचल से आँसू पोंछने लगी। फिर बोली, "हुज़ूर बूढ़ी होने को आई, जो जीते रहते कई बच्चों की माँ होती। और आज ज़रा सी बात पर उसने भुस करके ऐसा मारा कि सारे बदन नीले पड़ गए। हुज़ूर घर में माँ बाप ने तो हाथ उठाया नहीं उस मुर्दे ने आज मुझे बिल्कुल पस्त कर दिया।" उसके आँसू तेज़ी से बहने लगे।

"यह तो अजीब क़िस्सा मालूम हुआ, अच्छा नेकबख़्त रोने से क्या हासिल, उसकी रोक थाम हुई जाती है !"

बख़्शू की जोरू ने इतनी शह जो पाई तो फिर क्या था ? फ़रमाइशें शुरू कर दीं—"हुज़ूर हाँ ! सरकार उसको बुला कर ख़ूब ज़लील करें। कई बार मेरा जी चाहा यह मुक़दमा सरकार को कहला भेजूँ, मुल इसी

डर के मारे, सुनवाई हो न हो, अपनी बात भी गई--ऐ हुज़ूर ! जब से यहाँ से उसको ले गया है, वह अपने आपे में थोड़ी है। सरकार के काम में भी जी नहीं लगता, न घर की ख़बर है। समझाती हूँ, बुझाती हूँ कि जो सरकार में बात पहुँचेगी तो बड़ी ग़ज़बी आयेगी, निकाल बाहर किया जाएगा, बरतरफ़ हो जाएगा, बाल बच्चे, जोरू, लड़के वाला आदमी ऐसा रंग अख़्तियार करेगा, तेरा कहाँ पता लगेगा ? एक तो मुए नशापानी में सब घर की गिरहस्ती उड़ाई। तनख़्वाह पाता है उसी में उड़ती है। जो ऊपर से चार पैसे मिलते हैं चन्डू बम्बू में फूँकता है। भला कब मानता है ! और फिर मेरी बात, अब हुज़ूर बुलवा कर मेरी एक की एक करा दें। मैं अब उस घर में न जाऊँगी जिसमें नजिबनिया बिराजती होगी। मैं उस दरबे ही को फूँक दूँगी। अब या तो वह सब बातें क़ब्ल सूफ़ी की छोड़ें नहीं तो मुझसे उनसे काम नहीं। मेरी उनकी भरी कचहरी में हो जाएगी। समझूँगी राँड, बेवा हो गई। लड़की उनकी है, अपने पास रक्खें, मुझे कुछ उसकी ऐसी परवाह नहीं है। वह जानें उनका काम जाने।"

नवाब साहब ने बेगम से कहा, "यह तो बहुत बुरी बात है, बड़ा ताज्जुब है हमको। अस्लन अभी तक इसकी ख़बर नहीं थी। यह शख़्स इतना लुच्चा है, बुला के बर तरफ़ कर देना चाहिये।"

"बैठो भी !" बेगम बोलीं, "तुम भी इन लोगों के कहने में आते हो, ख़ुदा जाने क्या मामला होगा ! सुनते हो इस औरत की बातें, वह तलाक लेने को मौजूद है। अरे यह कमीने हैं। इनकी ऐसी ही बातें हुआ करती हैं।"

"नहीं साहब कुछ भी हो, अब इसका वहाँ रहना किसी तरह अच्छा नहीं और उस मर्दूद को अभी बरतरफ़ करता हूँ।"

"अच्छा अच्छा ! बर तरफ़ करने से क्या है ? वह तुम्हारा नौकर है। हर वक़्त तुम्हारे अख़्तियार में है। जब चाहो निकाल बाहर करो। किसी काम को मना नहीं करती। मगर पहले बात तो सोच लो।"

"सुबहान अल्लाह ! अब हम ऐसे अहमक हैं, कुछ समझते ही नहीं, बस अब इस मामले में अपनी अक्ल तह कर रखिये ।"

"बेगम साहब, बेगम साहब !" मुग़लानी बोली, "जाने दीजिये, उन्हीं की ख़ुशी कीजिए। अच्छा हुज़ूर, आप मालिक हैं, जैसा मुनासिब जानिये कीजिए। मगर पहले छान बीन कर लीजिये। हाकिम भी मुक़दमा सुनता है, उज्र माज़रत सुन लेता है, और लौंडी को क्या है ? आज शाम को निगोड़ी बुला ली जाएगी !"

नवाब साहब भी कुछ ठंडे हुए, कुछ बेगम साहब भी समझकर चुप हो रहीं। बख़्शू की जोरू भी थोड़ी देर के बाद डोली मँगा चलती हुई। मगर एक मुँह बोली ख़ाला के यहाँ उतरी, घर न गई।

इधर मियाँ बख़्शू का हाल मालूम हुआ कि जोरू ने ख़ूब मरम्मत की, सेरों हल्दी लगाई, घर में पड़े हैं। मगर नजिबनिया और बख़्शू को ख़बर भी पहुँच गई कि जोरू ने वहाँ जाकर क्या आग लगाई, और आज रात को दोनों में अलगाव होगा।

इतनी फ़ुरसत में जो कुछ मियाँ बख़्शू और नजिबनिया के मशवरे हुए वह क़िस्से में आगे चल कर खुलते जायेंगे। यहाँ सिर्फ़ इतना काफ़ी है कि शाम को सेवती गई और नजिबनिया को बुला लाई।

७

रात के दस बजे हुए थे, मियाँ बीवी लेटे हुए थे और सेवती चुप्पी साधे पड़ी थी।

"बेगम ! बेगम !" मियाँ बोले, "अजी क्या अभी से सो गईं ? भई तुम्हारे ख़र्राटे उलझन बढ़ाते हैं।"

"ऐ तो कौन सोता है ? कहो क्या कहते हो ? मैं तो अभी चुप पड़ी हूँ।"

"सेवती, तू खाना खा चुकी है ?" मियाँ ने पूछा।

"जी हुज़ूर खा लूँगी !" सेवती बोली।

"अच्छा तुम जाओ, खाना खाओ !"

× × ×

"कहिये आजकल वह आपकी नजबुन नहीं दिखाई देती ?" मियाँ बोले।

"ऊँह ! होगी मालज़ादी। सारा घर नाहक़ वे नाहक़ को उस निगोड़ी के पीछे पड़ा हुआ है !" बीवी मुँह बना कर बोलीं, "जनावे अमीर की क़सम अगर उससे सलीके से काम लिया जाय तो ऐसी अच्छी लौंडी हो जिसे कहते हैं।"

"इसमें क्या शक ! एक आप ही उसकी क़द्रदान बाक़ी हैं, वह कहिये ख़ुदा ने पर साल सिर्फ़ इतनी बात के लिये तो क़हत डाला ही था। एक ऐसी लायक़ होशियार सलीक़े की औरत गली-गली की ठोकरें खाती फिरती थी, इस बहाने एक अपनी क़द्रदान तक पहुँच सकी।"

"चलो ! तुमको ताना देने के सिवा और नहीं आता।"

"ख़ैर, यह तो हँसी थी, आज दोपहर को हमने अजीब हाल देखा।"

"क्या ?" बेगम ने पूछा।

"मैं ऊपर से आता था कि बख़्शू से नजिबनिया बातें कर रही थी, और तो मैंने कुछ नहीं सुना, मुफ़्त की मेरी जान बनाई।"

"तो क्या हुआ, लाख बात ! आदमी हँसी में कहता ही है, बस तुमको ऐब ही दिखाई देता है बात बात में।"

"नहीं, इस वास्ते मैं तुमसे कहता हूँ, ज़री इस औरत से होशियार

रहना, आदमी का एतबार क्या ? तुम तोशेख़ाने की भी कुंजी अक्सर उसी को दे देती हो, मोदीख़ाने में भी चली जाती है—बख़्शू आदमी नशे पानी वाला है। उसका एतबार ही क्या ? सब तरह के लुच्चों, शोहदों से मेल मुलाक़ात रखने वाला है ! और यह भी जानती हो मियाँ का चार रुपया ख़ुश्क में होता ही क्या है ? फिर बाल बच्चे अलग। मुझे ख़ौफ़ है कि कहीं यह बी साहब अपने यार को मेरा सारा घर मूस कर न दे दें।"

"बस ! तुम्हारे ऊपर यही दूर अन्देशी ख़त्म है। मजाल है, एक तिनका भी वे हमारे हुक्म बाहर निकल जाय और यह ज़रा ज़रा सी चीज़ पर नज़र नहीं रखती—मियां ! चाहे बुरा मानो या भला, यह तो मुझ से होगा नहीं कि मोदीख़ाने भी ख़ुद ही जाऊँ। तोशेख़ाने भी हर दफ़ा आप ही जाऊँ। ऐसी तो मेरी आत्मा है नहीं, न मैंने अपने यहाँ कभी देखा, न जानूँ ! हाँ अब तुम्हारे क़ाबू में हूँ जो कहो करूँ।"

"अजीब समझ की आदमी हो ! अरे साहब, अपनी ख़बरदारी होशियारी को कहता हूँ। या और ख़ुदा नख़्वास्तः मेरा कोई मतलब है।"

"अरे। तुम मुझे क्या समझे हो, मैं तो यही हैरान हूँ ! अफ़सोस किसी ने आज तक मुझे पहचाना नहीं ! अरे मैं तो उड़ती चिड़िया के पर गिनती हूँ। मुझसे कोई उड़के कहाँ जायेगा ? एक तो यूँ ही किसी ने दुश्मनी में कह दिया है, नहीं क्या हँसी की किसी की मनाही है ? आख़िर इन कमबख़्तों के भी दिल है कि नहीं, देखियेगा कुछ दिन बाद उनका दिल आपको कैसे कुएँ झंकवाता है ! किसी दिन वह हाथ मारेगी।"

"जी बिल्कुल ठीक।"

"अरे नहीं तो यह करो। एक बात है चाहे बुरा मानो, उसमें लाखों ऐब एक तरफ़ और यह ख़ूबी एक तरफ़। नीयत उसकी ख़राब नहीं। लाख रुपये की चीज़ रक्खी होगी, मगर उसकी नीयत जो तुम चाहो डाँवा डोल हो, क्या मजाल ? अब की जब से आई है तुम जानो

मेरा सारा काम वही करती है। और सब तरफ़ की चीज़ें उसके हाथ से रखवाती उठवाती हूँ, क्या मजाल एक रत्ती का तो बल पड़े।"

"ख़ैर साहब तुम जानो, यह बातें ऐसी हैं, इसका तजरबा तुम्हीं को हो सकता है! झूठ सच बोलो। हम सिवाय हाँ, ठीक कहने के और कर भी क्या सकते हैं? अगर हम तजरबे का इरादा करें भी तो तुम बेचारी को अभी कल ही सर मूंड कर गदहे पर सवार करो।"

"अख़्ख़ाह? तो अब मालूम हुआ, यह बात है! चलो अच्छा तो है, तुम तो एक हालो हलाल भी है, लौंडी की नीयत नहीं, आप ही की नीयत सलामती से डाँवा डोल हो चुकी है।"

"ले। अब लगीं वाहियात शाख़ें निकालने, अब सोने दो।"

×　　　　×　　　　×

बख़्शू और नजिबनिया बातें कर रहे थे।

"आजकल तो वल्लाह बड़े बेख़र्चे हो रहे हैं!" बख़्शू बोला, "मिर्ज़ा की दूकान पर नहीं जा सकते। बारह आने पैसे हो गए, वह एक छींटा भी नहीं देते।"

"अभी अठवारा न पूरा हुआ होगा तुझको एक आरसी दे चुकी हूँ कि जा बेच ला। और आज फिर वह नख़रा! कुछ अपनी अख़्तियारी बात तो है नहीं, जब मौक़ा मिलता है हाथ चालाकी कर जाती हूँ। रोज़ जो घी चुपड़ी लिया चाहो तो दूसरे दिन सर मुंडा जाय। हम तो दाल में नमक खाया चाहें।" नजिबनिया ने कहा।

"अजी यह तो रहेगा, अब यह बतलाओ, सब देख भाल लिया, कहाँ कहाँ कौन असबाब रक्खा है और उस बात को जो कहा था उसकी भी कुछ फ़िक्र की?"

"तुम जानो यह बातें। मुँह का निवाला तो है नहीं! असानियत से यह बातें की जाती हैं। पहले सब पक्की पोढ़ी कर लें, मौक़ा भी हाथ आए, उस वक़्त तुम से कहें। तुम सब कही बदी रक्खो, वह लोग तय रहें, जब मौक़ा लगे फ़ौरन ख़बर कर दें।"

"सुबहान अल्लाह। घड़ी भर में घर जले अढ़ाई घड़ी भद्दरा। आज तक मौक़ा ढूँढ़ेगी यहाँ वाक़या हो जायगा। आख़िर मरते वक़्त सुबीता होगा, आज कल जो मामला हो जाता अंधेरी भी थी, सब काम मज़े से हो जाते।"

"अच्छा यह तो बताओ के आदमी शरीक हैं, और कौन कौन हैं, अपनी बात पर सब अटल हैं? देखो ऐसा न हो कल कदान को ख़ुदा नख़्वास्ता दुश्मन के कान बहरे कोई वारदात हो गई तो एक दूसरे का नाम तो न लेंगे?"

"वाह! तुमने एक ही कही, ऐसा क्या कहीं बच्चों का खेल है और फिर उन लोगों में जो ऐसी ही बात हो तो कोई किसी का क्यों साथ दे? उन लोगों का अगर गला काट डालो तो क्या मानी कि एक हर्फ़ भी ज़बान से निकले।"

"अच्छा तो मैं कहती हूँ, अगर तुम अकेले काम करो, क्या नुक़सान हो!"

"यह जान जोखम कहीं अकेली होती है? दस पाँच मिलकर यह काम होता है।"

"अच्छा अपने इस काम को तुम जानो, मौक़ा तो आने दो।"

"अब यह बताओ माल असबाब किधर है?"

"तुम जानो असबाब सब एक जगह तो है नहीं। एक चीज़ इधर पड़ी है और एक उधर पड़ी है। सरकार के कपड़े तुम जानो कुछ बाहर रहते हैं, कुछ और असबाब पेंचवान, एंचवान, दस्दगियाँ, चाँदी का असबाब, उगाल दान, ख़ासदान, चिलम, अलम, टपके--ऐसी चीज़ें एक लोहे के बड़े सन्दूक़ में रहती हैं।

"और मुझे अच्छी तरह ख़याल नहीं, हाँ हाँ, याद तो आया उसमें ख़ुद ही कलफ़ बना नहीं है और जो इधर बाहर को बाईं तरफ़ कमरा है उसमें बेगम साहब के कपड़े हैं जो रोज़ पहनती हैं और भारी कपड़े मैंने

देखे नहीं, सुनती हूँ कि उसी के पास दूसरी कोठरी में हैं। एक जगह हो तो कहूँ, चार चीज़ें इस सन्दूक़चे में हैं, दो उसमें हैं। ले अब तुम जानो, करनफूल तो आज महीना होने को आया बीवी के कान में है। जिसमें रुपया पैसा रहता है कुछ उसमें है जिसमें इत्र, जाफ़रान, मुश्क रक्खा जाता है।"

"वह सन्दूक़चा कहाँ रक्खा है?" बख़्शू ने पूछा।

"इत्रदान सामने की दालान के ताक़ पर है और कुछ ज़ेवर तोशे-ख़ाने के अन्दर। एक बड़ा भारी लकड़ी का सन्दूक़ है, पहिये लगे हैं उसके अन्दर कई एक छोटी-छोटी सन्दूक़ची हैं उनमें वह भी रक्खा है। उसमें भी जड़ाऊ ज़ेवर हैं और दुशाले रुमाल की आलमारी वहीं है।"

"अच्छा बताओ वहाँ तक पहुँचने की क्या तदबीर है, भला सेंध हो सकेगी?"

"ऐ वाह! इतना सब कुछ समझाया, इतना भी न समझे, भला कौन सेंध कहाँ तोशा ख़ाना, अरे कुछ अहमक़ हुआ है, वह तोशाख़ाना कोठे पर है या कहीं नीचे?"

"अच्छा, बताओ तो किधर है, तुम आप ऊल जलूल बताती हो, अच्छा ले अब सिरे से बता चलो।"

"अब जैसे तुम डेवढ़ी से घुसे तो बाईं तरफ़ जो सेहनची के ऊपर के कमरे हैं उनमें से सब से पीछे जो कमरा है उसी में यह सब है।"

"भला उसकी छत पर कैसे पहुँचेंगे?"

"अन्दर होकर रास्ता है और तो मैं जानती नहीं।"

"अच्छा अब कल तुम ज़री ऊपर के बड़े कोठे पर खड़ी होना। उस वक़्त हम देख के अपनी तदबीर सोच लेंगे। अगर बन पड़ी तो छत काटेंगे और ऊपर ही ऊपर माल उड़ा देंगे। कोई कानों कान ख़बर न होगी। हाँ ख़ूब याद आया, पिछवाड़े एक मकान भी तो किसी का था! आजकल ख़ाली हो तो बस मामला चौकस है।"

"अच्छा तो अब जाने दो !" नजिबनिया उठती हुई बोली ।

× × ×

नवाब साहब के मकान के पिछवाड़े चोरों का पूरा गिरोह इकट्ठा था । रात के दो बजे थे ।

"अबे बक्सू ! भई क़सम जवानी की, अंधेरी में क्या मौके गठेंगे ! अबे किधर गया ? बताता नहीं, साले धरवायेगा तो नहीं !" कोई बोला ।

"अबे चुप !" बख़्शू ने जवाब दिया, "क्या बकबक लगाई है ? इस मकान के कोठे पर सब चढ़ो, मेरा सब देखा पड़ा है, सीधी राह है ।"

"अभी तुम नीचे रहो, हम सब ऊपर जाते हैं ।" रज़ा ने कहा ।

करीम, रज़ा, देवी, बख़्शू के पीछे कोठे पर आये ।

"यह दीवार है !" बख़्शू ने कहा, "ताक पर पांव रख कर उस पर रहो, बस फिर आगे महल की दीवाल है ।"

"अबे तू ऊपर तो चढ़, हमी को वाला बताता है ।" करीम बिगड़ा ।

"अच्छा ! यूँ ही सही, ले आओ, अबे बेलचा कमर से गिरने न पाये, ले यार कोई और आओ, दीवार ऊँची है ज़री ।"

"अबे उजार पास है !" ननकू बोला, "बजरी सा खोद ले, उँगलियाँ टिक जांय, फिर तड़प के ऊपर हो रहना ।"

बख़्शू खोद ही चला था कि कान्सटेबिल ने आवाज़ लगाई, "भला जवान भला !" सब अपनी अपनी जगह पर सिमट रहे । और बख़्शू भी दीवार से सीधा चिमट गया । ज़री देर के बाद दीवार खोद और पंजा टेक उचकता जो है तो बड़ी छत पर है ! फिर तो रस्सियों के सहारे सब कोठे पर थे ।

"ले बच्चा किधर गये ? बताओ तुम्हारी वाल्दा शरीफ़ कहाँ पत्ता दे गई !" करीम बोला ।

"यार करीम, तुम्हारी टट्टे बाज़ी हर जगह भली नहीं मालूम होती ! आगूवार मिट्टी का प्याला छत पर रक्खा होगा, बस वही जगह है ।"

"अबे मिला मिला, यह देख, प्याला धरा है।" ननकू ने कहा।

"बस ले बस, यही कोठरी है।" बख़्शू खुश होकर बोला।

"बस रात तो यहीं गुज़री, एक छत काटी और बेटा बक्सू को ले के कुछ नीचे जांय!" करीम ने कहा।

"अब कोई चिड़िया का हामी नहीं भरता; अजी हम महजूद हैं। ले चलो मियाँ बक्सू", ननकू आगे बढ़ा।

"ना भाई! मैं ना जाऊंगा, कल कदान को पकड़ धकड़ हो तो मैं घर का आदमी धरा जाऊँ।"

"सिड़ी है, बारे बात पक्की की। अच्छा ननकू और हम चलते हैं; अबे ज़ीना खुला होगा, यही है न?" करीम ने पूछा।

"हाँ, उसने तो कह दिया था मैं खुला रक्खूँगी!"

ननकू और करीम नीचे गए। इत्तफ़ाक से दरवाज़ा बन्द था। करीम ने निकाल कर बड़े चाकू से दाहिने बाज़ू की दो ईंटें खिसकाईं। हाथ डाल के टटोला, तो कुन्डी मिल गई। खट से खोल दी। फिर क्या था? सेहन मकान में थे, मगर थोड़ी दूर आगे बढ़े होंगे कि एक औरत ने जो पलंग पर चित लेटी थी करवट ली और इनकी तरफ़ पीठ करके ख़र्राटे लेने लगी। चोर का दिल कितना! वे उलटे पाँव फिरे।

"अबे बक्सू, अबे बक्सू! कुछ छुट गई?" ननकू बोला।

"कटी क्या, यह बड़ा बग़ारा, अबे देख।" बक्सू ने कहा।

"अरी बड़ी ख़ैर गुज़री!" करीम ने ठंडी सांस ली, "एक चुड़ैल ठीक वहीं पलंग बिछाए लेटी थी, शायद दरवज्जे की खटकार से या क्या? ज़री कुनमुनाई, बारे मुंह फेर के सो रही।"

"अहा वह तो वही थी, आज वह वहीं सोने को कहती थी। ले दियासलाई लाना अब झाँप आ गई।" बख़्शू बोला।

"यह तो इससे काटो न। लोहा तक हो तो यह उड़ा देगा", करीम ने राय दी।

देवी ने दियासलाई और कोयला दिया और झाँप जला कर रास्ता बनाया गया।

"भाइयो ! अब एक कंगुड़ा नीचे उतरें।" रज़ा बोला, "थोड़े में यह कि देवी ने रस्सी के सहारे नीचे उतर कर दियासलाई से बत्ती जलाई और ख़ूब ख़ूब तोशेख़ाने की छानबीन की।"

"करीम मियाँ हो, ले लो, रस्सी उठाओ, सन्दूक़ची लेव।" देवी ने आवाज़ लगाई।

"अबे मैं अभी आया !" करीम ने जवाब दिया, "देख सुबीता किये लेते हैं। माल है, अब वाले बक्सू, देबी और करीम ने तो यह सलाह की कि बड़े सन्दूक जाएँगे उनके ताले, कुन्जी, कट्टुवा, सन्सी और पेच से तोड़ कर असबाब निकाला जाय।" ऊपर ननकू और बख़्शू ने रज़ा को पड़ोसी के मकान की छोटी दीवार पर भेजा। अब पिछवाड़े वाले मकान में नीचे तो इलाही, कोठे पर रज़ा और बड़ी छत पर बख़्शू और तोशेख़ाने में करीम और देवी इस तरह जगह जगह मुक़र्रर हो गए जैसे उस्मानी पाशा पलौना में फ़ौज तैनात करते हैं और हुज़्ज़त, लगा माल चलने। जितने सन्दूक खुले और टूट सके सब का माल ढो डाला। रज़ा, करीम, बख़्शू नीचे असबाब समेटने को उतरे। पहली कार्रवाई यह हुई कि चिराग़ गुल हो गया। दो चार चीज़ें ले चले थे कि मुग़लानी के पलंग से ठोकर लगी, उसकी आँख खुल गई और चोर चोर का ग़ुल मचाया। अब चोरों में भगदड़ मची और सब कोठे पर पहुँचे।

"यार जगहर बुरी हुई। मसान न चला नहीं तो ख़ूब माल चीरा होता।" करीम बोला।

"अबे बक्सू तू कहाँ चम्पत होता है ?" रज़ा ने पूछा

"अभी आया !" यह कह कर बख़्शू झटपट यारों समेत उसी रास्ते से उतर कर पहुँचा। मकान के बाहर के हिस्से में डेवढ़ी के क़रीब फूस का बंगला था। झपाक दियासलाई खींच न देखा आव न ताव, आग लगा ही तो दी ! थोड़ी देर सुलगते सुलगते भक भक, चटाख़ पटाख़ धड़

धड़, बगंला लगा जलने । जब ख़ूब लपक उंची हुई और गर्मी फैली तो फिर गुल था, "आग लगी आग लगी, लेना, लेना, पानी लाओ, अरे जाफ़र दौड़ियो, मद्दू लेना, मुहल्ले वालों को आवाज़ दो, तू चल मैं चल।" एक हंगामा बर्पा हो गया। बाहर के मर्द घर की औरतें सब उसी को देखने पहुँची। यहाँ सारा मकान ख़ाली और मुग़लानी और सेवती चोर चोर करती हैं। कोई नहीं सुनता।

"अबे बख़्शू करीम बोला बच्चा जत्थे से अलग हुये जाते हो। क़सम बारह आने की बिगड़ जायगी।"

"अबे घास खाई है।" बख़्शू बड़बड़ाया "छप्पर में आग बुताने गया था। सारा मुहल्ला उसी तरफ़ है, ले अब माल ले चल।"

सारा माल आसानी के साथ अपनी जगह पर इत्मीनान से पहुँचा, कोई परेशानी नहीं हुई।

"अरे लोगों क्या ग़ज़ब है!" मुग़लानी चिल्लाई, "चीखते-चीखते गला बैठ गया कोई सुनता नहीं। अरे चोरों मूंडी काटों को कोई नहीं पकड़ता!"

"कहाँ कहाँ, अरे कोई मर्दों को आवाज़ दे दो!" बेगम बोलीं।

"नवाब साहब तो बाहर आग बुझवाते हैं, रास्ता बन्द है, मेरी कोई सुनता ही नहीं, दो दफ़ा हो आई!" नजिबनिया ने कहा।

"अरे देखो कुछ गया तो नहीं!" बेगम घबरा कर बोलीं।

"अरे छोकरी चिराग़ जला!" मुग़लानी ने डपटा, "आज चिराग़ भी बढ़ गया!"

चिराग़ जलने पर चीज़ें देखी गई। मुग़लानी के सिरहाने से हुस्न-दान नदारद, तस्ला और लोटे, सुबूदान ग़ायब, ताक़ का सन्दूक़चा नहीं। कमरे खोल कर देखे गये, उनका असबाब छुवा तक नहीं गया था।

उधर बाहर ख़ुदा ख़ुदा करके आग बुझी, जान में जान आई। अब जो नवाब साहब अन्दर तशरीफ़ लाये तो नया अफ़साना सुना।

"कितनी देर, हुई आग लगने से पहले या बाद?" नवाब ने पूछा।

"ऐ हुज़ूर, मैं अर्ज़ करूँ। वही मैंने चोर-चोर का शोर मचाया था कि उधर आग-आग का हल्ला हुआ, मैं तो जानूँ उन्हीं में से किसी ने लगा दी।"

"हाँ कुछ अक़्ल काम नहीं करती, वहाँ आग का क्या काम?" नवाब साहब धीमे स्वर में बोले।

"हुज़ूर पहले तो मैं ही चौंकी थी, मैं तो बड़ी देर से पुकार रही थी!" नजिबनिया ने कहा।

"तू बाद को उठी है।" मुग़लानी उसे घूर कर बोलीं।

"जी नहीं, बी मुग़लानी साहब पहले मैं बोली।"

"वाह! जब मेरी आँख खुली है, सारा घर सोता था।"

"अच्छा! इस बहस से क्या मतलब? कोई बाहर जाके मद्दू को आवाज़ नहीं देता, अभी तो सब लोग मौजूद होंगे। ढूँढ़ तो लें, और साहब आए किधर से?" नवाब ने पूछा।

"हुज़ूर कोठे पर से जाते तो मैंने देखा!" मुग़लानी बोली।

"अरी सेवती! लपक के बाहर से लालटेन तो ला, मैं ऊपर जाता हूँ।" नवाब साहब बोले।

"और लोगों को ऊपर चढ़ाओ, तुम्हारे बग़ैर क्या हर्ज है?" बेगम ने कहा।

"नहीं साहब मैं जाता हूँ।" नवाब बोले।

"हम लोग किस वास्ते हैं, आपका जाना मुनासिब नहीं। मैं तो हुज़ूर को इस वक़्त न जाने दूँगी, चाहे नाराज़ हो लीजिये।" मुग़लानी ने कहा।

"सुबहान अल्लाह !" नवाब साहब व्यंग्य से बोले, "क्यों कोई नया होगा, या मुझे आपने छः महीने का बच्चा मुक़र्रर किया, मैं ऐसी वाहियात बात को नहीं मानता।"

इतने में लालटेन आई, और नवाब साहब चले ही थे कि मद्दू ने आवाज़ दी—"हम हाज़िर हैं, पर्दा हो जाय तो हम लोग कोठे पर जांय।"

नवाब साहब भी बेगम साहब के साथ पर्दे में चले गये और बी मुग़लानी हाथ निकाल कर लगीं बताने—"उधर बेटा, उधर गए, ऐ लो जहाँ तुम खड़े हो, उसी तरफ़ गए हैं।"

मद्दू वग़ैरा ऊपर से आकर बोले, "हुज़ूर तोशेख़ाने की भी छत काटी है।"

"अरी नजिबनिया लाना।" बेगम ने आवाज़ दी, "कुंजी का गुच्छा तो लाना, देख प्यारी पाजामे के कमरबन्द में था।"

अब कोठरी का ताला तो खुल गया मगर किस को अन्दर जाने की हिम्मत नहीं पड़ती।

"बी मुग़लानी बढ़ो !" बेगम ने उकसाया।

"बी मुझसे तो अन्दर नहीं क़दम रक्खा जाता।"

"अरे सेवती तू जा !"

"सदक़े गई, बोटी लरज़ गई।" सेवती बोली।

"माजअल्लाह ! कैसे लोग हैं, चलो हम चलते हैं, लाओ चिराग़।" नजिबनिया चिराग़ लेकर अन्दर चली गई और वहीं से बोली—"ऐ हुज़ूर, यह बड़ा सन्दूक खुला पड़ा है, ऐ है, यह क्या ? ख़ुदा गारत करे मुओं को।"

"अरे यहाँ का सब असबाब ऊपर ले गए ! वह देखो लोहे का सन्दूक़ तो नहीं खोला !" नवाब बोले।

"नहीं हुज़ूर नहीं, बारे जगह से आगुवा ज़री सरकाया था।"

"और कमरे तो देखो।" नवाब ने कहा।

"हुज़ूर, यह काम तो किसी जानकार का है। बाहर का आदमी बे किसी के बताये क्या जाने?" मुग़लानी बोलीं।

"ख़ुदा की मार इन चोरों की जान को, यह उस आलमारी से थान अपनी कफ़न के लिये ले गए। अल्लाह करे हाथों में कीड़े पड़ें। उसी तरह उताने चले जाएँ।" सेवती कोसने लगी।

"या ख़ुदा इनका जनाज़ा निकले।" मुग़लानी ने कहा—"क़सम प्यारे हुसैन की, अलम पटके के चोर मुए, ग़ारत गए कुत्तों, कौवों की मौत मरेंगे, हज़रत अब्बास का अलम टूटेगा।"

"ख़ुदा की मार इनकी जान को, मुए मोल लेने वाले दुनिया के पर्दे से नापैद हो जांय। अरे इस तरह साफ़ उड़ा ले गए जैसे उन्हीं के हाथ का रक्खा हुआ था। लो हम बरसों के रहने सहने वाले, इन असबाबों से जानकार नहीं थे। मैं जानती हूँ, इन चोरों के पास कोई इसका भी जादू होता है, सब चीज़ें मालूम हो जाती हैं।" नजिबनिया बड़बड़ाती रही।

"अरे मेरे पेट में तो ऐसी हौल समाई कि जान आ गया। जी डूब गया, घिग्घी बँध गई, मुँह से आवाज़ नहीं निकलती थी, चू-चू-चू कह के रह गई।" नजिबनिया फिर बोली।

इसी प्रकार रात भर चख़चख़ चलती रही, लोग अपनी अपनी बुद्धि लड़ाते रहे, कौन्सिलें गर्म रहीं। सुबह को हवलदार अपने चेले चांटे ले के चौकी से चले।

"मियाँ रमजान हो, नवाब साहब केर चोरी भई, चलैया हो चलो।" हवलदार बोले।

"का हवलदार साहब नकबजनी?" माता बदल कान्सटेबिल ने पूछा।

"छत काटी गई और आतसजनी भई, चलो मियाँ हूरन का पुलाव कलिया तो खूब मिली।"

"अजी तो क्या तुमको पूरियाँ न मिलेंगी ?" रमज़ान कान्सटेबिल बोला।

"अरे हम पच का खुस करे का बड़ा दिल चाहे, दुइ चार में खुस थोड़े होत हैं। इसपिट्टर से मुलाक़ात है, हौ अद्दिया हैं। अच्छा ले अब बतियाए लेव। चला चाही। सुराग रसानी ससुर हमार जिम्मे पड़ी। तुम जानो, परोती हो। सारा शहर कंगाल होइगा, मंहगी बड़े बड़न का लिफ़ाफ़ा खोल दीस। फिर तुम जानो, कमाई धमाई केर बीच मारा गया। दुई दुई बेगम साहब रहा चाहें, चार पाँच सुनाओ, मियाँ चन्डू जरूर पिया चाहें, अफ़ीम और खाएँ, फिर आवै कहाँ से, ससुरी बुढ़िया महतारी, नौकरी करत-करत चोरी कराए देत है, नौकर रखत बेरियाँ हवलदार साहब ससुर का कोई नहीं पूछत, अब चोरी भई तो हवलदार साहब का भुगतै का पड़ा, हमारा सींग जाने," हवलदार इसी प्रकार बड़बड़ाते हुए डेवढ़ी पर जा पहुँचे।

"वे तनिक नवाब साहब का इत्तला कर देव।" हवलदार बोले।

"मियाँ का ख़बर कर देव !" एक कान्सटेबिल ने कहा।

"ऐ हाँ और का !" हवलदार बोले।

नवाब साहब तशरीफ़ लाये और चोरी का संक्षिप्त हाल बयान करके बोले--"असबाब की फ़ेहरिस्त पहले लिखना चाहिये।"

"और काले मुन्शी जी, तुम फ़ेहरिस्त लिख चलो।" हवलदार ने कहा।

"असबाब तो बहुत है, और जा बजा पड़ा है, इस वास्ते कि सब चीज़ें याद नहीं। सब ही तरह का असबाब रक्खा था, जो जो याद आता जाएगा, बता दिया जाएगा।"

"साहब जो आवे आवे, ऐन सोच विचार के लिखाय देव।" हवलदार ने राय दी।

नवाब साहब अन्दर आकर बोले, "थाने के लोग आये हैं, और हमसे असबाब की फ़ेहरिस्त माँगते हैं, बताओ क्या क्या लिखा जावे ?"

"क्या ख़ूब !" बेगम ने मुँह बिचकाया, "होश की दवा करो, अब यहाँ कुछ याद है, ख़ुदा जाने कौन कौन चीज़ रक्खी थी, मुँह ज़बानी क्या बताया जाय ?"

"आख़िर कुछ तो उन्हें लिखा देना चाहिये, फ़ेहरिस्त तो लिख ली जाय, आगे जो याद आ जायगा फिर लिखा देना, आख़िर पुलिस वाले हैं, इनको क्या अन्दाज़ा मिलेगा, कितने की चोरी हुई है ?"

"तो यह अजब ज़ुल्म की बात है। चीज़ें अपनी खोओ और याद रक्खो।"

"अच्छा बड़ी बड़ी या क़ीमती चीज़ें जो ध्यान में आएँ कुछ तो बताओ। अब जैसे कपड़े हैं, सन्दूक़ हैं, बर्तन हैं, आख़िर वह न कहेंगे कि साहब जो चीज़ गई तुमको न मालूम होने की क्या वजह ?"

"तो वह कोई और फ़किट्टे घर होते हैं जो तिनका तिनका हर वक़्त नज़र पर चढ़ाये रहते होंगे। ज़रा सी चीज़ इधर से उधर हो जावे उनको फ़ौरन मालूम हो जाये। सैकड़ों चीज़ें तो ख़ुदा की मेहरबानी से घर में ऐसी पड़ी होंगी जिनको मुद्दत हुई देखा था कहीं रख दिया, ध्यान से उतर गईं, अब उनका कोई क्या हिसाब बताये ?"

"अब तो तुम अजीब बातें करती हो। फ़ेहरिस्त माँगते हैं, अच्छा न बताओ, हमारे ठेंगे से, आख़िर वे और किससे पूछें ?"

"यह है तो मेरे भी ठेंगे की नोक पर।" बेगम तिनक कर बोलीं, "लोगो क्या ग़ज़ब है, न उल्टी मानते हैं न सीधी, तो साहब, हमारा ही असबाब और हमीं पर यह फ़र्क़। जहाँ से बने सारे असबाब की गिनती लिखाओ, हमारा तो माल गया था, तुम्हारी अक़्ल भी चोर ले गए।"

"जाओ मुग़लानी बी, डेवढ़ी पर जाके जो जो पूछें लिखा आओ।" नवाब साहब ने कहा।

मुग़लानी और नजिबनिया जो अक्सर तोशाख़ाना जाया आया करती थीं सोच-सोच कर जो कुछ याद आया लिखा आईं। ज़नाने में

पर्दा हो गया। मौक़ा वारदात मुश्रायना करने को पुलिस आई, कौन कहाँ सोता था, कौन पहले जागा, चोर किधर से आये, कोठरी क्योंकर खोली, किधर से माल ले गए, किस किस ने देखा? इन सारी बातों की छानबीन के बाद हवलदार साहब बोले—"नवाब साहब! गलती माफ़ हो, यू कोई घरैया चोर है। घर का भेदी लंका ढाये। बिना जानकार के चोरी नहीं भई, तुम्हारा जेह पर सक हो फ़रमावें।"

यह सुन कर नवाब साहब ने कानों पर हाथ रख लिया, "मेरे ख़ुदा! मेरे नज़दीक सब ईमानदार! मैंने किसी को नहीं देखा, मैं किसी का सब क्यों समेटूँ?"

"अच्छा बेगम साहब से भीतर दरियाफ़्त किया जाय।" हवलदार बोले।

नवाब साहब ने बेगम को सम्बोधित किया—"क्यों साहब! वह पूछते हैं, किसी पर आपको शुबहा तो नहीं?"

"लोगो! यह कैसा थानेदार है?" बेगम बोलीं, "अरे हर्मा से उल्टा पूछता है! कहो हमको मालूम होता तो तुम तक बात क्यों ले जाते? हम आप क्या कम थे, यहीं न डेढ़ चुल्लू लहू पी लेते! अरे हमारे आदमी, उनको क्या ऐसी कमबख़्ती थी जो ऐसी हरकतें करते, अब ऐसा अन्धेर नहीं है।"

"तो वह तो उन्हीं लोगों को कहता है।" नवाब ने कहा।

"तो उसके कहने से अब सब हमारे नौकर चोर हो गए? आज तक चोरी चिकारी में नहीं पकड़े गए।" बेगम तेज़ स्वर में बोलीं।

"साहब हमारे यहाँ कोई ऐसा आदमी नहीं है।" नवाब साहब ने हवलदार से कहा।

"भला आजकल कोई और आवा गवा रहै।" हवलदार ने पूछा।

"नहीं, हमारे यहाँ कोई आने जाने नहीं पाता, न हमारे यहाँ दस्तूर है।"

अभी यह बातचीत हो ही रही थी कि सब इन्सपेक्टर साहब घोड़ा चुमकाते तशरीफ़ लाये। मियाँ बख़्शू ने निहायत अदब से झुक कर सलाम किया और रिकाब थाम कर उतारा। पूर्व इसके कि कोई कान्स-टेबिल आये टहलाना भी शुरू किया।

पुलिस के शैतान के भाइयों से आपने आते ही संक्षिप्त वर्णन पूछ के हुक्म लगा दिया कि, "कुछ नहीं, बे घर की साज़िश के वारदात नहीं हुई।" मौक़ा वारदात मुआयना करने को रवाना हो गए। आते जाते हवलदार वग़ैरा अहले थाना से जो बातचीत हुई उसके बयान करने की ज़रूरत नहीं। पुलिस की कार्रवाइयाँ जानने वाले भली भांति जान सकते हैं। और दूसरे यह कि किसी ने सुना भी नहीं। मियाँ बख़्शू भी जिनको बड़ी चिन्ता थी तनिक आगाह न हुए। सब इन्सपेक्टर ने नवाब साहब को सम्बोधित करके नम्रता से कहा, "आपके यहाँ के नौकर हाज़िर किये जांय!"

कुछ लोग जो ख़ुद ही इस कार्रवाई की फ़िक्र में थे एक-एक करके सिमट आए।

"बस आ गए सब लोग?" सब इन्सपेक्टर ने पूछा।

"बाहर तो यही लोग हैं।" नवाब साहब ने जवाब दिया।

"रात को?"

"जी कुछ चले जाते हैं।"

"और घर माँ भीतर जौन लौंडी, बाँदी, दाई हुन का बुलावा चाही।" हवलदार बोले।

"हाँ जनाब उनको भी।" सब इन्सपेक्टर ने कहा।

"कुछ लोग आबरुदार हैं, वह शायद बाहर न निकलें।"

"अच्छा अच्छा! कुछ हर्ज की बात नहीं। एक काम कीजिए, ज़नाने मकान में कोई कमरा ख़ाली करा दीजिए। वहीं पर्दे के साथ आएँगी, कोई बे आबरुई की बात नहीं।"

"बहुत अच्छा, अन्दर जाके कहता हूँ।" नवाब साहब यह कह कर अन्दर तशरीफ़ ले गए। यहाँ बी सेवती और नजबुन ने बड़ी हौलनाक अदा से कह रक्खा था कि सारे घर की तलाशी होगी और बी मुग़लानी साहब भी बहुत घबराई हुई थीं।

"लोगो!" बेगम चिल्लाईं, "यह क्या ग़ज़ब है! अन्धेर, हमारा ही तो माल जाय और हमारी ही तलाशी हो! दुनिया में है क्या? माल और आबरू! माल तो रात को चोरों के कट्टे लगा, अब दिन दहाड़े आबरू जो है पुलिस के हवाले होती है।"

"हुज़ूर बेअदबाना माफ़!" मुग़लानी बोलीं, "वह जो नहीं कहते हैं, उल्टे चोर कोतवाल को डांटे, कोई अपना ही माल चुरा के चोर-चोर पुकारता है? आख़िर घर भर की वह तलाशी लेनेवाले कौन?"

सेवती टेसुवे बहाने लगी--"मैं निगोड़ी को ख़बर भी तो जाके सुबह मालूम हुई।"

"अरे साहब!" नवाब साहब बोले, "कुछ सुनोगी भी या हुल्लड़-बाज़ों की तरह सब अपनी ही कहे जाओगी? पुलिसवाले कोई कार्रवाई बे हमारी मर्ज़ी नहीं कर सकते। वे तो सिर्फ़ यही चाहते हैं कि उन लोगों को जमा करके चोरी का सुराग़ लगाएँ।"

नजिबनिया जो घर में बहाने बहाने जले पाँव की बिल्ली बनी फिरती थी बेगम साहब के क़रीब आ खड़ी हुई--"हमसे जो पूछेंगे हम कह देंगे, यह मज़ाल नहीं कोई बेमूज़िब बात कहें, और जो कान के दुश्मन बहरे हों तो हम बीवी पर से सदक़े।" उसने कहा।

बेगम झुंझला गईं, "सारे आदमियों को पुलिस से हलाल करवा डालो! ग़ज़ब ख़ुदा का, आबरूदार मुग़लानी और चोरी के इलज़ाम में गिरफ़्तार करें! चलो अच्छा है, इसी दिन के वास्ते सरकारों दरबारों का दामन पकड़ते हैं, जो ज़रा सी बात हो, बे पूछे-गाछे फाँसी दे दी जाय।"

"यह भी अपना लिखा।" मुग़लानी ने ठंढी साँस ली, "हुज़ूर इतनी उम्र आई, ख़ुदा ने घर में सब कुछ दिया था, नौकर चाकर, दरवान, मुसद्दी, दारोगा, एक छोड़ चार-चार पेश ख़िदमतें ! अफ़सोस की बात है, मरने वाले मर गए और हमको एड़ियाँ रगड़ने को छोड़ गए। मुवा पुलिस, ख़ुदा इनको ग़ारत करे, इसकी भी मजाल, जो आबरूदारान का रोयाँ सताए। यह कहिये वक़्त की बात है, अब जो चाहे सो कर ले, बेवारिसे हैं। आज को कोई वाली वारिस होता तो लहू की नदियाँ बह गई होतीं। मियाँ, अब तुम्हारे घर में बैठे हैं, इसी सहारे पर ना ? कोई मुसीबत पड़े दामन के नीचे छिप रहें। यहाँ भी चैन नहीं। हुज़ूर को अख़्तियार है, लाचार बेवारिसे हैं। मुल कहेंगे, सरकारों का यह ढंग नहीं। मझले नवाब के हाँ बी ज़ादी ज़िन्दी पड़ गई इसके पहले वास्तेवाले महाजन ने दो चार लंगारे लगा के घर भर में सुथराई दिलवाई, तिनका-तिनका चुन ले गए, पर क्या मज़ाल जो बाल बाँका हो ? कहने को तो आज तोबा मन्सूहा हो गई हैं, फिर रंडी किसकी जोरू ? भड़वा किसका साला ? उस पर क्या मज़ाल ! अब तो नवाब साहब की आबरु है !"

"लाहौल वला क़ूवत !" नवाब साहब झुंझला गए, "बेगम अब कहो इन लोगों को भेजा जाय, यह नख़रे तो दिन भर रहेंगे।"

"लाहौल भेजो शैतानों पर !" बेगम ने कहा, "बाहर तो बहुत से पुलिस के शैतान बुला लिये हैं, ख़ुदा की क़ुदरत हमारी बातों पर कहा जाय नख़रे !" बेगम की आँखों से आँसू गिरने लगे। वह फिर बोलीं, "अब इससे क्या हासिल ? हम अपना कोई आदमी पुलिस को नहीं देंगे। वह मार-मार के कचूमर बनाएँ, सारी पिनलकोड यहीं ख़त्म हो, हमसे नहीं देखा जायेगा ! साहब तुम मालिक हो, मैं निगोड़ी काहे में, तीन में न तेरह में। बच्चे हमारे बिलकते फिरें और हासिल हुसूल कुछ नहीं, हम तो हरगिज़ अपने किसी आदमी को न देंगे ! लो साहब, यह भी क्या शहर शिमला है ? माल असबाब गया चूल्हे भाड़ में ! इतनी

उम्र आई है। जहाँ इतना ख़र्च किया वहाँ यह भी सही, सारे घर के आदमी हैरान, मुफ़्ते ख़ुदा बेक़ुसूर गुनहगार बनाए जांय, वाह ऐसे बेमुरौवत कहीं होते हैं ? मैं हरगिज़ न मानूँगी, अगर जो तुमसे नहीं हो सकता, हमारे नौकर ख़ुद पुलिस की सारी हेकड़ी भुला देंगे, मरदुए तो मरदुए हैं। मामाएँ अगर अपनी वाली पर आएँ तो मारे जूतियों के खोपड़ी पिलपिली कर दें !"

नवाब साहब झुंझला कर बोले, "यह नहीं मालूम तुम क्यों बकती हो। अपने हवास में हो ! सूरत तो देखो ! चेहरे पर हवाइयाँ उड़ती हैं और यह सब हंगामा टके के आदमी के वास्ते। ग़ज़ब ख़ुदा का ! सैकड़ों की चोरी हो जाय, अफ़ियत तंग हो और यह मरदूद कानों कान खबर न हो, देखी ख़ैरख़्वाही और नमक हलाली इन सब की ?"

"अच्छा तो फिर दिलवा दो फाँसी, किसी तरह कलेजे में ठंढक तो पड़े। यहाँ की तो ख़ुदाई दूसरी है, बे ख़ता ख़तावार सब गुनहगार हैं। मैं तो औरत ज़ात हूँ। तुम सब को एक ही लाठी से हाँकते हो, ऐसा नहीं होता। कोई किस उम्मीद पर अपनी हड्डियाँ तोड़ ले, लहू पानी एक करे ?"

नवाब साहब बाहर आकर पुलिस से बोले—"हज़्रत, आपको अख़्तियार है, घर में तो कोई राज़ी नहीं होता।"

"नाहीं हुज़ूर !" हवलदार बोले, "आपकी मर्ज़ी पर हुआ चाहे, जूँ आप फिराएँ। कस हम कार्रवाई करी ? सीधी उँगलिन से कहीं घी निकसा है ? आप जान लें।"

"भई मैं क्या कहूँ ? मुफ़्त मेरा घर लुटा, अब ज़रा-ज़रा सी बात के लिये हैरान हूँ। चोरी क्या हुई उलटी मेरी जान का अज़ाब हो गई।"

"अच्छा अब तो आप इजाज़त देते हैं, बाज़ाब्ता कार्रवाई शुरू करूँ ?" इन्सपेक्टर ने पूछा।

शेख़ साहब ने इन्सपेक्टर को सम्बोधित किया—"मैं कहूँ आपसे,

बस इस क़िस्से को हटाइये, आपके वह अख़्तियारात हैं जो लिख दीजिये लेफ़्टेन्टी तक तो पत्थर की लकीर हो जाय। इसी क़ाबलियत के कारण तो ख़ुदा ने यह ओहदा दिया है, क़लम के हल्के से इशारे की बात है। आपका एहसान न भूलेंगे।"

"यह जो आप फ़रमाते हैं, महज़ आप लोगों की इनायत है, ज़ाब्ते से मजबूर हैं!"

"ज़ाब्ता से कोऊ तहक़ीक़ात करे ओहुका कछू डर नाहीं, मुदा वह मुक़दमा ज़रा बन्डा आय पड़ा है।" हवलदार बोले।

"अजी बैंडा बैंडा कुछ नहीं!" थानेदार साहब के क़लम का हल्का सा इशारा काफ़ी है!"

"वल्लाह! क़सम वहदहूला शरीक़ की, आप यक़ीन जानिये, मेरा तो मन्शा यही है। आप सब ज़हमत से बचें!" इन्सपेक्टर कहने लगे—"क्यों दौड़ अदालत की पड़े, ख़राबी इसमें पुलिस की, फिर मजबूरन ज़ाब्ता की कार्रवाई करनी पड़ेगी, मुहलतें ली जाएँगी; अच्छी तरह दौड़ धूप करनी पड़ेगी, नहीं मालूम कौन-कौन झगड़े उठें, ख़ैर, इस वक़्त तो जाते हैं, कल देखा जाएगा।"

"हैं हैं!" मिर्ज़ा बोले, "आपको वल्लाह है, ऐसा कोप न कीजियेगा, सारे घर को अज़ाब में न फँसाइये। आप जाते कहाँ हैं? अजी आप समझते नहीं!" मिर्ज़ा ने धीरे से कहना शुरू किया, "आई पर चूकना नहीं चाहिये, कमी बेसी का ख़्याल हर जगह नहीं चलता, जो कुछ समझिये हम आपके ग़ुलाम हैं। भला मज़ाल है? आप लोगों को नाख़ुश करके ज़िन्दगी बसर कर सकते हैं? हुज़ूर का यही ख़्याल है, भई कहते नहीं, पांचे मीर पचासे ठाकुर, किसी तरह वाह थोड़ी हैं, आप कुछ ज़बान से फ़रमा दें।"

"अजी मिर्ज़ा साहब! आप भी कैसी बातें करते हैं? मैं कुछ कहता हूँ? यह तो अपनी-अपनी ख़ुशी की बात है। क़ाफ़िर हो जो झूठ कहता हो। ऐसे मामलात और ऐसी सरकारों में एक कौड़ी लेना मरे सुअर

के बराबर समझता हूँ। इज़्ज़त आबरू की क़द्र इज़्ज़त ही वाले जानते हैं। मुझे इस नौकरी की कोई परवाह नहीं। चचा साहब ख़ुदा की इनायत से ताल्लुक़दार हैं। घर में खाने को बहुत दिया है!"

"ऐ हुज़ूर आपके फ़रमाने की बात है!" शेख़ जोर से बोले, "जो न जानता हो उससे कहिये, हाथी तो आपके दरवाज़े पर झूलते हैं, यह महज़ शौक़िया नौकरी है!"

एक कान्सटेबिल जल्दी से बोला, "अजी तो अपने मतलब की कहो, वल्लाह बिल्लाह तो देर से हो रही है। पूरा थाना सुबह सवेरे से हैरान हो रहा है, पानी पिया हो तो गुनहगार!"

"अजी हज़्रत! फ़ुर्सत दिलाइये।" सब-इन्सपेक्टर बोले, "सच तो यह है कि आपके काम में इतनी देर से लगे हैं। हमको अभी तीन तहक़ी-क़ात पड़ी हुई है, दिन भर तो इसी ठायँ-ठायँ में गुज़र गया।"

नवाब साहब से कानाफूसी करके मिर्ज़ा फिर आ गये और कहने लगे, "ऐ जनाब! ख़त्म कीजिये इस झगड़े को, नवाब साहब कहते हैं--क़सम जनाबे अमीर की, सरे दस्त इस वक़्त क़लमदान में चौदह पन्द्रह अशर्फ़ियाँ बाक़ी हैं, वह मैं नज़र करता हूँ और जो कौड़ी मेरे पास निकले तो काफ़िर मरूँ!"

"भई अस्ल साफ़-साफ़ बात यह है!" सब-इन्सपेक्टर बोले, "दो सौ रुपया तो इन्सपेक्टर साहब को भेजना होगा। फिर आख़िर यह सिपाही ग़रीब गुरबा हैं, दो-दो चार-चार इनको देना होगा। मैं इस रक़म को सुअर मुरदार समझता हूँ। मैं तो सिर्फ़ बीच का गुनहगार हूँ।"

शेख़ साहब आगे बढ़े--"हज़्रत जो बात साफ़-साफ़ थी अर्ज़ कर दी गई, वल्लाह बिल्लाह इससे ज़्यादा इम्कान से बाहर है, इतनी मेहरबानी हम ग़रीबों पर कीजिये। सच पूछिये तो यह भी नहीं मालूम किस परेशानी से हुआ है। नहीं, चोरों ने कोई कोशिश लूटने की छोड़ी है?"

"क्यों न कहो सेक साहब।" हवलदार बोले, "हाथी लाख लुटा, सवा लाख टके का। अबहीं क़लमदान का कोना झाड़ दें हज्जारन उस पर भी खन्खनाय के निकस पड़ें।"

"अरे भाई, तुम समझते नहीं हो, ऐसी ही मजबूरी है, नहीं वल्लाह यह तो वह सरकार हैंकि हज़ारों से मुँह मोड़ने वाले नहीं—क्यों हज़्रत ?" शेख़ ने सब-इन्सपेक्टर को सम्बोधित किया, "हुक्म है अभी तो चट-पट मामला होता है ?"

सब इन्सपेक्टर ने कोई जवाब नहीं दिया। नवाब साहब शेख़ साहब से बोले—"कहिये ? सब ठीक हो गया ?"

"मुबारक हो !" शेख़ ख़ुश होकर बोले—"मगर थानादार साहब चलते-चलते कह गए हैं, तहरीर लिख दीजिये कि किसी पर दावा शक़ नहीं, चोरी गया हुआ माल फिर घर ही में मिल गया !"

"अजी शेख़ साहब !" नवाब साहब ने कहा, "आपसे मैं क्या कहूँ ? अजीब मुसीबत में जान थी। कहने की बात नहीं, बड़ी ख़ैरियत हुई, नहीं तो घर बरबाद होने में कोई कसर बाक़ी न रही थी। आप जानिये सुक्कू की जान ही क्या ? उसने रोते-रोते जान हल्कान कर ली। उसको देख-देख के माँ अपनी जान दिये देती है। फिर ख़याल कीजिये रात दिन का आराम चैन किसको नसीब होता है ? बस मेरी ही जान पर बन जाती। बेगम अपने हवासों में न थीं, आँखों से पानी बरसता था और खाना पानी क्या चीज़ है ? मरदूद हो, इमाम हुसैन को अपने हाथ से शहीद करे जो इनके हाथ की गिलोरी तक नसीब हुई हो। घर का सारा इन्तेज़ाम उलट पलट गया है। किसका खाना पीना ? कहाँ का आराम ? बड़ी ख़ैरियत हुई, आप समझते नहीं, अब यहाँ यह दिक़्क़त आ पड़ी थी कि थाना में रपट तो हो गई। अगर तहक़ीक़ात में पुलिस भी आना कानी कर जाती है तो वारदात के पता चल जाने का जुर्म लागू होता है। बेगम तो औरत ज़ात हैं; वह क्या जानें, बहुत मार में आदमी तोबा भूल जाता है। उनके आए हवास

गए। उनको तो सिर्फ़ रोने पीटने से काम। वह तो अच्छी ख़ासी पागल थीं। उनको देख-देखकर मेरे हाथों के तोते उड़ते थे। आप एक काम कीजिये। ज़री थाने में जाके फ़ौरन दरख़्वास्त रिपोर्ट उठा लेने की दाख़िल कीजिये!"

"बड़ी दूर की बात हुज़ूर ने फ़रमाई है। अभी तो थाने पर ग़ुलाम जाता है।" शेख़ साहब यह कहते हुए आगे बढ़ गए।

× × ×

नजिबनिया और ख़ुदाबख़्श एकान्त में बातें कर रहे थे—

"क्यों जी?" नजिबनिया बोली, "तुमको अपने वादे याद हैं? मैं तुमसे कहूँ, अब इस घर में जी नहीं लगता, ख़ुदा वह दिन लाए कहीं अपने चैन से बैठें!"

"अजी तुमको तो हर काम जल्दी पड़ जाती है। अभी तेल देखो तेल की धार देखो। फिर एका-एकी छोड़ भी तो नहीं सकते? नहीं मालूम हाथी छूटे घोड़ा छूटे, तुम अभी बिलबिलाये जाती हो।"

"तुम्हारे सब काम ढील ढाल के होते हैं, यहाँ घड़ी भर में घर जले, अढ़ाई घड़ी में भद्रा! एक-एक लमहा भारी है। तुम्हारा तेल न मालूम कब तक निकलेगा! हाँ यह तो बताओ, हिस्से बँटवारे भी हो गए? सच कहना, तुझे मेरी जान की क़सम हमारे हिस्से में क्या पड़ा, जो-जो चीज़ हमने पहले से ले ली है किसी का दावा उस पर तो नहीं?"

"अच्छा साहब! तुम्हारे वास्ते तो माल क्या चीज़ है, जान तक हाज़िर है, ज़री छुरी तले दम तो लो, इतना मारे जल्द के फड़फड़ाई क्यों जाती हो?"

नजिबनिया हँस कर बोली—"यह पर कटी कहीं और उड़ाइये। यह नहीं कहते, यहाँ उड़ती चिड़िया के पर गिनते हैं।"

"अच्छा तो तुम्हारी मर्ज़ी क्या है? कुछ ख़ुलासा कहो तो सही।"

"हम तो ख़ालिस कह चुके हैं। यहाँ तलुवा नहीं लगता, तबीअत ही तो है। उचाट हो गई। जहाँ से जी उचाट हुआ फिर रस्सियों से बांधे रहने की नहीं, चाहे कोई जवाहरात का निवाला खिलाये, मुवा मिट्टी के बराबर! बताओ, क्या हिस्सा पड़ा?"

"ले अब लम्बी चौड़ी बातों का मौक़ा नहीं है। तो क्या तुम सच-मुच ही निकलना चाहती हो? अगर जो ऐसी बात है तो हमारा भी यहाँ ठिकाना नहीं। यार लोग भी साए की तरह अपनी चिड़िया के साथ होंगे। यहाँ की नौकरी चाकरी क्या? मुझको ख़ुदा की मेहरबानी से परवा नहीं। वह देने वाला है, कहीं और मेहनत मज़दूरी करेंगे, चैन से तो रहेंगे। ऊधो के लेने न माधो के देने। अपनी नींद सोएँगे, अपनी नींद जागेंगे।"

"ऐसे चोंचले तह कर रक्खो!" नजिबनिया मटक कर बोली, "मैं बेचारी काहे में? वह तुम्हारी माँजाई तुमको काहे को छोड़ने लगी? उसके लहू का जोश ख़ुदा न करे कम हो, वह तो सरकार में भी आ चुकी है। मैं तुमसे क्या कहूँ, क्या-क्या नख़रे दिखाये थे। बहुत कुछ टेसुवे बहाये। अगर आज ख़ुदा वह दिन लाये हमारा तुम्हारा साथ हो तो दूसरे ही दिन यहाँ आ खड़ी होगी। फिर तो ख़ूब जी खोल कर जो मुँह में आयेगा हमारे तुम्हारे दहाड़े करेगी।"

इतना सुनते ही ख़ुदाबख़्श का पारा चढ़ गया--"अजी उस चुड़ैल की क्या मजाल? उसको तो समझो, मुद्दत से छोड़े बैठे हैं! वह तो समझो बच्चे हो गए। नहीं मैं उस हरामज़ादी को कल ही झोंटे पकड़ कर निकाल देता। गली-गली भीख माँगती फिरती। नवाब साहब, बेगम साहब हैं अपने घर के हैं। क्या हर एक के घर के मालिक हैं। उनका दावा ही क्या है? बहुत मेहरबानी की रुपये दो रुपये दे दिये। पड़ी खाया करो, सो वह भी जब आदमी इन्सान हो। वह चुड़ैल तो दम भर दिल संभाल कर घर में बैठने भी नहीं देती। मैं तो यूँ ही कब का छुटकारा दे चुका होता। अब तो तुम समझो, दस पाँच

रुपया कचहरी दरबार में भी ख़र्च कर सकता हूँ। अब भला मुझसे दून की लेकर कहाँ रहेंगी?"

"कहने और करने में बड़ा फ़र्क है!" नजिबनिया बोली, "जो तुम्हीं गुन के होते तो हम आज इन दहाड़ों को क्यों पहुँचते? ख़ैर हमारा भी ख़ुदा है। अब तो जो ठन गई वह ठन गई। बुरा न मानो तो सच्ची कहूँ, जहाँ उन्होंने एक हुक़्क़े की चिलम भर दी और पीनक में नैचा मुँह से लगा दिया जैसे बच्चे के मुँह में छाती, बस तुम पिघल गए, फिर वही चुड़ैल तुम्हारी नानी दादी है!"

ख़ुदा बख़्श झेंप कर बोला, "तुम कैसी बातें करती हो? तुमको मन्ज़ूर क्या है? क्या अभी जाके उसको निकाल बाहर करूँ? तुम्हारे कलेजे में ठन्ढक पड़े!"

"वाह, मेरी उल्टी के समझने वाले! आज तुम होश में नहीं हो? होश की दवा करो। चारों फ़सदें खुलवाओ। लो साहब! चले हैं उसको घर से निकालने! वाह वा, तुमको अफ़ीम घोलने, चन्डू बनाने के सिवा रत्ती भर किसी बात की जो अटकल हो। अगर जो मैं कहती हूँ तुमने ऐसा ही किया तो मेरी चोटी मुँडवाओगे, और तुमको क्या? नाक कटी शलामट, कान कटे मुमारक! ज़री सोच समझ के बात करना चाहिये। देखो हम बताएँ, कौन मकान किस गली में किराये पर लो, कोई दिन सुबीते से हम यहाँ से उठ खड़े हों। तुम खड़े तर ले आ जाया करना। शौदा शुल्फ़ दे जाना, किसी को कानों कान मालूम भी न होगा।"

बख़्शू ने छाती ठोंक कर कहा—"अच्छा, जो कहो मन्जूर, अगर जो निकल जाएँ तो अपने बाप से नहीं।"

"अच्छा तो अब पक्की हो गई, खाओ क़सम!"

"और नहीं क्या? कल ही से तुम मकान लो। जैसा कहो वैसा करूँ, क्या मजाल जो कानों कान किसी को ख़बर हो! अजी ऐसा छिपाया हो जैसे बिल्ली अपने गू को!"

"मगर देखो तुम अभी नौकरी न छोड़ना ! जब हम कहें तब ऐसा काम करना ।"

"अच्छा, मुझे क्या जो कहो वह करूँ, अब तो मैंने तुमको अख़्तियार दिया है, अगर जो किसी बात में निकल जांय तब ही कहना, कौले मरदाँ, जा नदारद !"

"अच्छा जो यह है तो बाएँ हाथ का खाना हराम है, जो कल सवेरे मकान तालाश न करो। हम कल ही उठ खड़े हों, कहाँ का झंझट निकाला है ? बस तुम्हारी जान की क़सम इस तनों जांय जैसे साबुन से तार निकलता है !"

"भला मैं भी सुनूँ किस तरह ?"

"किस तरह, इस तरह पर न जाना, मैं जो अपनी वाली पर आऊँ, किसी को ख़बर भी न हो।"

"या अल्लाह, मालूम तो हो किस तरकीब से ? काहे से, तुम हो भई चालाक, अक़्लदार आदमी !"

"बस एक बात की इन्तज़ारी है। मकान तुम तालाश कर दो, फिर यहाँ खड़े पेसाब भी नब्बुन को न देखोगे। मगर हाँ इतना करना, दस ग्यारह बजे रात को डेवढ़ी के फाटक पर बाहर किसी कोने में रास्ते गली में लेटे रहना। हम चादर मोजा किये निकलेंगे। बस तुम फ़ौरन आ मौजूद होना। फिर वहाँ से जो बन्दोबस्त हो सके, चाहे पाँव-पाँव चलेंगे, नहीं आगे बढ़ कर डोली कर लेना। तुम साथ होना, किसी मकान में जाकर उतार देना।"

"अच्छा ! मगर यह भी तो कहो, जाते-जाते खाने पीने का क्या बन्दोबस्त होगा ? बन्दा इन्सान ठहरा, अरे हाँ, फिर तो जो बन्दोबस्त होगा अपने सुबीते ही से होगा।"

"हम क्या जानें ? यह सब बातें तुम्हारे करने की हैं। हाँ, साथ अपनी गठरी जो टीम छल्ला मिल सका या मौका चला तो इधर-उधर

की पड़ी गिरी चीज़ जो लोगों की नज़र से बची साथ होगी, बगल में या चलते वक़्त हाथ में आये, बाक़ी ख़रीदा दम नग़द, जिसमें कोई उल-झाव रोक-टोक न हो सके। रह गया डेवढ़ीवान, उसको चीते यार बना लिया है। एक तो सोता बन जाएगा और अगर कुछ कुनमुनाया भी तो रोक-टोक करे क्या मजाल !"

"अच्छा ले ! अब पक्की हो गई, लाना हाथ चूड़ी वाला !" बख़्शू हाथ बढ़ा कर बोला, वल्लाह क्या सोची है ? मानता हूँ उस्ताद !"

"चल हट !" नाजिबनिया नख़रे से बोली, "तेरी इन्हीं बातों से हम घबराते हैं, ले अब जाते हैं। बातों-बातों में बड़ी देर हो गई। ऐसा न हो कोई चरचे जाने। मुग़लानी एक ही पच्छलपाई, नटखट, खड़ी गाय में कीड़े डालती है ! ख़ुदा ग़ारत भी नहीं करता। अरे हमको क्या ? हम तो जाते ही हैं, अपनी क़िस्मत को झींके !"

"अच्छा ! ले ख़ुदा हाफ़िज, इमाम ज़ामिन के हवाले ! ले अब कल का वादा याद रखना। मैं सुबह मुँह अंधेरे से कहीं न कहीं मकान पैदा करके रहूँगा !" बख़्शू यह कहता हुआ चल दिया।

८

ख़ुदा बख़्श ने एक इक्के वाले से पूछा--"क्यों यार इक्का किराया पर करोगे ? हमको कोई आठ नौ बजे रात को सवारियों के लिये एक इक्के की ज़रूरत पड़ेगी। अगर जो तुमसे तय हो जाय तो इससे अच्छा क्या ? बस इस चौराहे पर तुम्हारा इक्का मिलना चाहिये, हम ख़ुद आ के ले जाएँगे। ख़ाली तुमको इतना करना होगा कि यहाँ मौजूद रहो। तुम्हारा नम्बर क्या है ? और यार तुम्हारा नाम क्या है ?"

"हाँ करेंगे !" इक्के वाला बोला, "किराया क्या होगा ? जहाँ कहो वहाँ खड़ा करें और जो मुहल्ले का पता बता दो तो वहीं पर आन मौजूद हों। पेट भर खाने को मिले, अरे हाँ नहीं कहते हैं, घोड़ा घास से यारी करेगा तो खायेगा क्या ? हमको एक आना तक हलाल का है, बाक़ी तो मालिक का है !"

"अरे मियाँ ख़ुश कर दिये जाओगे, तुम्हारा घोड़ा भी खाए, मालिक का भी पेट भरे और तुम भी मज़े उड़ाओ, कुछ नशा पानी से शौक़ हो तो उसके वास्ते भी मौजूद हैं। भई, हम काम लेते हैं तो ख़ुश करके। पैसा दो पैसा की कोई बात नहीं है, हाथ का मैल है।"

"हम हर तरह से आपके नौकर हैं। ऐसी सवारियाँ हर हत्थे तो मिलती नहीं, ऐसा तेज पहुँचा देंगे कि तबियत अन्दर से ख़ुश हो जाएगी। अभी उस दिन सोंधी टोला के एक महाजन को लादा। आलम नगर ख़याल करो। और चारबाग़ के स्टेशन से रेल छूट गई थी। क़सम जवानी की रेल स्टेशन पर आने से दस मिनट पहले खट से सवारी पटकी। लाला ख़ुश हो गए, बे मांगे जेब से एक चवन्नी धरी और छ आना किराया घाते में !"

"अच्छा नाम तो बताओ, आख़िर किस पता से तुमको यहाँ ढूंढ़ें ?"

"जी नाम हमारा तो दहलू है। इक्का का नम्बर यह देखिये। हम ख़ुद इन्तज़ार में होंगे। बस नौ बजे से आप जब चाहें हमको पाइयेगा और जो न मिलें तो सामने वाली साकिन के यहाँ चिलम उड़ाते होंगे। खुदा सलामत रक्खे, रात दिन की मेहनत ठहरी, जो इतना नस्सा न करें तो रात दिन क्योंकर काम कर सकते हैं ? और हाँ हुज़ूर ! यह भी बताइये, कहाँ जाना होगा ?"

"अरे मियाँ जाना कहाँ, यहीं दो क़दम पर। यहाँ से बढ़ के यह जो सीधी सड़क है आगे बढ़ के नुक्कड़ है, हलवाई की दूकान है, बस मोड़ से दहनी तरफ़ इक्का घुमा लिया, इससे आगे चल कर कुलिया है, बस वहाँ सवारी तुम उतार देना, एक भले आदमी अशराफ़ हैं। कहीं के

मुन्शी हैं, कचहरी में। बाहर के रहने वाले, बाल बच्चे भी हैं। उनको एक दाई की ज़रूरत है, बस उन्हीं को सवार करके पहुँचा देना है। अल्ला अल्ला ख़ैर सल्ला। बस जो माँगो देंगे। मगर भई एक बात है, जल्दी उनको बड़ी है, आज तीन दिन से लड़के ने दूध नहीं पिया!"

"ले बस अब समझ गये हैं। अब हम आपका रास्ता समझ गये, सौ काम छोड़ कर अगर कोई सौ रुपया भी देगा, पेशाब करते हैं! किसी असराफ़ को धोका देना कौन ईमान धरम की बात है? ख़ाली एक रुपया दे दीजियेगा!" इक्कावाला यह कर चला गया।

मियाँ ख़ुदा बख़्श नजिबनिया को साथ लेकर दस बजे रात को आये और सवार कराके मकान तक जा पहुँचे। इक्कावाले को जेब से निकाल के रुपया दिया और अपनी तरफ़ से चार आने इनाम देकर बिदा किया।

नजिबनिया मकान में उतरते ही बोली, माजल्लाह, कितनी दूर है, मुए इक्के ने जान हल्कान कर डाली। फलैंदों की तरह बघार दिया! आदमी परेशान हो जाय। तुम भी इक्के में बैठे थे नहीं तो कहीं रास्ते में गिर गये होते, और मुए इक्के पर चढ़ना उतरना जान जोखम है। वह तो कहो हुमुक के हम गये, फिर बगल में यह गठरी अपनी तरफ़ तुम्हारी जान लगी हुई, मारे हिचकोलों के कचूमर निकला जाता था। कौन लोग सवार होते होंगे! सारे पिन्डे से दरिया की तरह पसीना बहता था! सब कपड़े तर बतर हो गए।" फिर मुस्करा के बोली, "ऐसा मालूम होता था किसी बच्चे ने पेशाब कर दिया।"

"अजी यह क्यों कहती हो! ले बस उठो, नहा डालो, हम समझ गए!" ख़ुदा बख़्श बोला।

नजिबनिया ठट्ठा मार कर हँसी, "वाह, खूब समझना है आपका, नहाएँ हमारे दुश्मन, यह तुमने घर क्या लिया है? मुए क़ैदीख़ाने में क़ैद किया, न कहीं पलंग न पीढ़ी, अंधेरे घर में कैसे रहना होगा? मुझे

तो डर लगता है ! ले अब पानी कहाँ से पिएँ ! अरे तुमने एक घड़ा भी न भर रक्खा ।"

"ले अब तो रात के रात सो रहो, कल देखा जाएगा ।"

"कैसा सोना, यहाँ अपनी जान को पड़ी है ! भला ख़याल तो करो, आदमी के रहने का मकान है ? कोठरियों से चुड़ैलें निकल रहीं हैं, दलान के दर में यह बड़ा-बड़ा भूत सर निकाले झाँक रहा है !"

"अच्छा ज़रा दिल मज़बूत रक्खो, मैं अभी कहीं से तेल दियासलाई लाता हूँ ।"

"यहाँ पियास के मारे दम पर बनी है ! अच्छी ख़ासी करबला है, और तुमको क्या कहूँ ? अच्छा जो अगर गए भी तो इस घर में हम ठहरेंगे ? लो साहब, यह अकेला छोड़ कर बाज़ार जाएँगे !"

"मैं कहता हूँ, तुमको हो क्या गया ? कोई चुड़ैल तो सर पर नहीं आ गई है । ख़ुद ही कहती हो, अंधेरे में जी घबराता है, प्यास के मारे दुश्मनों का बुरा हाल है ! अच्छा अब तुम्हीं बताओ.........और यह तो होना नहीं, दो अन्धों में एक पैसा कहते हुए बाज़ार में निकलें !"

"ख़ुदा न करे, दुश्मन, मुद्दई, मुल इतना कहूँगी, हो तुम बड़े अक़्लदान, यह तुमने घर तलाश किया, रक्खो इसमें अपनी चुड़ैल को, मेरी जूती भी घर में न आए ।"

यह बातें हो ही रही थीं कि पड़ोस से सितार की आवाज़ और दरबारी की तान कान में पहुँची । बी नजबुन उचक के टूटी दीवार पर हो रहीं । वहाँ दस पाँच ज़रदोज़ी बनाने वाले गुन्डे रंग रलियाँ मना रहे थे । मियाँ बख़्शू को जो मोहलत मिली, झट दरवाज़े के बाहर निकले बाज़ार की तरफ़ और जिस तरह बना सामान रोशनी और मिट्टी की बँधनी में मस्जिद से पानी लाये ।

"अच्छी सज़ा दी तुमने !" नजिबनिया बोली, "पहले मुँह चूमते गाल काटा ! राज करे ऐसा घर । तुम्हीं को यह घर मुबारक रहे । कल

सवेरे सबसे पहले मकान बदलो, हम दम भर ठहरने से रहे, घर है मुश्रा भूतख़ाना ! और यह तो बताओ, तुम ग़ज़ब ख़ुदा का औरत ज़ानी को टुटरूँ टूँ ढुंढार घर में छोड़ चले कहाँ गए थे ? अगर कोई नऊज बिलयाह हो जाता ? हो न हो घर गए होगे !"

"तुम्हारी बातों से गदहों को भी बुख़ार आता है। अरे नादान कुछ समझती भी हो !" यह कहते हुए बख़्शू ने लोटिया और दियसलाई नीचे फेंक दी और ज़ोर से बोला, "इसके लिये गया था, तुम तो न इस वक़्त पानी के ऊपर हो, न पानी के नीचे। इसी वास्ते जिसमें कानों-कान ख़बर न हो, देखती नहीं, मुहल्ले में नया आदमी भी है और तुम हो वे फ़ायदा सहमी जाती हो।"

"अच्छा अच्छा, जामे से बाहर क्यों हुए जाते हो ? पानी भी लाये, मारे पियास के दम पर बनी है !"

"सभी कुछ है, घर में रोशनी तो करो !"

"ले अब बैठें कहाँ ?"

"सारा घर पड़ा है और तुमको जगह नहीं मिलती, कुएँ की जगत ज़री ऊँची सी है, बस उसी पर बिस्तर लगाओ।"

न.जवनिया ठिनक कर बोली, "ना बाबा, हमसे न होगा। नींद का मामला, सोता मुवा बराबर ! कल कदान को कहीं करवट ली, गड़ाप से अन्दर ! वाह अच्छी सलाह बताई, हमारी अभागी नींद ऐसी, सोये तो मुर्दों से सरबत बाँध के, तन बदन का होश नहीं !"

"अच्छा साहब ! रात तो किसी तरह कटे, सुबह को सब ठीक-ठाक हो ही जायेगा, बारह बजे होंगे !"

"उफ़्फ़ोह ! रात पहाड़ हो गई, आज की रात भी उम्र भर याद-ग़ार रहेगी !"

"अजी यही सोते जागते कट जायेगी ! तुम्हारे पानदान में कोई पान तो न होगा ?"

नजिबनिया ने कन्धे पर हल्का सा थप्पड़ मारा, "ख़ुदा की संवार तुम्हारे पान पर, लो साहब पान की बड़ी फ़िक्र थी ! अपनी जान लेकर ख़ुदा जाने किस जतन से आये हैं और इनके लिये गिलौरियाँ चाहिये। ख़ुदा कल चैन से बिठायेगा, सब सामान हो जायेगा। तुमने वही मसल की, जैसे एक रस्ते में कुवाँ था। अंधेरे में एक बनिया गिर गया। ख़ुदा की शान कहीं से तुम्हारे भाई अफ़ीमी भी ऊँघते चले आते थे। वह भी उसी में आ रहे। आँख जो खुली देखते क्या हैं, एक जने और हैं, 'अरे भाई तुम कौन ?' उसने कहा, 'बनिया।' तो आप उससे क्या पूछते हैं, 'भाई इस वक़्त तुम्हारे पास थोड़ा सा गुड़ तो न होगा ?' बस वैसी ही बातें इस वक़्त तुम्हारी हैं। ले भला पान पत्ते का यहाँ क्या ज़िक्र ? अफ़्यून की डिबिया जेब में तो रहती है। बोलो, और रात भर ज़हमार करो।"

"अच्छा, यह तो होता ही रहेगा, ले अब थोड़ी देर सो रहें।"

मियाँ ख़ुदाबख़्श तो कमरे से चादर निकाल कर ज़माने पर लेट रहे। मगर नजिबनिया को क्यों नींद आने लगी ? वह उस वक़्त तक दीवार पर बैठी जी बहलाती, पड़ोस के संगीत भवन का आनन्द उठाती रही, जब तक वहाँ भी सन्नाटा हो गया। थक माँदी तो थी ही, गठरी तकिया लगा कर वह भी द एक घन्टे के लिये कहीं पड़ रही।

६

"नजिबनिया ! नजिबनिया !" बी मुग़लानी ने आवाज़ दी, "ऐ तो बी बुन्नों अभी आराम ख़ास से उठीं नहीं ? नमाज़ का वक़्त जाता है, ज़री मुझे पानी देती। अरी सेवती ! तू ही जगा दे, मेरी नमाज़ क़ज़ा होती है।"

"नजिबनिया तो है नहीं!" सेवती बोली, "जाग तो ज़रूर गई होगी, लो मैं पानी उठा के देती हूँ।"

कुछ देर प्रतीक्षा करके मुग़लानी फिर चिल्लाई, "लड़की आज निकलती है न कल, आज तो उसने ठेका लिया है। मेरी नमाज़ क़ज़ा हो रही है, अरी सेवती, ज़री आवाज़ तो दे!"

"क्या अन्दर से सुनती न होगी?" सेवती ने कहा।

"यह तो नई हुई!" मुग़लानी बोलीं, "देखूँ बेगम साहब जाग गईं, जाके अभी तो कहती हूँ। मुझे ऐसी ज़रा-ज़रा सी शिकायत करते हिचक होती है, मेरी आदत नहीं, मगर आज तो हद कर दी। आज सर मुँडवा के गदहे पर सवार करके निकलवा न दिया तो मैं अपने नाम की नहीं।"

"आप तकलीफ़ न कीजिये, मैं ख़ुद लिये आती हूँ।" सेवती बोली।

"क्या है बी मुग़लानी?" यकायक बेगम साहब वहाँ आकर बोलीं, "तुमको भी उसी निगोड़ी छोकरी का दुखड़ा रहता है। ऐसा किसी आदमी को नक्कू नहीं बनाते। कहीं सो गई होगी, रोज़ तो तुम्हारे वास्ते वज़ू का पानी रखती ही है।" यह कह कर बेगम ने ख़ुद आवाज़ें देना शुरू किया, "नजिबनिया, नजिबनिया! आएँ, कहाँ चली गई?"

"ऐ हुज़ूर! मैं कुछ कहती थोड़ी हूँ? होगी कहीं, यह सेवती की बात थी!" मुग़लानी यह कह कर वज़ू करने लगीं।

बेगम ने कुछ देर इन्तज़ार किया। फिर कुछ घबरा कर बोलीं— "एजी, एजी, सुना तुमने, आज ताज्जुब है कहाँ पड़ी सोती है?"

"अजी होगा भी!" नवाब साहब झुंझला कर बोले, "तुमको इन्हीं बातों की फ़िक्र रहती है। अगर मर गई या चली गई या शरारत से नहीं बोलती तो मैं क्या करूँ? तलाश कराओ, जाएगी कहाँ कमबख़्त!"

"ऐ हुज़ूर!" बी मुग़लानी सलाम फेर कर बोलीं, "मैं तो उस छोकरी से पहले ही दिन खटकी थी, हो न हो, किसी दिन कोई और

खेल खेलेगी। यह दस-दस बजे रात तक ख़ुदा बख़्शा से कनफुस्कियाँ ऊपर ही ऊपर जाएँगी ? बेग्रदबाना माफ़, एक ही चरबक छोकरी है, मैं तो उसकी चितवन से काँपती हूँ। यह कहो मेरी आदत हर बात में खुड़पेंच निकालने की नहीं है, जब मौक़ा मिलता था, मुझ निगोड़ी की गठरी पर हत्ता साफ़ करती थी, और तिलादानी पर आए दिन हत्ता साफ़ करना तो बाएँ हाथ का काम था, जब देखा वीरान पड़ी हुई है।

"मेरा तो यह हाल, एक-एक सुई जोड़-जोड़ के जमा करती हूँ। और इसका नसुढ़िया हाथ जहाँ लगा सब का सफ़ाया, न मालूम क्या करती है ! कुछ नहीं, मुझी को सताने के लिये इधर से उधर निकाल कर फेंक देती है। नहीं, आख़िर जब सीना पिरोना कुछ नहीं तो पूछो सुई धागे से क्या काम ? अभी उस दिन चार पैसे के अलग जलन्धरी गोले लिये थे, सीना न पिरोना, जो बालिश्त भर डोरा मैंने किसी काम में लगाया हो तो क़सम ले लो। कल जो देखती हूँ तो सब का सफ़ाया। रत्ती भर आँख में घिस के लगाने को नहीं, एक दो टांके लगाने थे, कैसी हैरान हुई, मेरा ही दिल जानता है ! जो कुछ कहती हूँ, बेगम साहब से एक की चार लगाती है, जी मसोस के रह गई !"

"नेकी पड़े नजिबनिया पर, कहाँ ग़ायब हो गई !" सेवती ने कोसा।

बेगम घबराकर बोलीं—"अरी सेवती, मेरा सन्दूक़चा तो ला, अब तो मुझे भी शक सा हो गया !"

सेवती ने सब जगह ढूँढ़ा, सन्दूक़्चे का कहीं पता नहीं !

"ऐ हुज़ूर ! मुझे तो कहीं नज़र नहीं आता !" सेवती बोली।

"चलो यह भी उसके कट्टे लगा, ख़ूब हाथ मारा, ऐ हुज़ूर !" मुग़लानी ने नवाब साहब को पुकारा, "अभी जल्दी दौड़ धूप करना है, अभी सवेरा है !"

"लाहौल वला क़ूवत !" नवाब साहब झुंझला गये, "भई तुम लोगों ने तो नकदम कर दिया। हुक़्क़े के दो कश पीना हराम, मैं कहता

था, इसी काम को एक मुद्दत से भावें नहीं, इन नालायक़ों का क्या एतबार ? यह इन बेगम साहब की बेवक़ूफ़ी है ! न मालूम इनकी हरकतों से मुझ पर क्या आफ़तें न आएँगी ? अभी एक वाक़या हो चुका था, ज़ख़्म भरे नहीं, ख़ैर वह तो जिस तरह बना तत्तो थम्मों हो गया, बला टली ! लीजिये नया चरका दिया, इसी दिन को मैं रोता था !"

बेगम झल्ला गई--"ले बस तुमको कोई जली कटी का मौक़ा मिल जाया करे ! कोई बन्दोबस्त तो होता नहीं, सारा नज़ला मेरी जान पर गिरता है । लोगों, क्या मैंने तुम्हारी छोकरी को भगाया, वह कहते नहीं, नेकी बरबाद, गुनह लाज़िम ! एक तो अपना नुक़सान हो, आराम चैन का आदमी हाथ से जाए, उस पर नकतौड़े उठाओ ! अच्छा जाओ, जो तुम नहीं करते, हम आपसे इन्ज़ाम करते हैं ! देखो फिर न कहना, पूछा नहीं, अब तुम खुद ही हाथ पाँव छोड़े देते हो, सेवती ! ज़रा इधर आना, बाहर देख, शेख़ साहब आये हैं, उनसे जाके सब हाल कहो, और हमारी तरफ़ से कहना, 'वाह वा ! आपकी लौंडी रात को अच्छी ख़ासी तरह रही, खाना खाया, सोई, घर का काम धन्धा किया, सुबह को ग़ायब ! नहीं मालूम पर लग गये ! हवा थी उड़ गई ! ख़ैर और चीज़ तो ले नहीं गई । मगर हाँ मेरा सन्दूक़्चा नहीं मिलता । उसकी ऐसी आदत भी नहीं, मैं तो उसको कह नहीं सकती । मगर हाँ इस वक़्त मिलता नहीं है, इससे बी मुग़लानी शुबहा उसी पर करती हैं !"

बी मुग़लानी क़रीब आके बोलीं, "ऐ हुज़ूर, उसकी गठरी भी नहीं, मैं हैरान हूँ किधर गई, कहाँ गई, और सलामती से बड़े सुबीते से गई । हो न हो, इसमें कुछ साज़िश ज़रूर है, लाज़िम है । अब तो उसकी पूरी तलाशी की जाय । अगर क़ब्र में भी जाके छिपे तो इस गुस्ताख़ी, नमकहरामी की सज़ा यह है कि मुर्दा तक घसीट लाएँ ! लो साहब पाला पोसा, परवरिश किया, ख़ाक से पाक किया, जब जाके आदमी बनी । अब पेट से पाँव निकाले, क्या कोई किसी का एतबार करे ! ऐसी मालज़ादियों को क़ीमा करे, बोटियाँ चील कौवों को दे ! उनकी सज़ा यह है ! बुला

के थानेवालों को चोरी में सज़ा दिलवाये, जेलख़ाना भेजे, जनम क़ैदी कराये, नमक हरामी का ख़ूब इनाम दें !"

नवाब साहब बोले—"अजी बी मुग़लानी साहब ! आप क्या कहती हैं ? वह आपके पास अब बाल बाँधी चली ही तो आती है। लीजिये मुझे जूतियाँ मार लीजिये। अजी मैं इन सब बातों को पहले ही कहता था, हो न हो, इन्हीं ने उसको ख़राब किया। नहीं तो भला उसको कुत्ते ने काटा था, भरी थाली में लात मारती ?"

"जी हुज़ूर, आजकल ज़माना यही लगा है, जिसमें खाएँ उसी में छेद करें। जब ही तो इन्सान को रोटी नसीब नहीं होती, दाने-दाने को मुहताज है !" मुग़लानी ने कहा।

"शेख़ साहब डेवढ़ी पर हाज़िर हैं !" सेवती बोली, "सुन के दंग हो गये, कहने लगे मुझे उससे ऐसी उम्मीद न थी। उसने अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारी और ख़ैर जो कुछ ले गई सदक़ा गया ! कै दिन खाएगी ? ख़ुदा ने चाहा क़ब्र में कीड़े पड़ें, और हुज़ूर मैं अभी से जाता हूँ तलाश में, जब तक ढूँढ़ न निकालूँगा बाएँ हाथ का खाना हराम है, जाएगी कहाँ ? अभी तो सारे हिन्दोस्तान में तार भेजता हूँ, जहाँ होगी उसी तरह गिरफ़्तार आएगी !"

यह सुन कर नवाब साहब बाहर निकल आये।

"आदाब तस्लीमात बजा लाता हूँ !" शेख़ झुक कर बोले।

"सुना आपने शेख़ साहब ! आज देखिये नया गुल खिला ! भई इन औरतों के मारे मेरा नाक में दम है, सोना जागना, खाना पीना, सब हराम कर दिया। एक तो मैं इन झगड़ों का आदी नहीं, मेरी रूह को ऐसी फ़िक्रों से नफ़रत हुई है, और अदबदा के उसी का सामना अब होता है। बताइये इसमें आपकी क्या राय है ? मगर एक बात का ख़याल मुझे बार-बार आता है, इस काम में किसी की साज़िश ज़रूर है, घर की रहने वाली छोकरी, कहीं आती जाती नहीं, फिर आख़िर क्यों कर उसको ऐसी हिम्मत हो सकती है ? हो न हो कोई मुर्शिद है ज़रूर !

यह सारी कारस्तानियाँ उन्हीं की होंगी ! और, भई मैं तुमसे कहूँ, मेरा दिल यही गवाही देता है, यह ख़ुदा बख़्श जो है इसमें शरीक ज़रूर है। मगर भई अपने ही तक रखियेगा, क्या मानी अभी उसको बरतरफ़ नहीं किया गया, सिर्फ़ शुबहा ही शुबहा है। किसी ने उसको देखा नहीं, यह हुआ था, एक रोज़ उसकी जोरू ने शिकायत की थी, जिस ज़माने में वह छोकरी उसके यहाँ रहती थी, उस ज़माने की बातें अजीब व ग़रीब करती थी, और हाँ, एक दफ़ा मैंने भी उसके कन्धे पर छोकरी को हाथ रक्खे देखा था। नहीं मालूम क्या बात थी ? मुमकिन है छोकरी को अच्छी तरह रखने की ताकीद जो यहाँ से की गई हो बख़्शू की जोरू जलापे में कुछ और समझी हो ! और भई कन्धे पर हाथ रखने वाली बात का मुझे ख़ुद एतबार नहीं। मेरी नज़र ने ग़लती की हो, कहीं ककड़ी का चूर गर्दन मारा जाता है ? भई इन्साफ़ के मानी यह हैं, अच्छी तरह छानबीन कर ली जाय तब सज़ा दी जाय। यूँ तो आपका नौकर है, हर वक़्त ख़तावार ! जब जी चाहे बरतरफ़ कर दीजिये। मगर ऐसा न हो उसके बाल बच्चे बददुआ दें। ग़रज़ कि भई इसमें मेरी अक़्ल हैरान है।"

"ख़ुदा बन्दे नेमत बजा इरशाद हुआ, इसकी फ़िक्र तो अभी किये देता हूँ। ग़ुलाम !" (चुटकी बजा के बोले) "यूँ अभी लीजिये। हुज़ूर के इक़बाल से कोई बड़ी बात नहीं, हाँ सिर्फ़ कोशिश और दौड़-धूप की ज़रूरत है। अब रह गया साज़िश का मामला, सो जिस वक़्त सब पता चल गया वह ख़ुद आईना हो जायेगा। हुज़ूर की राय उसके बारे में यह तो मुमकिन ही नहीं ग़लत हो, बख़ुदा क्या बात निकाली है, ऐ सुबहान अल्लाह !"

इतने में मिर्ज़ा साहब भी आ गए और तस्लीम करके बैठ गये ! पूरा वाक़या शेख़ साहब ने उनसे भी दुहराया।

"कुछ घबराने की बात नहीं है !" मिर्ज़ा बोले, "हुज़ूर का नमक ऐसे बईमानों को ख़ुद ही मारेगा। मुझे बख़्शू का नाम सुन कर ताज्जुब

हुआ ।" मिर्ज़ा ने दाँतों में उँगली दबाते हुए कहा, "कोई ऐसी हरक़त करता है। हाँ, ऐसी सरकार में ? अगर वाक़ई ऐसी बात है तो ज़रूर सज़ा मिलनी चाहिये। मगर जैसा हुज़ूर ने फ़रमाया, छानबीन करके, ताकि बाद को अफ़सोस न हो, चाहे अदना हो या आला। आदमी ख़ैर-ख़्वाह, नेक मिज़ाज, फ़ुर्तीला, आराम देने वाला मुश्किल से मिलता है। एक दफ़ा हाथ से खोने पर बरसों अफ़सोस रहता है !"

"यही ख़याल मुझे भी बार-बार रहता है। अच्छा भई, जो मुनासिब समझो, तुम लोग करो।" नवाब साहब बोले।

"हुज़ूर सलाह होती है थाने पर रपट कर दी जाय, फिर वह ख़ुद ही छानबीन करके सब तरह की टोह लेकर खोज निकालेंगे। जाएगी कहाँ ! अगर हज़ार कोठरी में बन्द होगी तो भी वे सुराग़ लगा लेंगे। है इज़ाजत, अभी तो जाके रपट लिखाता है ग़ुलाम ! ग़ज़ब ख़ुदा का, उसको किस बात की तकलीफ़ थी। हर बात में उसकी ख़ातिरदारी की जाती थी। कुछ नहीं, उसको कमबख़्ती ने घेरा। मगर इतना कहूँगा, वह इस तरह की थी नहीं। नहीं मालूम किसने क्या चकमा फ़रेब दिया !" यह कह कर शेख़ जी उठ गये। फिर थोड़ी देर बाद वापस आकर बोले—"हुज़ूर ! ग़ुलाम सीधा यहाँ से गया थाने पर, पुलिस वाले तो आप जानिये हर बात में बिन्दी की चिन्दी निकालते हैं। बात पूछें बात की जड़ पूछें। ज़रा सी फुन्सी को लेकर यह बड़ा फोड़ा बना दें। लगे पूछने किस वक़्त भागी ? कब भागी ? किसके सामने भागी ? आख़िर और नौकर चाकर थे, या नहीं ? किसी ने कुछ रोका-टोका था, या सीधी चली गई ?"

"फिर आपने कह नहीं दिया घर भर में अन्दर बाहर किसी को ख़बर नहीं थी कि यह बात होगी ?" नवाब साहब ने पूछा।

"हुज़ूर !" मिर्ज़ा बोले, "असल बात यह है कि इत्तफ़ाक़ से उस वक़्त कुछ न था, यूँ ही ख़ाली हाथ चले गये थे और उन कुत्तों का

हाल हुज़ूर पर रौशन है। कुछ मुट्ठी गरमा दी जाती सब काम बन जाता।"

"अच्छा ! मैं समझा !" नवाब साहब बोले, "अच्छा कुछ दे दिला दो, किसी तरह मामला तो सुलझे !"

"ऐ हुज़ूर, कोई बड़ी बात तो है नहीं, यही पन्द्रह बीस रुपया। अगर ऐसी बातों का ख़याल किया जाय शुरू ही से मामला बिगाड़ देंगे, और कुछ ताज्जुब नहीं रिपोर्ट ही न करें। उस वक़्त अलबत्ता ठीक बात नहीं !" मिर्ज़ा ने कहा।

"ख़ुदा न करे ! इसकी नौबत क्यों आने लगी ! किसी बात में अपनी तरफ़ से कमी न हो।" नवाब साहब बोले।

"हुज़ूर ! तो यह भी लिखना चाहिये कि नहीं कि कुछ माल ले गई है या नहीं ?" मिर्ज़ा ने पूछा।

"अरे भई, मुझसे क्या पूछते हो, जो जी में आये लिखा दो। देखो कोई जा बेजा न होने पाये।"

"हुज़ूर कुछ घबराने की बात नहीं, हाँ एक बात पूछने को रह गई, अगर पुलिस में पूछा जाय कि किसी पर शुबहा तो नहीं तो उनसे क्या कहा जाय ? अगर इजाज़त हो तो बख़्शू का नाम ले लिया जाय।"

"नहीं नहीं, देखो इसका लिहाज़ रखना, किसी का सब्र न समेटना चाहिये, नहीं मालूम उल्टी पड़े सीधी पड़े, अगर सुबूत न दे सके तो मुफ़्त में झूठे बने, उल्टी आंतें गले पड़ीं।"

"और झूठी क़सम का मुक़दमा अलग क़ायम हुआ !" मिर्ज़ा बोले।

"भई मेरी तो सलाह यह है, इस बात को गोल ही कर जाना, अच्छा ! मैं ज़री घर में पूछ लूँ !" यह कह कर नवाब साहब अन्दर चले गये।

"क्यों साहब ? थाने पर रपट कर दी जाय ना ?" नवाब साहब ने बेगम से पूछा।

"बोलो बी मुग़लानी ! क्या कहती हो ?" बेगम ने मुग़लानी से पूछा ।

"हुज़ूर सही काम में क्या शर्म ?" मुग़लानी बोली, "रपट की जाय। बल्किन मेरी तो सलाह है उसक पकड़ बुलवाया जाय, वह किसकी बेटी है ! अभी तो टुन्डियाँ कस जाएँगीं । बाल बांधे हाज़िर होगी । ज़रूर सज़ा देनी चाहिये और बुला के वह कोड़ा, वह कोड़ा, इतनी क़ुबाकारी हो कि हड्डी चमड़ा अलग हो जाय । लो साहब खिला पिला के जवान जहाल किया, इसी वास्ते ! पाल-पाल मेरे जी का काल । इस तमाम मेहनत का यही नतीजा था, नेकवख़्त ! रहने को तेरा जी नहीं चाहता था । हँसी ख़ुशी चली गई होती, हमको ख़ुद ऐसी पिच्छल पाइयों को रखना मन्ज़ूर नहीं ! क्या कहूँ ? न हुई उस वक़्त नहीं मैं तो डेढ़ चुल्लू लहू पी लेती !"

"अजी यह बातें तो रहेंगी !" नवाब साहब उकता कर बोले ।

"अब क्या सलाह है ?"

"ले मैं क्या जानूँ, उस पर कमबख़्ती सवार हुई, भरी थाली में लात मारी !" बेगम ने कहा ।

१०

"ले, आके देखो ये चीज़ें जो कुछ यारों के हिस्से में पड़ी हैं दाम-दाम वसूल कर लाया !" बख़्शू बोला, "तुमको सब मालूम है कै हिस्सेदार थे, वह तो कहो छानबीन, तलाश, पकड़ धकड़ के डर से सब माल यूँ ही अनमित्त रक्खा रहा । किसी का हाथ लगने नहीं पाया । आज मैं ख़ैर दुलाया, पकड़ा गया । भई अपना-अपना हिस्सा बख़रा

कर लो। औने पौने कोड़े करने चाहिये। कहीं गाड़ रखिये! मगर आज इस झंझट का तोड़ होना चाहिये। अरे हाँ और क्या, ले अब आओ, सब चीज़ें सहार लो, देखो, जो-जो तुम्हारी चीज़ें थीं वह सब आ गई नहीं!"

"लाओ मैं देखूँ तो सही!" नजिबनिया आगे बढ़ी, "हाँ जौशन की जदड़ी तो वही है, नोनगे भी तो हैं, और वह अँगूठी छल्ले कहाँ? मुझे उनके नगीने भले मालूम होते हैं। और हाँ! ऐ लो वह गले में पहिनने की चीज़ तो मालूम ही नहीं होती। उसमें तो बहुत से टुकड़े-टुकड़े हैं, और डोरे में गुंथी हुई थी।"

"अजी अच्छी तरह देखो तो सही, पचलड़ी को कहती होगी, उसकी लड़ी तो होती है?"

"हाँ हाँ, जिसमें नगीने जड़े होते हैं।"

"अरे तो फिर चम्पा कली कहो, वह तो मैं बड़े तूल कलाम से देवी के हाथ से छीन लाया हूँ। वह देता थोड़ी। वह तो मैंने बड़ा ख़ैर दिलाया। मैंने कहा, 'क़सम बारा आने की, अभी बिगाड़ होगा। हमने पहले से कह दिया था, यह चीज हमारी है।' चार आदमियों ने तत्तो थम्मो कर दिया। कुछ डबरू बसड़ू बनाया। अभी जाके मुख़बिरी करता हूँ। थानेवाले टोह में लगे हुए हैं। लाके सब को सर पर न खड़ा कर दिया हो तो यह मोंछें मूँड़ डालूँ। देखो, भाई, बात यह है, पाँच पंच मिल कीजिये काज, हारे जीते आये न लाज! पांचे मौर, पचासे ठाकुर! और ग़ज़ब ख़ुदा का हमारे ही सब पापड़ बेले और हम ही घाटे में। यह लो अपना पानदान, लोटा। यह भी तुमने पहले ही से कह दिया था। और बाक़ी चीज़ों का हिस्सा लग गया था, और माल सब एक जगह रख दिया गया है। जिस वक़्त सुबीते से बिकेगा सरता भरता होगा, उसी वक़्त नगद करके सब हिस्सा लगेंगे, जो जिसकी बखरी में पड़ेगा। उसकी हमको जल्दी भी नहीं है। अच्छा ले अब हम तो जाते हैं। आटा, दाल तेल तो सब ला दिया। अब सिर्फ़

गोश्त मसाला रह गया है। वह अभी लाता हूँ। आज मीठे चावलों का जी चाहता है, ज़रूर पकाना। देखो कोई वक़्त सरकार से मुहलत मिले तो अहियापुर से पतीलियाँ ला देंगे।"

नजिबनिया ज़ेवर पहनती हुई बोली, "ऐ देखो, यह अँगूठियाँ उँगलियों में कैसी भरपूर बैठ गईं। जैसे मुए सुनार ने नाप के बनाई हों। देखो धागा मैला है, यह चम्पा कली के दाने दो ही एक दिन में बिखर जायेंगे। किसी जानिवकार पटवे से जल्दी गुंथवा देना और हाँ, पानदान का सब सामान ठीक चाहिये कल से। पान के बग़ैर बड़ी हैरानी होती है। मुग़लानी पर अली की संवार, उनके संग में तमाखू की आदत पड़ गई। और देखो हाँ, ख़ूब याद आया—बाज़ार जाना तो इत्र पानदान की डिबिया में लेते आना और कोई चीज़ नहीं बाक़ी। और हाँ, यह तो बताओ, डेवढ़ी पर तुम गये थे, वहाँ तो लोग चरचते होंगे? देखो ख़बरदार, ख़बरदार! यहाँ की टोह किसी को न लगे। कुछ किसी की लौंडी बाँदी तो हैं नहीं, डर काहे का? अपनी ख़ुशी की बात, न बनी चले आये। इस बात पर कोई फाँसी तो देने से रहा। यह तो ख़ुशी का सौदा है।"

"अजी वह तो बड़ी लम्बी बात है, महल में तो बड़ा हुल्लड़ हुआ, मगर कोई कर ही क्या सकता था? बाहर नवाब साहब शेख़ साहब से कुछ थाना की रपट का ज़िक्र हुआ, मगर बात मुध्म रही। मैं सुबह उठ कर मुँह अंधेरे तुम्हारे पास से गया, तुम जानो उस चुड़ैल की ख़बर लेनी थी। उस नेक बख़्त ने सारी रात मुहल्ले में क़यामत बरपा कर रक्खी थी। तालू से जो ज़बान लगी हो क्या मजाल? ख़ामख़ाह को नन्हीं को इतना मारा कि सारा कान लहू लहान हो गया। सुबह जो जाता हूँ, भरी बैठी तो थी ही, रात भर की झाँझ मुझ पर उतारी। छूटते ही टंगड़ी ली, 'सच-सच बताओ, रात को तुम कहाँ रहे थे?' हज़ारों गालियों कोसने पर उतारू हो गई। मुहल्ले वाले कानों में उँगलियाँ देते थे। लाख कहता होश में है, कल एक दोस्त की बारात में

लोग गये थे। सारी रात मुझे नहीं आने दिया। सुबह सवेरे जब लोग ज़री सो गये, तो मैं सर पर पाँव रख कर भागा। तुम जानो वही मेरा सोने का वक़्त है। जब तुम दस दफ़ा जगाती हो, तब तो ख़ुदा-ख़ुदा करके गिरता पड़ता जल्दी सरकार में जाता हूँ। चुस्की भी वहीं जाके पीता हूँ।"

"अच्छा हम नहीं जानते, यह नख़रा आये दिन तुम्हारी जान के साथ लगा है। अब तुमको हमारे आराम का पहले बन्दोबस्त करना होगा। और, जो तुम्हारी ताक़त से बाहर हो तो साफ़-साफ़ कह दो। कोई अपना दूसरा बन्दोबस्त करें, सख़्ती से सूम भला जल्दी देय जवाब, ऐ हाँ, न हगें न पनीड़ा छोड़े।"

"तुम तो अजब बातें करती हो, कुछ सोचती भी हो, जो मुँह में आया बक दिया। अभी यह गरमा गरमी है, ज़री बात ठन्डी पड़ जाय फिर सब ही कुछ हो जायेगा। और ताक़त की जो तुमने कही यह भला तुम्हारे कहने की बात है! ऐसी बातें अल्लाह न करे कहीं भले आदमियों में होती हैं? वह और होते होंगे जो मझधार में छोड़ते होंगे, जान जाये पर बात न जाए!" बख़्शू मोंछ पर ताव देकर बोला, "हमारी क्या कमबख़्ती है जो तुम ऐसा आदमी हाथ से जाने दें? यह सब तुम्हारे वास्ते तो जतन किये गए, और तुम्हीं ऐसी बात ज़बान से निकालती हो? वही मूत चुल्लू हाथ में—जो अगर तुम चाहोगी तो हर हाल में मज़े से कट जायेगी, और हमको तुमसे उम्मीद भी है, क्या मानी? जिस दिन से सामना हुआ है ख़ुदा की मेहरबानी से आज तक कोई बात ऐसी नहीं हुई, और यूँ तो दो बरतन जब एक पास होते हैं, ठेस लग ही जाती है।"

"यह ऐसी वैसी तो सुनते नहीं, अब तुमको हमारे आराम का सब ठीक बन्दोबस्त कर देना पड़ेगा। अल्लाह का दिया सब कुछ है, बाज़ार से सौदे शुल्फ़ की बातचीत है, जो तुम चार पैसे कमा लेते हो उस चुड़ैल को जाके देना, जो सौत बन के बैठी है। तुम तो ठहरे चूँटी भरे क़बाब,

हमारे तुम्हारे ख़ुदा बीच है। कोई दावा तो है नहीं, ख़ाली इमान का सौदा है। ख़रीदार ख़ुदा, बाज़ार मुस्तफ़ा। हम औरतबानी कहते हैं, अगर जो तुम्हारी नज़र टेढ़ी न हुई तो अल्लाह ने चाहा इसी घर में उम्र काट दी हो, जब ही तुम कहना कोई बड़ी बचाती थी, ऐ हम तो वह हैं कि आदमी की आबरू दीन दुनिया में दुरुस्त कर दें। क़ुरबान उसके, किसी बात की कोई लालच नहीं, यही जो कुछ उसने हाथ गले में दिया है यही मुआ क्या कम है? हाँ इस मुहल्ले में मकान बिके तो ले लिया जावे। माल का माल है, कोई टोह भी नहीं पा सकता। अगर कोई डर हो तो उठ चलो, किसी और गली में मज़े से चैन से रहें। तुमको अगर मौक़ा मिले आ जाया करना। हम अपने घर में किवाड़ बन्द किये बैठे रहेंगे।"

"वाह वा! तुम्हारी बातों ने तो शेख़ चिल्लियों को मात किया, ख़ूब पहले से तुम छट्टी के धान कूटती हो। अभी दो चार रोज़ ठहरो तो सही, देखा जायेगा। भागड़ क्या पड़ी है? इस बात पर पढ़े लिखों ने कहा है, 'जल्दी का काम शैतान का, धीरा काम रहमान का।' अभी अपने रोज़गार की ख़ैरियत तो मना लें। वह कमबख़्त रपट का झगड़ा ख़तम हो। हवास कहाँ है? तुम यक़ीन न मानोगी जले पाँव की बिल्ली हो रहा हूँ। दम लेने की छुट्टी नहीं, जो काम करना चाहिये सोच समझ कर करना चाहिये। क्या इसी मकान में नाल गड़ी है? अभी तो यूँ ही चलने दो और तुमको मैं देखता हूँ उसकी बड़ी फ़िक्र है। अजी पड़ी भी रहने दो। कई एक बच्चे हो गए हैं। मुझे बाज़ दफ़ा गुस्सा आता है; जी चाहता है पकड़ के उसके झोंटे निकाल बाहर कर दूँ। गलियों-गलियों भीख माँगती फिरे। फिर जी में कहता हूँ, इन बच्चों ने क्या ख़ता की है? फ़ाक़ों मर जायेंगे, दुनिया में अपनी नामूसी होगी। नहीं, मेरे दिल में रत्ती बराबर जो उसकी जगह हो, दिल ठहरा तो एक ही। उसमें दो-दो की समाई कहाँ? बस, जिसको दिया उसको दिया। अब तो जो चाहे सो हो जाय, तुम्हारी मुहब्बत के पानी में तो यार लोग

डूब गए, रात दिन सिवाय तुम्हारे ख़याल किस मनहूस को किसी दूसरे का होता है ? वल्लाह, बार-बार यही जी चाहता है कि दुनिया को छोड़ के तुम्हारे पास बैठा रहूँ। यक़ीन मानों, अपने दिल का तो यह हाल है कि तुम्हारे ख़याल में कभी-कभी कमबख़्त चुस्की तक भूल जाता हूँ। तुम्हारी सोहबत का ऐसा धुवाँधार नशा है कि कुछ सूझता ही नहीं !"

"ले चलो, हटो, बहुत न बनाओ, तुमने जो बनाई तो हमने भी भून-भून खाई। यह चोंचले अपनी बसिनिया के लिये तह कर रक्खो। मैं बेचारी क्या लौंडी, न कहीं मैका न ससुराल ! एक तुम्हीं अन्धे की लकड़ी हो। जिस कल बिठाओगे बैठूँगी, जिस कल उठाओगे उठूँगी। आज तक किसी ने मुँह नहीं देखा। फिर आजकल वह ज़माना बुरा लगा है, जिसके पास चार पैसे हुए किसी न किसी जतन से लूट खसोट के खा गए। बड़ी बड़ाई घर में किसी को रख लिया, कौवा हँकनी बने घर बचाया करो। और नहीं धता बताई, ख़ुदा वह दिन न लाये, क़िस्मत ने चार पैसे दिये हैं किसी के आगे हाथ न फैलाना पड़ेंगे, मियाँ जो ख़ुदाया सीधा होगा, देर सवेर खड़े तड़े बात पूछ लेना, कोई मरता है जीता है, यही मेहरबानी है।"

"यह सब बातें तो हैं, मगर इस वक़्त इतना काबे की तरफ़ मुँह करके तुमसे कहे देते हैं, आज तो तुम हमारी जान के मालिक हो, वल्लाह, अगर जान देने का मौक़ा हो, मुँह फेरें तो अपने बाप का जना नहीं !"

"ले, अच्छा अब तो तुम दम भर में चले जाओगे ! पानी वानी का बन्दोबस्त ठीक कर लो और हाँ किसी झाड़ू देनेवाली को लगा दो और भिश्ती को मकान बताते जाओ, देखो जता के कह देना, कपड़ा डाल के घर में आयेंगे, और जो शायद कोई पूछने आया तो क्या बताया जाएगा, सलाह कर लो जिसमें तुम कहो वही हम कहें।"

"हाँ, यह बात तुमने ठीक कही है। किसी को क्या पड़ी है ? हमने

कह दिया है जो कोई ऐसा ही वजिद हो तो कह देना तुम्हारे घर वाले नौकरी पर गए हैं। रात को आते हैं ? उनसे पूछ लेना।"

"जो कहें कहाँ नौकर हैं ?"

"कह देना कचहरी में, वहिदा अहिदा जो पूछें, कहना हमको मालूम नहीं।"

"अच्छा ले, ख़ुदा हाफ़िज़, सिधारो, मुल देखो, सवेरे आना, हम अकेले हैं और चार पैसा की चीज़ हाथ गले में !"

बख़्शू चला गया, नजिबनिया दीवार के पास आके पुकारने लगी—"बी पड़ोसिन, ए बी पड़ोसिन ! ऐ कोई है इस वर में ! ऊई, क्या साँप सूँघ गया, सब को, कोई मुनुकता ही नहीं ?"

"कौन है ? भई कौन ? ज़री सामने वार को आओ !" एक जवान की आवाज़ आई।

"एं ! अरे यह तो जिन्नात की आवाज़ मालूम होती है।"

"पड़ोस में परियाँ भी हैं !"

"जाओ हम तुमसे नहीं बोलते !"

"ओ हो, देखो, वल्लाह ऐसा न करना। नहीं एक आध का ख़ून हो ही जाएगा, ख़ुदा के लिए ज़री सूरत तो दिखाओ, आवाज़ ही पर ज़ख़्मी हो गए; दीदार से ज़ख़्म पर मरहम रक्खो।" दीवार की तरफ़ बलाएँ ले के और कलेजे की तरफ़ हाथ मार के जवान बोला, "वल्लाह ज़्यादा बेताब न करो।"

"यह फ़सल ख़ैर से तो कट जाने दो, फ़स्द लो फ़स्द ! तबीअत की ख़ैरियत नहीं।"

"अजी ख़ैरियत कहाँ ? ख़ैरियत तो तुम्हारे दुपट्टे के आँचल में बँधी है, अब तो तुम्हारे अख़्तियार में हैं मारो या जिलाओ।"

"अभी उम्र ही क्या है, दिल के अरमान तो निकाल लेने दो।"

"बस एक अरमान है, उसको तुम जानती हो।" नौजवान ने ठन्डी साँस भरी, फिर गा के बोला—

'तमन्ना है तेरी अगर है तमन्ना।
तेरी आरज़ू है अगर आरज़ू है!'

नजिबनिया हँस पड़ी—"लो साहब नये चाहने वाले पैदा हो गए, ख़ुदा जीता रक्खे, अभी तो दूध छूटा है!"

"अजी दुधार गाय की दो लात भली!" जवान बोला, "मगर मेंगनी भरा न हो!"

"यह लालबेगी कौन बोला?"

"अजी मेहतर सबसे बेहतर!"

"झाड़ू पन्जा और कहीं ले जाओ, जाके किसी करांची पर नौकरी करो। वह देखो बमपुलिस के जमादार पुकार रहे हैं!"

"वल्लाह किस सुथराई से जवाब देती हो, क़ुर्बान इस ज़बान के। इसी बात पर जी चाहता है मुँह चूम लें!"

"मुँह बनवाओ जाके!" नजिबनिया ने झाँक कर कान का ज़ेवर दिखाया।

जवान गाने लगा—

"रात वह यूँ हमको तड़पाते रहे!
बिजलियाँ कानों की दिखलाते रहे!"

"यह रात को तुम्हीं गाते थे?"

"ख़ुदा वह दिन तो करे, गले मतूल की ठहरे।"

"ज्यूड़ा, अजब मज़ेदार है, सलामती से नेकी उतरे, अब क्या, ज़री वही तान फिर!"

जवान ने गाना प्रारम्भ किया—

"ज़ेरे दीवार ज़रा झाँक के तुम देख तो लो—
नातवाँ करते हैं दिल थाम के आहें क्योंकर !
शर्म से आँख मिलाते नहीं देखा उनको,
पार होती हैं कलेजे से निगाहें क्यों कर।
जब वह आँखों में समाए मेरे दिल में आए,
बन्द हों नासेहे नाफ़ह्म की राहें क्यों कर।
चाह का नाम जब आता है बिगड़ जाते हो,
वह तरीक़ा तो बता दो तुम्हें चाहें क्यों कर ?"

नजिबनिया हँस पड़ी—"जो ऐसे भोले हैं फिर घर से अन्ना की गोद में क्यों न आये ? लो साहब इनको कोई अल्लाह का बन्दा बता दे !"

"तुम समझीं भी ?" जवान ने पूछा।

"लो ! भला समझने की बात है ? कोई शेख का चहेता है क्या ? किसकी बनाई है ? यह ठुमरी कहो बड़े होके आप आ जाइयेगा !"

"वह तरीक़ा पूछता है कहो कैसे चाहें ?"

"तरीक़ा वरीक़ा क्या ? इल्म तो है नहीं, जैसे चाहा जाय चाहो, दिल से दिल को राह होती है, जो बात बन सके, कोई बताने वाली बात है !"

"अच्छा न बताइये साहब !"

"वही तो मैंने कहा किसी अनीले की बात। दुनिया में पूछ-पूछ के चाहने वाले निकले। नाच न आए आँगन टेढ़ा ! अच्छे आए, कोई और ठुमरी गाओ !"

"जो तुम बताओ अब !"

"ऐ देखो वह चिड़िया वाली !"

"वह याद नहीं।"

"अच्छा नाव वाली, उसकी वाह अच्छी है, अजी वही चिड़िया अपना आशना ले जाओ, ऐ देखो, वह बेगुन की पार लगावे नाव !"

नौजवान चौंक पड़ा--"अ हा, हा, हा ! 'कहो बुलबुल से ले जाए चमन से आशियाँ अपना ।' और वह बेगुन की नैया पार लगा दे !"

"हाँ हाँ, वही वही !"

नौजवान फिर गाने लगा ।

"वाह वा, सुबहान अल्लाह !"

"आशिक़ !"

"चल झूठे बड़े आशिक़ बने हैं, कभी आशिक़ी की है ? नाम ही सुन लिया, अभी उम्र ही क्या है ? फिर बाबा अम्मा सर पर हाथ रख कर रोयेंगे !"

"याँ खेल भी खेले हैं तो बस इश्क़े सनम के !"

"ले अब जाते हैं ।"

"ख़ुदा के लिये ऐसा न कहो--कुछ आप मेरे दिल को भी समझाये जाते हैं ! आप अगर जायेंगी तो मेरा क्या हाल होगा ?"

"पड़े बका करो !"

× × ×

कुंडी खड़खड़ाई, फिर बख़्शू ने पुकारा--"दरवाज़ा खोलो, दरवाज़ा खोलो ।"

"अच्छा अच्छा ! सुना है जी आते हैं ।"

बख़्शू अन्दर आके बोला—"यह लो सब चीज़ें, ले अब तो हम जाते हैं, तुम हमारा इन्तज़ार न करना । खाना खा लेना । हमारा कोई ठीक नहीं है । आजकल ऐसी चारों तरफ़ से फ़िक्रें सर पर हैं । आज कई महीने से अपना दिल उचाट देख रहा हूँ । बहुत कट गई,

थोड़ी रही। क्या ज़रूरत कोई बात अपनी तरफ़ से ज़्यादती की हो ? हमको ख़ुदा का दिया सब कुछ है, ख़ुदा रोज़ी देने वाला है।"

"अजी हमको ख़ुद तुम्हारी नौकरी मन्ज़ूर नहीं, ख़ुदा ने खाने को बहुत दिया है। तीन रुपल्ली, वह भी सूखे हैं क्या चीज़ ? बड़ी बड़ाई दो चार आने दस्तूरी है। रुपये सौदे में मिल गए, सो वह भी कभी-कभी, हर हत्थे के नहीं हैं, कहां महीना बीस दिन में जाके क़िस्मत ने ऐसा ज़ोर किया तो भीट भी कम हो गई, हक़ीक़त ही क्या ? इतना तो पान पत्ते में रोज़ उठ जाता है।"

"ले, अब सलाह बताओ, किसी तरह इस कुत्ते ख़स्सी से छुटें। रोज़ का अज़ाब छूटे, आज क्या है साहब देर को क्यों आए ? कल बाज़ार में सौदे में देर क्यों लगी ? दिन-दिन भर दम लेने को बैठा रहता हूँ, तो क़सम ले लो, वहाँ किसी के भावें नहीं। इन्हीं बातों से जी खट्टा हो गया। हम तो उसी दिन समझ गये थे मियाँ ख़ुदा बख़्श ! यह जगह रहने की नहीं। रात दिन हड्डी पसली तोड़ो, सर का पसीना एड़ी को आए, वह हरामज़ादी झूठ-मूठ आके महल में टेसुवे बहाये, उसकी बात का यक़ीन हो, और हम इतने दिनों के नौकर झूठे ठहरे। कहो यह भी वक़्त की बात है, दूसरी सरकार होती तो घर में घुसने न पाती, जो कुछ झूठ सच कहती उसकी छानबीन की जाती।"

"अच्छा, अब उसका जिकरा क्या ? सारे पिन्डे की सुइयाँ निकल गईं, अकेली आँखों की बाक़ी हैं। घबराओ नहीं, देखो तो ख़ुदा क्या दिखाता है ? 'इन नैनों का यही बिसेख।' हाँ, अब यह बताओ, हमारे आने पर शेख़ साहब, मिर्ज़ा साहब ने क्या किया ? बेगम तो हमको बहुत याद करती होंगी, मुग़लानी एक ही कंगाला है।"

गुल गए, गुल्शन गए, जग में धतूरे रह गए !
बाज गए, हुमा गए, उल्लू के पट्ठे रह गए !

"तुमको वहाँ मारे जहाँ पानी भी न मिले।"

"उसी से खटका है, कई दफ़ा शहर में हैज़ा उबल आया। मुल ढड्डू को नहीं पूछा।"

"अजी लानत भेजो, वह कर ही क्या सकती है ? उनके फ़रिश्तों तक को ख़बर नहीं। मैंने यह भी सुन-गुन पाई है। नवाब साहब भी कुछ फिरे मालूम होते हैं। भला पूछो हमारा क्या कुसूर ?"

"हमारी ख़ुशी ! हमारा जी, अपने चले आये, क्या दुनिया ज़हान में कहीं हमारा ठिकाना नहीं ? अभी अपनी वाली पर आऊँ तो बेगम बन के दिखा दूँ। जैसे आदमी का बच्चा वह, वैसे सब। ख़ाली ख़ुदा की मेहरबानी चाहिये, वह न फिरा होना चाहिये। अभी कै रातें कटीं, कै दिन कटे, कहीं एक जगह जम के बैठ लें। अजी और कुछ नहीं अना-गीरी तो कहीं नहीं गई है। दस से कम न होगी, फिर खाना पीना, सब तनों से अच्छे से अच्छा पहनो और अच्छे से अच्छा खाओ और फिर सारा घर उल्टा ताबेदारी को महज़ूद। मज़े से एक दफ़ा पुलाव, या चैन से लेटी बैठी रहो। कोई काम किया ? नहीं तो चार आदमी और ख़िदमत को आठों पहर हाँ जी, हाँ जी ! ले तुमको ख़ुदा मुहलत दे। आजकल अन्नाओं की बड़ी माँग है, अपना लहू चुसाना बड़ा काम है।"

"तुमने भी कमाल किया, छुट्टी के वहाँ अभी से कटने लगे !"

"मैंने बात कही, दुनिया में एक से एक सरकारें पड़ी हैं, ख़ुदा हमको भी रोज़ी देने वाला है, चार को देके तो हम आप खा सकते हैं। बोलो ! दो आदमियों का ख़र्च ही क्या ? सेर भर कल पकाया था, सारी रोटियाँ उसी तनों रक्खी हैं। आज थाक-थाक भोर को उठाया, तुम्हारे लिये चावल बहुत थे, सालन ऐसी मेहनत से पकाया, एक बोटी की तो गुनहगार हूँ। उसी तरह यूँ उठा के रख दिया। हाँ कोई बेचारी, भूखी, टूटी मिल जाये, रखवा दो, बाज़े वक़्त हाथ खाली नहीं होता, ऊपर के काम काज के वास्ते और बाक़ी मज़े से बैठी रहेगी। पेट भर खाना देंगे, फटा पुराना भी दे देंगे।"

"अजी इन बातों की फ़िक्र तो मुझे ख़ुद है। यूँ न मिले तो रुपया बारह आने तक महँगी नहीं। ले अच्छा अब यार लोग चलते हैं।"

यह कह कर ख़ुदा बख़्श चला गया।

११

नजिबनिया दीवार के क़रीब जाके बोली—"बी पड़ोसिन, ऐ बी पड़ोसिन, क्या चुप शाह के बाल की बनी हो? आज बिल्कुल सन्नाटा है!"

गाने की आवाज़ आयी—

नहीं रौज़न जो क़सरे यार में परवा नहीं मुझको,
निगाहें शोख़ रख़ना करती है दीवारे आहन को।
ज़ेरे दीवार ज़रा झाँक के तुम देख तो लो,
नातवाँ करते हैं दिल थाम के आहें क्योंकर?

"हाँ हाँ कोई बोलता तो है, मगर नहीं!" नजिबनिया बोली।

"अजी वाह!" फिर आवाज़ आयी, "साफ़ छिपते भी नहीं सामने आते भी नहीं।"

"बैत तू ऐसी करे गोरिया जैसे लुटिया डोर,
अपना गला फँसाय के जो दूर से लावे बोर।
हमरी तुमरी उमर बराबर चल अरहर के खेत,
कहो बुलबुल से ले जाये चमन से आशियाँ अपना।"

"यह परकटी अपने ही तक रखिये, वो कहते नहीं, यह मुँह और चार उँगली लासा।" नजिबनिया बोली और सर उठा कर देखा, चार आँखें हुईं।

"ऐं!" जवान बोला, "किधर से सूरज निकल आया? ओफ़ओह, तीर मारा, दिल निशाना हो गया। ले अब दिन भर काम हो चुका, ख़ुदा के लिये एक बार फिर सूरत तो दिखाओ, इसी सहारे पर ज़िन्दगी काटेंगे।"

नजिबनिया अन्दर ही अन्दर ख़ुश होकर बोली—"कोई आता न हो ! दिल ठिकाने रक्खो, मौक़ा हुआ करे, इशारा कर दिया करो, ऐ हाथ ख़ाली होगा आ जाया करेंगे।"

"अच्छा अब कही वदी हो गयी, इस वादे का ध्यान रखना, दीवार के पास आकर जब हम तीन दफ़ा खट-खट करें तो तुम समझ जाना।"

अपना चेहरा और गले के ज़ेवर दिखा के नजिबनिया बोली—"अच्छा अच्छा, ले अब जाते हैं, अच्छे रहना।"

"अजी ज़रा ठहरो तो सही, मैं जी भर के बलाएँ तो ले लूँ।"

"अभी आते हैं, तुम यहीं रहना।"

नजिबनिया ने आकर पान बनाया, दो-तीन इलाइचियाँ डालीं, और गिलोरी दिखा कर बोली—"यह लेते जाओ, देखो वह बड़ा ज़ालिम है ? अजब सक्की के फन्दे में फंसे, बू न फटने पाये, बस हमीं तुम जानें—ले अब जाते हैं, फिर मिलेंगे।

× × ×

कारख़ाने में कारीगर ने नन्हें मिर्ज़ा से कहा—"ले नन्हें मिर्ज़ा, ले भाई माल दो, सब हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं, आख़िर आज तुमने पहले से क्यों न निकाल दिया, तारकशी का लौंडा अभी बेकार को बैठा है।"

"अजी तो क्या सब मेरे ही सर हैं ? उठा क्यों नहीं लेते ?"

दूसरा कारीगर बोला—"आपके हाथ का काम था, रोज़ आप ही देते थे, इस मारे कहते नहीं, तुम उस्ताद से कह दो, जो आये अपना काम करने लगे, काहे को तुम्हारा रास्ता देखे।"

"अजी आप दबाव किस पर डालते हैं ? यहाँ ऐसी किसी की परवा भी नहीं। आइये मुक़ाबला कर लीजिये, निकल जांय जब ही कहो, ऐसे कारख़ाने को मैं समझता क्या हूँ ?"

"नन्हें मिर्ज़ा !" उस्ताद ने डपटा, "यह तुम क्या औल-फ़ौल बकते हो; अपने हवास में हो ?"

"उस्ताद, देखिये मैं आपका बहुत मुँह करता हूँ, आप भी उन्हीं की सी करते हैं। बात समझते ही नहीं, ये लोग हर वक़्त छेड़ख़ानी करते रहते हैं, किसी से क्यों दब कर रहने लगे ?"

"मैं बहुत तरह दिये जाता हूँ।" उस्ताद बोले, "तू है कि माश के आटे की तरह ऐंठता ही जाता है। कौन सी बात बुरा मानने की थी ?"

"हमारा जाने ख़ुतका !" नन्हें मिर्ज़ा ने कहा।

"ले अब तुम बहुत बढ़ चले, मैं बहुत छोड़े जाता हूँ। चुप रह मरदूद, पाला पोसा, इतना बड़ा किया, तुझको तमीज़ तो थी नहीं, सिरे से सब काम सिखाये, सुई पकड़ना तो आता न था। यह हमारी जूतियों का सदक़ा है, तू आज इस क़ाबिल हुआ, और फिर देखो तो, गुर्रे डब्बे देने को तैयार। सब अख़्तियार दे दिया, जो चाहो धरो उठाओ। किसी बात की परवाह नहीं, जैसे ग़ैर आदमी आकर बैठ गया, सारा झंझट और फ़िक्र मेरे सिर पड़ी। अगर आज कान पकड़ कर निकाल दूँ तो भीख मांगे।"

"चलिये, हम भीख मांगें, आपकी बला से ? आपके दरवाज़े पर आयें दस जूतियाँ मार लीजियेगा। आप बड़े ख़ुदा ही तो बनके आये हैं; अभी बम्बई चला जाऊँ तो तीस-चालीस की कहीं नहीं गई।"

"जा निकल जा मरदूद, हट जा मेरे सामने से; वह झाँपड़ दूँगा कि अभी मुँह चर्ख़ी हो जायगा।"

कारख़ाने के कई कारीगर एक साथ बोल पड़े, "जाने दीजिये उस्ताद, जाने दीजिये। ये बड़े नालायक़ हैं। उस्ताद बाप से बढ़ कर होता है; इनकी नादानी है।"

"यह यूँ ही नहीं मानेगा !" उस्ताद ग़रज कर बोले—"आज जूते से ख़बर लूँगा, च्यूँटी के पर लगे हैं। अभी जुमा-जुमा आठ दिन के

हुए हैं। ऐसे लौंडे मैंने बीसों चरा के फेंक दिये। ऊँट जब तक पहाड़ के नीचे नहीं आता अपने से किसी को बड़ा नहीं समझता।"

"उस्ताद, देखिये आप बहुत बढ़े जाते हैं। कल ये जो इस कारखाने में पेशाब भी करने आये तो वह अपने बाप से नहीं। आज आप अपना सब कुछ समझ लें; क्या कुछ लँगड़े-लूले हैं? जहाँ हाथ-पाँव चलायेंगे खाने भर को मिल ही जायगा।"

"अजी जाने भी दो!" एक कारीगर बोला, "तुम लौंडापना करते हो। उस्ताद हैं, एक बात कह भी दी तो ठीक, और जाने आने की बात, लगी रोज़ी भी कोई छोड़ता है?"

किसी तरह तत्तो-थम्मो हुई।

× × ×

रात के लगभग दस बजे हुए थे, नजिबनिया चुपचाप पड़ी हुई थी।

"खोल दो।" एक आवाज़ सुनाई दी।

"कौन है?" नजिबनिया ने पूछा।

"हम हैं।" बख़्शू बोला, "और कौन होगा? क्या सोती हो!"

"आँख लग गयी थी, आवाज़ नहीं पहचानी। अकेली फिर टुटरूँ टूँ, न कोई आनेवाला, न कोई जानेवाला। तुम्हारा आज दिन भर पता न चला। देखो, तुम रोज़ आया करो तो ज़री सबेरे आया करो। फिर हुक्क़ा पान खा पी के रात गये अपने घर जाया करो। बात यह है, वह बड़ी कंकाला है, ऐसा न हो, सुन-गुन पाये और चढ़ दौड़े सरकार में। सब बातों में होशियारी चाहिये, हर तरह चौकसी रहे। और देखो दिन को जो भिश्ती आता है, दरवाज़े पर खड़ा होता है। कभी-कभी गली के लौंडे छेड़ते निकल जाते हैं, भदर-भदर करते हुए। कलेजा धक् से रह जाता है, हज़ार तरह के हरामज़ादे होते हैं।"

"अच्छा तो तुम एक काम करो। कोई चादर-वादर दरवाज़े पर डाल लो। मैं भी सोचता हूँ, कोई सुन-गुन न पाये। अंधेरे-उजाले इधर

हो निकला करूँ। दिन दोपहर यहाँ आना जाना अच्छा नहीं। और तुम जानो, जवानी क़सम, ख़ुदा ने खाने भर को दिया है। अब दिल के पानी पीने को जी नहीं चाहता। नौकरी चाकरी अब दूभर मालूम होती है।"

"हाँ एक बात मैं कहती हूँ, हिस्सा-विस्सा सब कर लेना चाहिये। यह तो कहो मेरी ज़ोरा-ज़ोरी से दो बातें निकल आईं; नहीं तो तुम ऐसे सुस्त अपाहिज हो, आजकल आजकल करते-करते बरसों काट दिये।"

"अजी घबराती क्यों हो? लेने को कहो अभी तो खड़े-खड़े बाएँ हाथ से रखवा लूँगा। कौन ऐसा धन्ना सेठ है जो माल दबायेगा? मगर काम करना चाहिये धीरज के साथ; साँप मरे न लाठी टूटे। तेल देखिये तेल की धार। मगर पूरा भरोसा है इन पर।"

"अच्छा ठीक, बाबा मरेंगे तब बैल बिकेंगे। दो-चार चीज़ों की हमको बड़ी ज़रूरत है, बड़ा हर्ज है।"

"कहो, अभी तो सामान कर दूँ। बस, इतनी देर है, तनख़्वाह मिल जाय। तो फिर मैं बादशाह हूँ। हम कौड़ी-पैसे का मुँह नहीं देखते, हाथ का मैल है, तुम्हारी माँग और उसमें हचर-मचर। जवानी क़सम, न हुआ इस वक़्त मेरे पास रुपया, तुमको घर में बेगम बना के बिठा दिया होता। और आज हो ही बेगम, शक किसको है? अरे, क़सम है, चेहरे-मुहरे में सैकड़ों बेगमों को मात करती हो, परियाँ शरमाती हैं। उम्र भी वैसी ही है, किसी बात में रत्ती भर तो कमी हो।"

"ले यह चोंचले तो अपने तह कर रखिये!" नजिबनिया मुस्करा कर बोली, "यह वहीं अपनी चुड़ैल को सुनाइयेगा। ले आज हमारा एक काम है, ज़रूर हो। सौ काम छोड़ के हमारा काम होना चाहिये, अल्लाह फिर किससे कहेंगे!"

बख़्शू ने उसके गले में हाथ डाल दिया—"कहो कहो! अजी तुम्हारे वास्ते तो जान हाज़िर है। अगर तुम्हारा ही काम न किया तो

किसका करेंगे ? जवानी क़सम, मुझे तुम्हारे काम करने में वह मज़ा मिलता है !"

"चलो हटो भी !" नजिबनिया झेंप कर बोली ।

"क़तल करती हो ! वल्लाह क़तल । तुम्हारा मारा पानी नहीं माँग सकता, जीती रहो, वल्लाह जी ख़ुश कर दिया ।"

"जीते रहो, अभी तुमको बहुत से काम करना है, उस हरामज़ादी का गोड़-गड़हा करना है ।"

"अजी हम तो मर ही चुके हैं ।"

"मगर मरते नहीं देखा, कहते सब को सुना ।"

"यह न कहो ! अभी उसी दिन की बात है, एक हमारा यार इतनी सी बात पर अपने माशूक़ के सामने गर्दन काट कर मर गया और फिर इसी अमीनबाद में, "ख़ुशी से काट ले दिलदार गर्दन !" बल्किन उसी दिन से सरकार ने मनाही कर दी, ख़बरदार शहर में यह गाना कोई न गाये । बस, ऐसे होते हैं मरने वाले । एक दिन देख लेना, हमारी जान की ख़ैरियत नहीं । बस, जी चाहता है तुम पर निछावर हो जाऊँ । ख़ुदा न करे, जी से लगी ह , वे तुम्हारे एक-एक घड़ी पहाड़ मालूम होती है ।"

"हमको नैनसुख ला दो !"

"क्या करोगी ?"

"करना क्या है ? पायज़ामे बनायेंगे, मुआ पिन्डा हर वक़्त जलता रहता है । रानों में दाने पड़ गये हैं; अब हमसे यह मुए बालिश्त भर के पहुँचे नहीं पहने जाते । मिस्सी भी लेते आना । बाज़ार तो जाओगे, ख़ुशबूदार सुर्मा भी लेते आना और असग़र अली के यहाँ से बहुत-बहुत ख़ुशबूदार तेल और इत्र भी लेते आना ।"

"अच्छा, यह बताओ कितने-कितने का चाहिये ?"

"इत्र तो कोई दो आने का बहुत होगा, और दो ही आने का तेल और दो ही आने का सुर्मा और दो ही आने की मिस्सी भी चाहिये । कौन बार-बार मँगाये ?"

"और क्या ! बस !"

"और नैनसुख तो रह ही गया।"

"ऐ लो हाँ !" नजिबनिया मुस्करा कर बोली, "क्या भुलक्कड़ हूँ !"

"या अल्लाह, कुछ मालूम तो हो कितने पायजामे का, किन-किन दामों का ?"

"हम क्या जानें, कम से कम भला चार पायजामे तो हो जांय।"

"फिर भी न बताया कितना चाहिये ?"

"कितना क्या ? जितने में बनते हों, हमारी जाने बला !"

"आख़िर बाज़ार में जाके क्या कहेंगे ?"

"बड़े पइँचे के पायजामे। कोई मैं जानती हूँ पचास गज में होंगे। देखो, अच्छे ख़ासे हों। कपड़ा खगे नहीं, नहीं मैं फाड़ के फेंक दूँगी।"

"ओफ़्फ़ोह ! तो आपको बज़ाज की सारी दूकान चाहिये, अरे पायजामा होगा या डेरा।"

"अच्छा तुम्हीं बतलाओ।"

"अजी हमारे घर में तो ६ गज में बनता है; तुम बहुत करो बारह में बनाओ।"

नजिबनिया बिगड़ गयी, "छे गज और बारह गज रक्खो कफ़न के वास्ते। ऐ हम उस टुकड़गदिन के बराबर हो गये। देखो साहब ! मुग़लानी को हमने देखा है, बेगम साहब का पायजामा महीनों में सीती थीं। अच्छा साहब, मालूम हुआ तुमको हमारा सौदा लाना बुरा लगता है, जाने दो।"

बख़्शू धीरे से बोला—"तुम न जाने कैसी बच्चों की सी बातें करती हो। ज़रा सी बात में बिगड़ जाती हो। देखो, आँखों में आँसू भर आये। इस वक़्त बड़ी ठेस पहुँचायी तुमने दिल को। वल्लाह कुछ खा के सो रहता। फिर कहता हूँ, पत्थर तले हाथ रहे ! अरे नादान जब जान ही न रहेगी यह मज़े कौन उठायेगा ?"

"अच्छा जाने दो ये बातें, तुमको बुरा लगा, मैंने हँसी में कही थीं; तुमसे न कहें तो किससे कहें ? कोई और यहाँ बैठा है ?"

"नहीं वल्लाह मुझे इसका ख़याल नहीं, इसी पर तो मैं ख़ुश हूँ। जब तक दम में दम है तब तक निवाहना, बड़े मर्दों का काम है। वल्लाह जवानी क़सम, इसी ने ऐसा-ऐसा डुबोया है, दूसरा होता थाह न पाता।"

नजिबनिया गिलोरी बढ़ाते हुए बोली, "लो, पान लो ? ले हाँ, अब कहो यह चीज़ें कब लाओगे ?"

"आज ही लो, ख़ाली बात यह है आजकल ज़री बे ख़र्च हो रहे हैं। सरकार से तनख़्वाह भी नहीं मिली। अपनी तरफ़ से माँग भी नहीं सकते, अजब कुतिया के छिनारे में जान पड़ी है। कहावत है, बँधा ख़ूब मार खाता है।"

"ख़र्च को क्या फ़िक्र ? हम देंगे जी, भला तीन रुपये में क्या हो सकता है। नंगी क्या नहायेगी, क्या निचोड़ेगी ? तीन रुपल्ली तो नोन तेल से चटर-पटर उठ जायेंगे। ब्याह नहीं किया, बारात तो देखी है। अरे, अभी मैं अपनी हाथ गले की कोई चीज़ उतार दूँ, बरसों के लिये बहुत है।"

"अच्छा जो तुम्हारी ख़ुशी, मैं तुम्हारी बात को काटता नहीं। तुम्हें किसी तरह की तकलीफ़ न हो, लाखों की दौलत तो तुम मिलीं।"

"जड़ाऊ पत्ते तो पानदान में रक्खे हैं। कानों में तो यही पाँच-पाँच आते हैं, न हो एक पत्ता ले जाओ !"

बख़्शू धीमी आवाज़ में बोला, "अच्छा तो दे दो, आज हो सका तो किसी वक़्त आज ही, नहीं तो कल सब चीज़ें यहीं लो।"

यह कह कर उसने पत्ता जेब में रक्खा।

"अच्छा अब जाते हैं, खाने का इन्तज़ार न करना।" बख़्शू ने कहा और बाहर निकल गया।

१२

नजिबनिया ने कंकरी पड़ोस में फेंकी।

दीवार के उस पार से जवान की आवाज़ आई—"कहो ! मौक़ा है ?"

नजिबनिया दीवार पर उचक कर बोली—"कहो, अच्छे तो रहे ? क्या करते थे ?"

"अच्छे ? अच्छे क्या ? तुम्हारी मुहब्बत के दुःख में फँसे हैं—सिसकते पड़े हैं आशिक़; न जीते हैं न मरते हैं। ख़ाली बैठे थे। हमने कहा जब तक दो चार ठुमरी कर डालें। इसी तरह उठ कर चले आये, कपड़े भी नहीं पहने।"

"अरे हाँ ! हम भी यही कहते हैं, नंग-धुड़ंग कौन निकल आया। तुम पर यह लुंगी क्या फबती है ! डंड करते हो क्या ?"

जवान अपने डंड देख कर बोला, "वल्लाह, क्या बात बनाती हो, यह तो मिट्टी ऊपर से लगायी है, फ़ायदा करती है, क्या कहें, डंड तुमको दिखलाते, पर औरतों के सामने कसरत मना है। ख़ैर अच्छा, ख़ुदा वह दिन लाए.......!"

"यह मकान तो तुम्हारा ही होगा ?"

"अजी यह मकान तो हमारी कसरत करने का है। यहाँ कोई आ-जा नहीं सकता। इसके उस पार कारख़ाना है, उसमें कारीगर लोग बैठते हैं।"

"हाँ, जब ही मैं कहती हूँ, यह उजाड़-पजार कैसा पड़ा रहता है; ख़ाली एक तरफ़ छप्पर !"

"हाँ ! एक बात आपसे कहनी थी !" जवान धीरे से बोला।

"कहो कहो, कोई है तो नहीं !"

"भला कोई मिलने का मौक़ा हो सकता है ?" जवान क़रीब आ कर बोला।

"पाक मुहब्बत दूर ही से अच्छी, उसमें बड़ा मज़ा है। खड़े रहना मैं गिलोरी बना आऊँ।"

गिलोरी बना कर लायी, फिर बोली--"लो ! मगर हाथों में तुम्हारे मिट्टी भरी है, मुँह में लो।"

"कैसे पहुँचें ?"

"तले कुछ रख लो ?"

"ठहर जाओ !" यह कह कर जवान ने नीम की डाली पकड़ कर छलाँग लगायी !

"हाँ, हाँ ! पेड़ हिलेगा, गली में कोई देख न ले ?"

जवान दीवार पर पहुँच गया।

"देखो, पाँव संभाल कर रखना, दीवार बोदी है !"

"हम तो बोदे नहीं, अगर कहो तो झम से तुम्हारे घर में कूद पड़ें।"

"ले बैठ जाओ !" नजिबनिया हट कर बोली—"झपाक से, लो यह पान मुँह में ले लो।"

"वाह वा ! बकरी ने दूध दिया तो मेंगनी भरा, बाएँ हाथ से तो पान कभी न लेंगे।"

नजिबनिया ने दाहिने हाथ से पान बढ़ाया, "लो, अब तो लोगे ?"

"हाँ हाँ ! पर रहने दो साहब अपना पान, वक़्त पर काम आयेगा, क्यों ख़ून कराती हो ?"

"लो साहब ! उल्टे हमीं से बिगड़ गये। पहले मुँह चूमते गाल काटा।"

"वाह क़ुर्बान आपकी समझ के, मालूम हुआ आदमी हो बड़ी पूँछ की।"

नजिबनिया ने ठट्ठा मारा, "अजी इसका मज़ा यह है कि पान अपने मुँह में लेकर खिलाओ यारों को। यह क्या, भीख की तरह हाथ उठा कर दे दिया।"

"मआज़ अल्लाह! क्या बातें बनाते हो? अच्छा लो! तुम्हारी ख़ुशी है तो यहाँ इन्कार नहीं।" पान दाँत में दबा कर के जवान की ओर मुँह बढ़ाया। जवान ने बेतक़ल्लुफ़ी करके चटाख़ से प्यार ले लिया, "भला सेब को छोड़ के पत्ते किसने खिलाये हैं?" जवान हँस कर बोला।

"तुम हो पूरे लंगूरे!" नजिबनिया गिलौरी दाहिने हाथ में लेकर बोली—"ले के गालों को खराब किया, ले अब पान लेते हो या फेंक दूँ?"

"अच्छा, अच्छा ले आओ!" जवान बोला—"मेवा खा के पान खाते हैं।"

"हो तुम बड़े नटखट! आज कैसा-कैसा हैरान किया मुझको? देखूँ तो सही, दुपट्टा में मिट्टी तो नहीं भर दी, ज़री हट के पड़ो, उई नौज।"

"तुम्हारे वास्ते अगर आज दुनिया की चाहे कालिख लग जाय, जो हो सो हो।" जवान ढिटाई से बोला।

"यह तो सही, अब बताओ कैसे मिलेंगे? मगर देखो, यह कहे देती हूँ, यह कानों कान कोई न सुने। नहीं, बहुत ही बुरा होगा। अरे तुम मर्द ठहरे, तुम्हें क्या, अपने यार दोस्तों में बैठ के डींग मारोगे; आबरू जिसकी बन जाये बन जायेगी। हम तो कहीं मुँह दिखलाने के लायक़ न रहेंगे।" यह कहते-कहते उसकी आँखों में आँसू भर आये, "तुमको देख कर जी चाहा दो चार बातें कर लें, तुम्हारी भोली भाली सूरत पर प्यार आया, तुम एक ही छटे लंगूर निकले।"

"अजी इस पर न जाएँ, तुम ठहरी दूसरों के बस की।"

"इसका तो ख़याल न करो। यह तो दिल का सौदा है। अपनी ख़ुशी की बात है, कुछ किसी की लौंडी बाँदी तो नहीं।"

"तुम तो परी हो परी, न मालूम किस देव के फन्दे में फँस गयीं।"

"देव-वेव कौन है? वही कहावत है, मानों तो देव नहीं तो पत्थर। आज ज़री चाहे उठ खड़े हों, यह मरदुवा हमारे मकान के पास रहता है। घर में ऐसी ही बात हुई उठ खड़े हुए। खाने-पीने की कमी न थी। अब्बा दुकानदार थे, लाखों का सामान, दस नौकर चाकर आगे हैं। एक बात हुई, मन को बुरी लगी, भरी थाली में लात मार कर उठ खड़े हुए। जो है बहुत है, मेरी ज़िन्दगी को बहुत है।"

जवान उसके ज़ेवर को भाँप कर बोला—"तुम्हारी बातों से जी बेचैन हो उठता है। अब यह बताओ हमारी ज़िन्दगी की भी कुछ फ़िक्र है तुमको?"

नजिबनिया हँस पड़ी—"वाह! क्या मुँह का निवाला समझते हो? ठहरो, ज़रा दम लो; देखो, ऊँट किस कल बैठता है। क्या अभी जल्दी पड़ी है? काता और ले दौड़ी, अभी के दिन हुए और के रातें?"

"अजी आप यूँ ही बातें बनाइयेगा? यहाँ दिल का यह हाल है एक पल आपे में नहीं। कल किस काफ़िर से खाना खाया गया हो। रात आँखों में कटी, करवट लेते-लेते पसलियाँ दुख गईं। काम में भी जी नहीं लगता, तुम्हारे कारण कल उस्ताद से भी उलझन हो गयी। दुनिया अन्धेरा मालूम होती है, मालूम नहीं क्या मोहनी मन्त्र फूँक दिया तुमने? तन बदन की ख़बर नहीं, कभी-कभी तो जी कहता है पर लग जाये और तुम्हारे पास पहुँच जाऊँ। यह क्या कर दिया तुमने, अब जो कुछ धुन है यही, तुम किसी तरह मिल जाओ। तुमको क्या? मज़े से घर में बैठी हो, अरे ज़ालिम गुज़रती है तो हम ऐसों पर?"

"अरे सुना है ऐसा बहुत।" नजिबनिया मुँह बना कर बोली।

"तो क्यों साहब ! हमारा भी दुख ऐसा ही है। अच्छा, फिर सुनाने से क्या फ़ायदा ? अन्धे के आगे रोये, अपने दीदे खोये।"

"हाँ साहब, हम ऐसे ही हैं। दुनिया अपना रोना रोती है और जो किसी पर गुज़रती है उसकी क्या जाने जूती। तुमको बातें बनाना ख़ूब आती है। समझ लिया, यह नादान अहमक़ हैं। ख़ूब बनाओ। जो हम पर बीत रही है ख़ुदा दुश्मन पर भी न डाले। भला दिल में सोचो, अगर जो कोई बात न होती तो हम काहे को मिलते, मुल हमको यह बात मुँह से न निकालनी चाहिये थी, तुम और फूल जाओगे, मगर ख़ैर ! अब जो कही सो कही।"

"देखो, इस समय की बात का ध्यान रखना, ऐसा न हो किसी वक़्त भूल जाओ, तुमने तो दिल्लगी की। पर यहाँ मारे अभागपन के दिल लग गया। ख़ैर, और कुछ तो नहीं कहते, इतनी बात चाहते हैं; कभी-कभी रात दिन में यह सोच लिया कीजियेगा, कोई आप पर जान देने वाला भी है। लो, अब जाते हैं, पर निराश जाते हैं, आपका कुछ गिरह से ख़र्च नहीं होता।"

नजिबनिया जी में ख़ुश होकर बोली—"वाह, अच्छी कही; इनके लिये कुछ ख़र्च ही नहीं होता, अरे यह तो इज़्ज़त आबरू की बात है। मोती से आबरू उतर जाए, फिर आदमी में रहता ही क्या है ? देखो, घबराओ ना, बहुत मिठाई में कीड़े पड़ते हैं। फिर किसी दिन देखा जायगा।"

"अच्छा लो, अब जाते हैं ! क्या कहें ? तुम्हारे पास से उठने को जी नहीं चाहता। उस्ताद आते होंगे, उनके टुटकोरे अलग, तुम्हारी दूरी अलग, एक बात हो तो कहें, ज़िन्दगी अजीरन है।"

"हमारा क्या है, तुम अपना ही समझो।"

जवान नीचे उतर गया और नजिबनिया दीवार के पास से हट गयी।

बख़्शू ने कहा—"यह लो ! आज तो बिल्कुल थक गये, एक-एक चीज़ें ढूँढ़ते आँधी रोग आ गया। फिर लाओ-लाओ, चौक से काले कोसों, पसीने में तर हो गये, और फिर कई एक चीज़ें नहीं मिलतीं। मिस्सी वाले की दूकान बन्द थी, नहीं मालूम उसको हैज़ा हो गया या कौन आफ़त आयी।"

"यह तो कहो वह कुत्ते को गयी।"

"आराम से ज़रा बैठने तो दो, सब बताते हैं। घबरायी क्यों जाती हो, भई तुम्हारी जल्दबाज़ी हाथ-पाँव फुलाये देती है। पहले यारों को हुक़्क़ा तो पिलाइये। जवानी क़सम, रास्ते में कहीं जो दम भर ठहरते हों। मारा-मार चले आते हैं, रास्ते में रज़्ज़ाक़ ने लाख कहा। दो फूँक पीते जाओ, क्या ताव आ रहा है; बहुत जी चाहा, पर हमने कहा, बहुत देर हुई, तुम बैठी राह देखती होगी। एक-एक दम लाखों बरस के बराबर है। ग़ुलाम हुसैन के पुल पर चाय की दूकान पर हमारे लंगोटिया यार मीर साहब मिले। बहुत घेरा, चुस्की पीते जाओ। मैंने कहा भाई साहब माफ़ रक्खो, इस वक़्त मैं बड़े काम में हूँ, मुझे कोई इन्कार नहीं, फिर किसी दिन देखा जायेगा। एक दिन के एक सौ आठ दिन, तुम कहीं भागे जाते हो या हम ?"

"अरे यह ताँता पवांड़ा होता रहेगा, मुई बात न हुई शैतान की आँत हुई !" नजिबनिया उक्ता कर बोली—"ज़बान क्या है मुई राँड की चरख़ी ? मतलब की बात, बारह-बारह चौबीस कोस नहीं। यह सब क़िस्सा दुहरा गये, हाल न मालूम हुआ, चीज़ गई कुत्ते की।"

"अजी चीज़ को क्या पूछती हो ? सब रुपया रेज़गारी और टके मिलाये कोई पौने बारह आने को पड़ी। अच्छा, अब अपना हिसाब समझ लो। लो, छब्बीस का नैनसुख; पूरा थान है, सात का यही होगा। इस अभागे को उठाये हाथ भूल गया। ओफ़ओह ! मालूम होता है सीसा मिलाया हुआ है ! कहने को तो सूत है ! यह इत्र और तेल लो,

देखो संभाल के रखना, शीशी टूट न जाये। लो यह पौने चार रुपये बचे हैं, इनकी मालिक हो।"

"नैनसुख तो अच्छा नहीं, न मालूम तुम कहाँ से उठा लाये! बेगम साहब के पायजामे के वास्ते तो बड़ा चिकना आता था, जैसे केले का गाभा। यह मुआ मोटा कुद्दड़ है। किससे पहिना जायेगा? तमाम रानें छिल जायेंगी। इसी मारे हमने कहा था हल्का-हल्का घर में अच्छा होगा, और हाँ रंग की पुड़िया तो तुम लाये ही नहीं।"

"जो जो तुमने बताया ले आये।"

"अच्छा अगर जो हम भूल गये तो तुमको क्यों न याद आया? तुमको ख़ुदा ने इतनी समझ नहीं दी! यह न समझे, आख़िर क्या सफ़ेद पायजामा पहनेंगे? यह रंडसाला तुम्हारी पुच्छल को फले।"

"अजी तुम बात भी सुनती हो? मैं जो कहता हूँ, रंग की कोई बात नहीं, इतनी रात को पैसे, दो पैसे की पुड़िया दूँ, इसमें बुरा मानने की क्या बात है? हमारे जीते जी तुम क्यों रंडसाला पहनने लगीं? उसी को तुम जितना चाहो कोस लो। मगर यह तो सोचो, किसके मरने पर वह राँड होगी, यह तो हमीं को कोसना ठहरा।"

"हम क्या जानें!" नजिबनिया मुँह बना कर बोली, "जो हमारे साथ जैसा होगा वैसे ही हम भी होंगे। मुफ़्त मेरा सब्र समेटते हो। तुमको मैंने कौन बात कही, तुम अपने घर गये होगे, मैं न मानूँगी? बस! उस पुच्छलपाई की झाँझ उतारते हो। आज ज़री सी मेहनत करनी पड़ी बस चीं बोल गये। फिर किस बूते पर तित्ता पानी? सारी हाँडी में एक चावल टटोला जाता है। बस मियाँ ताँत बाजी राग बूझा। इससे अच्छा तो यह है साफ़-साफ़ जवाब दो, हम भी छूटें तुम भी छूटो।"

"अजी साली पैसा की पुड़िया पर यह तूमार? लाओ, इसी वक़्त मैं लाये देता हूँ। हुक़्क़ा फिर आके पियूँगा। वल्लाह, तुम्हारी इस वक़्त की बातों पर बहुत दुख हुआ मुझको।"

"नहीं रहने दो, गली में एक मिस्सी सुर्मे वाले निकलते हैं, मैं आप पुकार लूँगी। मुझे और भी कई चीज़ें लेनी है।"

"नहीं! वल्लाह! अगर दुख से कहती हो मैं लाने को तैयार हूँ।"

"नहीं! मैंने तो हँसी में कही थी। तुमने बुरा माना, जाने दो। तुम भी बच्चों की सी बातें करते हो। अच्छा तो अब देर होती है, तुमको रात को सोना है। दिर भर थके मांदे रहे हो। मगर देखो, सुबह को डेवढ़ी पर जाना तो इधर होते जाना। और यह तो बतलाओ, उस पुच्छलपाई ने सुन-गुन तो नहीं पाई? डेवढ़ी पर तो हमारा ज़िक्रा नहीं होता?"

"अरे गली में मकान ठहरा, टोह लगना मुश्किल है। मज़े से घर बैठो! जब तक बख़्शू के दम में दम है किसी की मजाल नहीं! समझ-बूझ के काम करते हैं! इसी तुम्हारे नख़लऊ में चप्पा-चप्पा छाना पड़ा है। भला हमारी छिपाई चीज़ आज कोई ढूंढ़ तो निकाले।"

यह कह कर बख़्शू चला गया, नजिबनिया धीरे-धीरे गुनगुनाने लगी—

"कभी आया करो कभी जाया करो,
नैनों से नैना लड़ाया करो।
कोठे पे पिंजरा बनाया करो,
छोटी मैना से लाल उड़ाया करो।"

"ऐ जी, ऐ जी! क्या अभी सोते हो?" नजिबनिया ने ज़ोर से पुकारा।

जवान आवाज़ सुन कर लुंगी बांधे आ खड़ा हुआ—"अजी सोना खाना, पीना तो सब तुम्हारे हवाले कर चुके। हर वक़्त इसी ओर कान लगे रहते हैं।"

"ज़री यहाँ आना, धूप में क्यों खड़े हो?"

जवान गाने लगा—

धूप में हमको ख़राबो ख़्वार रहने दीजिये,
आप अपना सायए दीवार रहने दीजिये।

"भई पास आते डरते हैं ! अच्छा एक वादा करो, जो हम कहेंगे करोगी।"

"वाह ! जो न करने की बात हो ?"

"भला वह कौन सी ऐसी बात है जो हमारे तुम्हारे बीच करने की नहीं। मुहब्बत में सभी कुछ करते हैं। हाँ, तेरा ही दिल न चाहे तो बातें हज़ार हैं !"

"अच्छा ! यह गिलोरी तो लो।" नजिबनिया मुस्करा कर बोली।

"एक तरकीब रात को सोची है।" जवान ने धीरे से कहा।

"कहो ! कहो, अच्छा कहो, कोई ऐसी-वैसी बात न हो।"

"भई यूँ दीवार की बातचीत ठीक नहीं, हमारी कोठरी की दीवार तुम्हारे दालान की दीवार से मिली है। उसमें मूखा बनायें, वक़्त-बेवक़्त जी चाहे मज़े से बात हो जाया करे।"

"हाँ ! है तो ठीक। भला तुम लग्गा लगाओगे या हम ईंट हटा चलें, कोई बात खुल तो न जायेगी ?"

"इसकी तरफ़ से बेफ़िक्र रहो, सिवाय हमारे इस कोठरी में आने वाला ही कौन है ? हाँ, जो हो सके तुम अपनी तरफ़ से मज़बूती कर लो ! पराये घर का हाल किसी को क्या मालूम ?"

"अच्छी बात है ! यहाँ कौन है ? अभी तो अकेले हम हैं। भला ऐसा नहीं हो सकता हम इधर से खोदें और तुम उधर से ?"

"हाँ जी, बात तो मज़ेदार है। दोनों तरफ़ हो आग बराबर लगी हुई ! मगर एक ख़राबी है। हम ना मालूम कहाँ से खोद चलें, तुम ना मालूम किधर से लग्गा लगाओ।"

"अच्छा तो इससे क्या ? हमी लग्गा लगाते हैं। भला तुम्हारे यहाँ कुछ ईंटें हटाने को होगा !"

"अच्छा तो ठहरो, हम देखते हैं।"

कुछ देर की मेहनत के बाद एक ईंट हटा ली गयी।

"इस वक़्त तो यही कील मिली है।" जवान बोला।

"अजी हमने लगा भी दिया, एक ईंट भी खींच ली !" नजिबनिया कोठरी से निकल कर बोली।

"वाह वा ! यह तो ख़ूब रास्ता बन गया।" जवान ने कहा।

"खोलो, खोलो !" बख़्शू ने कुन्डी खटखटाई।

नजिबनिया ने मोखे के सामने बिछौने और झिलंगा पलंग से आड़ कर दी और जल्दी से कोठरी से निकल आई।

"ओफ़्फ़ोह ! क्या जल्दी मिज़ाज में है।" वह झुंझला कर बोली—"आदमी के हाथ पाँव फ़ुला देते हो। मैंने कहा, घर में सब चीज़ें तितर-बितर हैं, लाओ ठिकाने से रख दूँ। मुई हलकान हो गई, आप ही बीवी आप ही बाँदी।"

"क्या है क्या ?" बख़्शू बोला—"आज तुमने बड़ी देर लगाई, क्या सो गई थीं या कुछ पकाती थीं।"

"आराम चैन तो मुए बख़्शू के कट्टे, हम तो जान हल्कान करें, ज़रा दम भर की देर हो गई तो आपे से बाहर हो गये। यह तो न पूछा मरती हो, जीती हो, पत्थर ढोती हो। कहने लगे क्या आराम करती हो ? वाह वा, देखी आपने क़द्रदानी, कोई अपना लहू पानी एक कर दे, तुम्हारी पैज़ार की नोक से।"

"या अल्लाह, मैं तुम्हें कुछ कहता हूँ ! आज तो तुम हवा के घोड़े पर सवार हो। इस वक़्त हम सौदे को इधर आये थे, कहा लाओ देखते चलें।"

"देखना क्या है ? घर में टुटरूँ टूँ, अकेले पड़े। कोई बातचीत

करने वाला नहीं ! रात को क्या मुसीबत जान पर पड़ी, कल ज़री पिन्डा धोया था, तुम जानो, बहुत टापती फिरी एक बूँद न मिला। हलक़ में कांटे पड़ गये। लाख पान पर पान खाती हूँ, पास पड़ोस से एक बूँद नहीं माँग सकती। अजब जंगल मैदान में ला कर तुमने डाल दिया है।"

"तो क्या रात को एक कटोरा भी पानी न था, क्या करें, इस मकान में कुआँ नहीं है। ख़ैर, घबराती क्यों हो; अब कोई अच्छा सा घर लेंगे, और इस वक़्त तो मैं सुराहियाँ ला देता हूँ, सब भरवा लेना।"

"एक मटका भी।"

× × ×

थोड़ी देर में बख़्शू सब चीज़ें ले आया।

"पानी भर गया। यह तो बताओ यह बर्तन अनवासे किसने !" नजिबनिया ने पूछा।

"तुम्हारी भी शक की अजीब आदत है। अजी, इसी भिश्ती ने।"

"तुम खड़े देखा किये ? अजी क़लमा पढ़ कर पाक करते, सब घड़े, मटके नजिस हो गये। इनसे रत्ती भर पानी लेना हमारे लिए सुअर मुर्दार के बराबर है।"

"मुसाफ़रत में ये बातें नहीं चलतीं।"

"नहीं ! तो यह काम के नहीं, और बर्तन मुझे ला दो।"

"ले अब तुमने और झगड़ा निकाला।"

"हमारे काम में यूँ ही आँधी रोग आता है। तुमको हमारा काम ऐसा ही बुरा लगता है। न करो साहब ! सच कहा है, बँधा ख़ूब मार खाता है।" यह कह कर वह रो पड़ी।

"हैं हैं !" बख़्शू घबरा कर बोला, "मैं अभी दूसरा घड़ा ला देता हूँ, तुम अपना दिल छोटा न करो।"

"नहीं अब तुम मेरे काम से घबराते हो, हमने अपने पाँव में कुल्हाड़ी मार ली, अपना किया अपने आगे आता है।"

"ले अब जाते हैं, हो सकेगा किसी वक़्त आ जायेंगे।"

"अच्छा रात को किस वक़्त आओगे ? सारी रात आँखों में कटती है, मच्छर खटमल मुए अलग सताते हैं। खटके के मारे से नहीं मर सकता, सोचा मोचा बराबर।"

"देखो छुट्टी मिल गई, ज़रूर आऊँगा, दस बजे तक तुम इन्तज़ार करना, नहीं तो दरवाज़ा ज़ंजीर करके सो रहना !"

× × ×

नजिबनिया मोखे पर आकर बोली, "ऐजी, ऐजी, क्या करते हो ?"

"अभी कारखाने के लोगों की छुट्टी हुई है, माल मसाला सरकार से ले आया हूँ, कहो मिज़ाज तो अच्छे हैं ! क्या रंग ढंग हैं।"

"अरे हम बेचारों के क्या रंग ढंग, ज़रा-ज़रा सी बात को दिन भर हैरान हैं। कोई इतना नहीं कि पैसा के पान ला दे, मुई तमाख़ू की ऐसी लत पड़ गई, ज़बान पर ज़री से देर हुई जमाइयाँ आते-आते बाछें फटी जाती है।"

"यह तकलीफ़ हमारे रहते हुए उठाती हो ! अरे जिस वक़्त जिस काम को कह दो फ़ौरन हाज़िर।"

"ले हमको क्या मालूम ! आज कई दिन से पैसा की मिस्सी मंगवाई है, आज आती है न कल। तेल जो आया ख़ुशबूदार नहीं, न मालूम कहाँ से मीठा तेल उठा लाये। ले जब से यहाँ आये हैं फूलों के हार को तरस गये। आदत थी, चाहे कोई खाने को न दे, एक अच्छा मोटा सा हार सिरहाने के तकिये के पास ज़रूर हो।"

"यह कौन बड़ी बात है ? आज ही लो, पर यह तो बताओ, इन हारों और इत्र का सूँघने वाला कौन है ? मिस्सी की धारी कौन देखेगा ?

तुम रोज़ आजकल पर टालती हो। वल्लाह, बे दूध का लड़का रखना इसी को कहते हैं।"

"क्या भोली-भाली बातें हैं, अभी खेलो खाओ, यह टेढ़ी खीर है।"

"आपकी जूती से, यहाँ तो जान पर बनी है, आप नसीहत करने बैठी हैं।"

"अच्छा फिर जल्दी क्या है? कोई दिन मौक़ा हो, अब तो मोखा हो गया है, समझो हम तुम्हारे घर में तुम हमारे घर में।"

"तुमने पान जाने कैसा दिया था--हमारा दिल ख़ुद पकड़ में नहीं है, रातें करवट बदलते गुज़रती हैं। यह टाले बाले रोज़ ही रहेंगे! वल्लाह आज तो अगर चाहो मिल सकते हैं, यूँ ही आजकल रहेगा तो देखना हम न रहेंगे।"

"ऐ है! समझदार होके ऐसी नादानी कैसी? ऐसी बात न करना।"

जवान की आँखों में आँसू आ गए, उदास स्वर में बोला--"हम तो रात दिन तुम्हारी मुहब्बत में जलते भुनते रहते हैं, तुम तो आज कल टालती हो।"

"देखो, ठहरो, संभलो, तुमने तो कह दिया, कहीं मौक़ा होता, हम तुम एक पास होते रहते।"

"यह कौन बड़ी बात है, किसी को कानों कान पता न चले, चले चलें किसी मकान में, अजी कहीं ठिकाना नहीं सरांय तो नहीं गई है।"

"फिर यही ख़याल है? इस घर से जाकर फिर कभी न आयेंगे, किसी के बस में तो नहीं, किसी की बहू बेटी नहीं।"

"अच्छा! यह कौन तुमको यहाँ लाया! यहाँ कैसे रहती हो?"

"कोई भी नहीं! मुँह बोले भाई हैं, पर हमारा आराम इसी में है कि चले जायें।"

"अरे अगर कहो तो इसी वक़्त, तुम अपना दिल मज़बूत कर लो।"

× × ×

दिन भर में शहर के सिरे पर एक कच्चा घर ढूंढ़ा, दूसरे मुहल्ले के कहार लाए।

"ले सब ठीक है ?" जवान ने पूछा, "मजदूर ठेला चाहिये हो तो वह भी आ सकता है।"

"अरे असबाव तो है नहीं!" नजिबनिया बोली—"बस एक गठरी, पानदान, इस गली से निकल कर फिर कोई सवारी कर लेंगे, कोई कानों कान जाने भी नहीं।"

"हाँ वल्लाह! यह ठीक कही, लाना चूड़ीवाला हाथ, कहारों को दो पैसा देकर जा रहा हूँ, तो अब ग्यारह बजे ठीक रहा!"

"हाँ देखो एक ही सवारी पर लगातार जाना भी ठीक नहीं।"

"अच्छा जो तुम कहोगी, किया जायेगा।"

"अच्छा वह तो आयेंगे नहीं, खाने-दाने का बन्दोबस्त कर लें, बेफ़िक्र हो जायें।"

ग्यारह बजे के बाद नजिबनिया ने जवान को पुकारा—"एजी, एजी! सुनते हो ?"

"सब निकाल रक्खो और तुम भी तैयार हो रहो।"

"सब ठीक है, बस तुम्हारे आने की कसर थी।"

जवान दरवाज़े पर आकर धीरे से बोला—"खोलो तो, चलो निकल चलें।"

रास्ते में जवान ने इक्केवाले को सम्बोधित किया—"अरे मियाँ इक्का वाले, अकबरी दरवाज़े तक जाना है, दो सवारियाँ हैं।"

"क्या सामान भी कुछ है ?" इक्के वाले ने पूछा।

"अरे म्याँ, सामान क्या है, यही पानदान है।"

"दो आना दीजियेगा!"

× × ×

अकबरी दरवाज़े पर पहुँचकर जवान कहारों के अड्डे की तरफ़ चला "अरे भई यही नवावगंज तक चलना है।" उसने एक मेहरे से कहा।

"छे पैसे देने पड़ेंगे !"

"अच्छा ! ले आओ झटपट डोली।"

"ले बस यहीं उतार दो।" नवावगंज पहुँच कर जवान बोला— "अब पैदल चले जायेंगे।"

दोनों पैदल चल पड़े।

"भला जवान को जात है ?" कान्सटेबिल ने पुकारा।

"हम हैं, मजलिस में जाते हैं, मातम करके चले आयेंगे।"

"और यू हाथ में का है ?"

"है क्या !" पानदान खोल कर देख लो।

"ले ! इत्ती बेरिया मियाँ लोग निकसत हैं बेगमों के साथ, थाने पर जाई चाहे, हुकुम निकलने का कोऊ का नहीं।"

"अरे म्याँ अपना काम करो, क्यों रास्ता खोटा करते हो ? वहाँ मातम हो चुकेगा, इनसे लाख कहते रहे, सवेरे चलो, इसी मारे औरतों का झगड़ा वाहियात है।" यह कहते हुए जवान ने दुअन्नी निकाल कर कान्सटेबिल की हथेली पर चुपके से धर दी। नजिबनिया आगे बढ़ कर बोली—"मेरी तो जान निकल गई, वल्लाह, ख़ूब चकमा दिया, मेरी तो घिग्घी बँध गई, अच्छा हुआ तुम साथ थे।"

"अब पहुँच गए, देखो नुक्कड़ के वहाँ मकान भी है।"

१३

"अरे ! घर में कोई नहीं !" बख़्शू घबरा कर बोला। फिर बाहर निकल कर मुहल्लेवालों से पूछा—"क्यों साहब ! इसमें जो सवारियाँ रहती थीं कहाँ गई।"

"हमको क्या मालूम ? कहीं होंगी ।" एक लड़का बोला ।

"इस मुहल्ले की भंगन कहाँ रहती है ?" बख़्शू ने पूछा ।

"क्या कल्लू की माँ को पूछते हो, वह तो कहीं दूर से आती है, क्या तुम्हारी उससे मुलाक़ात है ?" लड़के ने पूछा ।

"अरे भाई नहीं ! वह तो जानती होगी, तुमको कुछ नहीं मालूम, तुम्हारा घर यहाँ किस जगह है ?"

"हमारा घर दूर है, हम खेलने निकल आए, वह कौन हैं जिनको तुम पूछते हो ।"

"अजी तुमको इससे क्या काम ? तुम यहाँ किसी को जानते हो ?"

"हमारा भाई कारख़ाने में काम करता है ।"

"कारख़ाना कहाँ है ?"

"यही गोटा का, तीन आना रोज़ पाता है, शाम को छुट्टी मिलती है, हमारे लिये पौंडा ले जाता है, अम्मा खीर पकाती है । दोपहर को हम खाना खाते हैं, हम भी चार बरस में तीन आने पायेंगे, हमारी बजिया कहती है फिर शादी करेंगे, बड़ी दूर बरात जाएगी ।"

"अच्छा यहाँ किसको जानते हो ?"

"उस्ताद को ! चलो उनके पास !"

"चलो !"

दोनों आगे बढ़ गये ।

"हज़त !" बख़्शू ने उस्ताद से कहा, "सलाम आले कुम ! माफ़ फ़रमाइयेगा, इस मुहल्ले में आपके पड़ोस में एक साहिबा रहती थीं कहाँ उठ गईं ?"

"हज़रत मालूम नहीं, मुहल्ले में बीसियों आते जाते हैं, किस तरफ़ रहती थीं, कब रहती थीं, उनके यहाँ कोई मर्द न था ?"

"इस आपके कारखाने के दो मकान आगे ।"

"वहाँ तो मिर्ज़ा मस्ताना बेग रहते थे, वह उठ गए, अभी कल ही मुलाक़ात हुई थी, आपको धोखा हुआ होगा।"

"नहीं मैं सच कहता हूँ, मुझे ख़ूब मालूम है, बल्कि कभी-कभी एक आध दफ़ा दिन में ख़ुद आया जाया करता था। वह मकान हमारे ही पास किराये को था, बल्कि भंगी भिश्ती हमीं ने किराये पर लगाया था, बल्कि किराया पेशगी हमीं ने दिया था, बल्कि सौदा भी हमीं ला देते थे।"

"न मालूम आप क्या कहते हैं, भला कितने दिन हुए आपको किराये पर लिये ? बायें ओर, आप कहते हैं तो ताज्जुब नहीं।"

"हाँ हाँ वही, ख़ुदा आपका भला करे, कोई पन्द्रह बीस दिन हुए होंगे।"

"हज़रत उसका हाल मुझको नहीं मालूम, लड़के को बुलाता हूँ। नन्हें मिर्ज़ा ! नन्हें मिर्ज़ा ! ज़रा इधर तो आना। अमाँ कोई साहब यहाँ रहते थे, आप उनके पास जाया चाहते हैं।"

"नही मालूम--आप कहीं बाहर से आ रहे हैं ?" नन्हें मिर्ज़ा ने बख़्शू से पूछा।

"इससे तुमको क्या मतलब, अब वह नहीं हैं ?" उस्ताद बोले।

"नहीं मालूम हैं या चले गए, मेरी उनसे मुलाक़ात न थी।"

"ऐ साहब वह मकान हमारे पास किराये को था।"

"हमने आपको देखा नहीं, कई रोज़ से एक नवाब साहब आते थे।"

बख़्शू को ताव आ गया—"तो क्यों हज़रत, आप उनको जानते हैं ? कैसी सूरत थी ? भला वह रहते कहाँ थे ?"

"आप भी कैसी बातें करते हैं ? हम क्या जानें कोई नवाब थे या चोट्टे थे, होंगे कोई अपने।"

"हाँ आप भी बजा फ़रमाते हैं, हम समझे उनको जानते होंगे।"

"अच्छा इसमें रहते कौन लोग थे, क्या आपके बाल बच्चे ?"

"नहीं भाई ! बल्कि एक मामला ऐसा था, समझे थे शरीफ़ आदमियों का मुहल्ला है।"

"तो क्या आपके न समझने से लुच्चों, बदमाशों का मुहल्ला हो गया ? यहाँ सब इज़्ज़त आबरूदार रहते हैं।"

"ठीक है ! तो आपको उन लोगों का हाल नहीं मालूम।" बख़्शू धीरे से बोला फिर उस्ताद की ओर मुड़ा—"तो हज़रत हम जाते हैं, कुछ पता न चला, उस्ताद ! ख़ुदा हाफ़िज़ !"

× × ×

बख़्शू भंगन को देख कर दूर ही से लपका—"ऐ बी ख़ाकरोबिन, तुमको कुछ मालूम है, तुम्हीं इस घर में कमाती हो ना, यह जो रहती थी कहाँ गई ?"

"हुज़ूर पैसे न मिले, आपने हमें मुक़र्रर किया था, हम तो आपको जानें।"

"अजी पहले यह तो बताओ वह गई कहाँ ?"

"क्या मुझसे कह के गई, ले पचास घर के जाने वाले हम ठहरे, क्या दिन भर उनके पास बैठे रहते थे, मुल कहीं जाने का ज़िक्र हमसे न किया।"

"अच्छा ! हम तो यहाँ ठहरे हैं, टोकरा फेंक के आओ, अपने पैसे ले जाओ, भिश्ती आए उससे पूछेंगे।"

भंगन चली गई, कुछ देर बाद भिश्ती आया।

"अरे म्याँ भिश्ती !" बख़्शू ने आवाज़ दी, "हिसाब कर लो।"

"तो यह मशक तो छोड़ लेने दीजिये।"

"अरे म्याँ ! मकान ख़ाली हो गया, तुमको मालूम है यह कहाँ गई ?"

"जनाब हमको आने जाने का हाल कुछ नहीं मालूम।"

"अच्छा यह लो, पैसे लो।"

बख़्शू नाउम्मीद होकर चला गया। लेकिन थोड़ी देर बाद फिर दिन भर की छुट्टी लेकर आ गया और इधर उधर पूछ ताछ करता रहा।

× × ×

"बाज़ार से दो चार चीज़ें मँगानी थीं।" नजिबनिया बोली।

"आराम की सब चीज़ें तो पहले ही जमा कर दी थीं, अब जो कहिये मँगाया जाय।" नन्हें मिर्ज़ा ने कहा।

"कुछ नहीं! एक ख़ूबसूरत सी पलंगड़ी निवाड़ की ला देते, बड़ी सी दरी, ख़ासदान, एक मुन्ना सा प्लेट, मिट्टी का तेल, तेल भरने की कीप और काम करने वाली औरत, यह सब बातें हो जातीं तो अच्छा था।"

"अच्छा धीरे-धीरे सब हो जायगा।"

"तो कोई दस बीस दिन में?"

"अजी नहीं, दो एक दिन में, तुमने भी कमाल किया, दस बीस दिन कहाँ रहते हैं।"

"अरे हाँ! एक बात तो भूल ही गई। एक जोड़ी जम्बल वाडी और एक जोड़ी बूट।"

"अच्छा अच्छा! यह सब आज ही लो।"

"देखो ख़र्च की बात नहीं।" नजिबनिया पानदान से एक पत्ता निकाल कर देती हुई बोली—"यह लो, इसको खड़े-खड़े बेचना और सब ले आना।"

"अजी इसकी क्या ज़रूरत, तुमको बताने से मतलब।"

थोड़ी देर बाद नन्हें मिर्ज़ा सब सामान लेकर आए—"लो देखो

तुम्हारे वास्ते एक काग़ज की पंखिया भी ले आए, और लो यह आईना भी लो, तुम भूल गई थीं।"

"हाँ हाँ! आईना तो पानदान में है पर ज़री छोटा है, साफ़ नहीं दिखाई देता है।" नजिबनिया ने आईना देख के टेढ़ा मुँह बनाया फिर बोली—"माजल्लाह, कल से कंघी नहीं की। चेहरा कैसा उदास है, काजल सफ़ाचट, ऐ तो गिलौरी की लाली भी होठों पर नहीं आई, जाते हैं, ज़री मुँह तो धो डालें। हाँ! नन्हें मिर्ज़ा एक चीज़ याद रखना, कोई दिन बाज़ार जाना, सर का तेल कुप्पी में लेते आना, और हाँ, वह मामा तो रह ही गई।"

"कमबख़्त मुझे मिली ही नहीं, एक वक़्त रोटी पर अगर ठहर गई तो ख़ैर कुछ महीना कर देंगे।"

"हाँ रोटी में कुछ लगता ही नहीं; ऐ कम से कम तीन चार रुपया एक आदमी के खाने में बैठते हैं, मगर यहाँ की बात न कहो, बाज़ार की पूड़ियाँ, मिठाइयाँ, निहारी आ जाएगी, हमारे तुम्हारे आगे से जो बचेगी सब उसी के खाने में आएगी, ठीक काम करेगीं तो फटा पुराना दे दिया करेंगे।"

"अजी आज ही पकड़ के लाता हूँ।"

"अच्छा, मुहल्ला कौन है, कैसा है, यहाँ से दुकानें नज़दीक हैं! सुबीता हो तो ज़री मकान साफ़ कर डालें। भई, मेरा ऐसे वैसे घर में रहने को जी नहीं चाहता, भला ऐसा तो हो, अपने लायक़ हो, ज़री सैर भी हो।"

"कुछ दिन जैसे हो काटो, अभी हुल्लड़ मचा हुआ है, कल तुम्हारे वह आए थे, हमारे मुहल्ले में, कुछ अफ़ीमी मालूम होते हैं, मुहल्ले वालों से पूछते थे, उस्ताद से मुठभेड़ हो गई, हमसे कहते हैं, तुम जानते हो, मैंने कहा, "उम्र भर पड़े छींका करो—

दिखला के ज़ुल्फ़ गेसुओं वाला निकल गया।
पीटा करो लकीर कि काला निकल गया।"

"अब उनसे कहो गड़हिया में मुँह धो रक्खें !" नजिबनिया ऐंठ कर बोली, "नाना अब्बा के बराबर होने को आए, चन्डू अफ़ीम ने पूरा मचरसा कर दिया, जोरू बच्चों ने चूस लिया, सीप लगी हुई मैना, चलते ही क़दम उठाना दुश्वार, मूतते धार सूझती नहीं, किसी की ऐसी क्या खाट लगी थी, अपनी जवानी ग़ारत करे, क्या मर के फिर जीना है, नौज दूर पारछाईं फूईं ! ऐसे से तो पाख़ाने में लोटा भी न रखवाऊँ, कोई इज़्ज़त आबरूवाला नहीं, कौड़ी मियाँ के पास नहीं, तीन रुपये सूखे ठहरे, हमारे पीछे लगेंगे, भरी कचहरी में कह दूँगी, यह होते कौन हैं, इनकी और राह हमारी और राह, बस वह अपनी क़िस्मत पत्थर ले के तोड़ें, अब नज्मुन्निसा बन्दी उनके हाथ लगने से रही ।"

"बात ठीक है, मालूम नहीं था कि ज़ात का नौकर है नहीं तो मैं बात न करता। वह डाँट बताता पेशाब निकल जाता। छोटे आदमी का दिल ही कितना ? अब जो सामना हो गया ऐसे लत्ते लूँगा मियाँ घर का रास्ता भूल जायेंगे, जो बहुत टिर्र फ़िर्र करेंगे एक ही लपेटा दिया हो।"

"इस वक़्त खाने को जी चाहता है, अल्लाह आज हम तुम एक साथ खाना खाते।"

"जो कहो लावें, निहारी, पूरियाँ, बलाई, रबड़ी, कचौरी। कप्तान के कुवें की बरफ़ी, वह दानादार बिकती है क्या बात है ! चौपट्टियों की गिलोरी, वल्लाह जो कहो लावें।"

"अच्छा मगर तकलीफ़ न करना।"

"नहीं नहीं ! तकलीफ़ की कोई बात नहीं। मलाई की बरफ़ वाला बोलता है कहो बुलाएँ ?"

"हाँ हाँ ! बहुत भाती है, ज़रूर बुलाओ।"

दोनों ने चार कुलफ़ियाँ ला के खाईं और कुल्फ़ी वाले को वहीं बिठा के खाना लेने चले गए, खाना लाकर दोनों ने साथ-साथ खाने बैठ गए।

"मुहल्ले में कौन-कौन रहते हैं ?" नजिबनिया ने पूछा।

"रहते तो बहुत हैं पर हमसे क्या, देखो दो ही एक रोज़ में कोई अच्छा सा कमरा बहारदार गुलज़ार में ले लेंगे। जहाँ सब तरह का आराम होगा, दस आदमियों से मिलना जुलना होगा, चार आदमी भी आ जायेंगे और यूँ कोने में पड़े-पड़े सड़ना मुफ़्त में जान गंवाना है। किसी बात में कमी तो है नहीं, फिर लखनऊ का गद्दार शहर, किस रक़म का आदमी आज यहाँ मौजूद नहीं, बड़े-बड़े शहज़ादे, नवाबज़ादे, अमीर, ज़रा सी बात में लाखों रुपया उठाते हैं। शाहख़र्च, कनकउवा, बटेर तो ऐसा लड़ाया, लाखों पानी की तरह बहा दिये। हमारी भी सलाह है, कोई कमरा ऐसा लें, ज़रा बहार वाला हो, चार भले आदमी आ जा सकें, सामान भड़कदार जमा कर लें, एक आदमी काम करने के वास्ते, सो ख़ैर अल्लाह ने चाहा कल ही हुआ जाता है, जिस वक़्त बी जानो मिल गईं, उसी वक़्त ले आया।"

"हाँ ठीक है, अच्छा मुसाफ़िराना इसमें ठहरे हैं, किराया भी जै दिन रहेंगे चुका देंगे।"

"एक महीने का किराया तो पेशगी दे चुके हैं, यहाँ रहेगा कौन? एक अच्छा सा जोड़ा तैयार हो जाय, प्याज़ी गज़न्ट का पायजामा, गोटे पर हल्का सा कारचोबी का काम, कामदानी का हल्का सा सुरमई रंग का दुपट्टा, ऊदे रंग का छोटे कपड़ों का जोड़ कामदार, फूलदार बूट, आगे देखा जाए।"

× × ×

"कहो यार करीम!" बख़्शू बोला—"क्या ख़बरें हैं? कहीं आज कल दानों नहीं पड़ता, सुनो तो जी, समझौता न होगा, तुम जानो औरतिया का पेंच ठहरा, पहले पहल की तो बात है।"

"ऐ तेरे मारे नाक में दम है, अब बाक़ी क्या है? जितना उनका माल था दे दिया, रह गया नगदी का हिस्सा, हम आज अखाड़े में कहेंगे, भई; इसका भी चुकता कर लो, हाथी छूटे, छूटे घोड़ा।"

"भाई साहब ! मैं कहता हूँ तुम समझ तो लो, इसमें तीखे होने की बात नहीं, हमने तुमसे चार कपड़े ज़्यादा ही फाड़े होंगे।"

"अरे तो मरा क्यों जाता है ? समझ बूझ के काम करते हैं।"

"यह तो हम जानते हैं, पर वह मानती नहीं, बल्कि एक रोज़ बिगड़ कर कहने लगी, अगर जो हचर मचर होगी तो मैं रत्ती-रत्ती सारा हाल खुले खज़ाने कह दूँगी, मैं एक-एक को जानती हूँ।"

"यहाँ तक बात बढ़ गई भैया, तो दे ही देना चाहिये। एक बात है, माल उड़ाया हुआ उन्हीं के पास बरामद होगा, वह भी धरी जायेंगी। हम चाहते हैं जहाँ तक हो बात पर ख़ाक पड़ी रहे, इसमें हम सब का फ़ायदा है।"

× × ×

शेख़ साहब बोले—"हुज़ूर क्या अर्ज़ करूँ, दिन रात इसी फ़िक्र में हूँ, ज़मीन का गज़ हो गया, दिन भर जले पाँव की बिल्ली बना अभी उस मुहल्ले अभी इस मुहल्ले में, ज़रा टोह पाई लपक गया, मगर वल्लाह क्या शातिर चोर थे, आँखों का काजल चुरानेवाले, चप्पा-चप्पा ढूँढ डाला। एक साहब अचानक कल मिल गए, पहुँचे हुए आदमी हैं। भागे आदमी का हाल, इस तरह बताते हैं जैसे आँख का देखा हो। नाम निशान, कहाँ ठहरा है, किस सिम्त भागा है, कौन साथ ले गया है, सब बता देते हैं।"

"हाँ!" नवाब साहब बोले—"मेरे नज़दीक आप ज़रूर लाइये, अगर कुछ ख़र्च की भी ज़रूरत हो तो झिझक नहीं, बेहतर है बेगम साहब से भी राय ले लूँ, उन्हीं की हिमाक़त ने यह नतीजे निकाले।"

शेख़ साहब ने सेवती को आवाज़ दी—"आदाब तस्लीमात अर्ज़ करो और कहो एक बुज़ुर्ग पहुँचे हुए भागे हुए आदमी या जानवर का पता बता देते हैं ! हुक्म हो तो उनसे सब हाल अर्ज़ कर दिया जाय।"

"हाँ हाँ !" बेगम साहब ने अन्दर ही से शेख़ साहब की बात सुन

कर जवाब दिया—"ज़रूर ज़रूर ! ले जाने को तो कोई क़ीमती चीज़ नहीं ले गये पर यह हरकत तो बुरी है।"

"गुलाम ने यह सब बातें तय कर ली हैं, उनसे सिर्फ़ अधिया पर मामला तय हुआ है।"

"अधिया क्या...?" बेगम साहब ने पूछा।

"आमिल साहब चाहते हैं कि जितने का सामान गया हो उसकी आधी क़ीमत इनाम में उनको दे दी जाय।"

"पर ऐसा न हो कहीं खा पी के बैठ रहें, दुनिया बेईमान ठहरी, छू-छक्का वाले खाऊ पीर मशहूर।"

"हुज़ूर ! गुलामों से भाग कर जायेंगे कहाँ, पहले अपनी मज़बूती कर लें तब लेने देने की बातचीत होगी, माशा अल्लाह ! आप फ़हमीदा, होशियार, क्या ख़ूब फ़रमाया है, किसका एतबार किया जाय ! मगर अब किया क्या जाय ? हाथ पत्थर तले हैं, जहाँ और खेल खेले हुरदंगी नहीं खेले। हुज़ूर के इक़बाल से कामयाबी हो गई तो गोया लाखों की दौलत मिल गई, यह भी हम नमकख़्वारों को कलंक का टीका लगना था। हमारी ज़िन्दगी का तो, हुज़ूर मक़सद यही है कि जिस सरकार में इस तरह परवरिश, क़द्रदानी होती है उसकी ख़िदमत में जान तक की परवाह न करनी चाहिये।"

"हाँ, शेख़ साहब आप ठीक कहते हैं, मगर शेख़ साहब वह बहुत माँगते हैं, कुछ कम करो।"

"हुज़ूर के फ़रमाने की बात है, गुलाम ने क्या कोई बात उठा रक्खी ! ख़राबी यह है कि आमिल साहब एक हठ के पक्के ! अच्छा जिस क़दर कम होगा गुलाम अपने पास से देगा।"

"नहीं मेरा यह मतलब नहीं है, मगर कब तक मालूम होगा हाल ?"

"ऐ हुज़ूर कुछ और तो काम है नहीं, एक या दो जुमेरात की मोहलत चाहिये, जिन्नातों का मामला, हुज़ूर माशा अल्लाह ! ख़ुद फ़हमीदा रौशन दिमाग़ हैं। तो है न हुज़ूर हुक्म, गुलाम जाय, वादा कर आए,

वल्लाह, एक-एक दिन एक-एक साल मालूम होता है, ग़ुलाम चाहता है किसी तरह जल्दी पता लग जाय जो उमंगें दिल में हैं, ग़ुलाम जी खोल के निकाले। हुज़ूर क्या बताऊँ, सोना खाना, पीना हराम हो गया।"

"तो जाइये, बिस्मिल्लाह कीजिये, आप पर सब इत्मीनान है।"

"एक बात और अर्ज़ करने के क़ाबिल रह गई, बतौर मदद ख़र्च के कुछ देना चाहिये, हालांकि इसकी उम्मीद नहीं फिर भी सोच लेना चाहिये, दबाव डालने को थोड़ा पेशगी भी हो, ख़ूब जी लगा के काम करें।"

"हाँ हाँ ठीक है! मगर शेख़ साहब वहाँ से आकर फिर ख़बर कीजियेगा। शेख़ साहब सच कहती हूँ, क़सम है जनाबे अमीर की, रात दिन आराम चैन दिल का मुझे नहीं, आप जब भी आइयेगा, सेवती से चाहे आराम में हों कहला भेजिएगा।"

शेख़ साहब जाकर थोड़ी देर में जवाब ले आए।

"मुबारकबाद हो!" शेख़ साहब ने सेवती से कहा, "कहना ग़ुलाम सुर्ख़रू वापस आया। आज दो सौ रुपया दे आया हूँ, पेशगी। यह गुस्ताख़ी इसलिए हुई कि हुज़ूर ने हुक्म ही दिया था, उस वक़्त ग़ुलाम के पास कुछ था नहीं, लाल रक्खा, लाल से दो सौ रुपया सूदी लेता गया।"

बेगम साहब ने सेवती को सम्बोधित किया—"शेख़ साहब से जाकर कह दो, आप से मुझे यही उम्मीद थी! ख़ैर दो सौ की बात नहीं, इसी महीने में तो सब झगड़ा ही तय हुआ जाता है, अदा कर दिये जायेंगे, ख़ुदा ने चाहा आपको इनाम दिया जाएगा, आमिल हैं, बड़े पहुँचे, रुपया लेने से इत्मीनान हो गया, न लेते तो शक रहता, यही बात यक़ीन दिलाती है, उनका कोई ख़ादिम है, उसको भी पाँच रुपया इनाम में देंगे, आदमी बड़े अच्छे हैं।"

× × ×

"भई तुमसे क्या कहूँ।" मंझू साहब बोले—"आजकल ठेटर में जमघट होते हैं, तिल धरने की जगह नहीं मिलती, भीड़ से भीड़ है।"

"अभी !" मुन्ने साहब ने कहा, "तुम्हारे पड़ोस में सुना है, अच्छा जलसा हो गया।"

"हाँ भई !" सादिक ने कहा, "ऐसा जलसा तो बरसों में कभी नज़र आता है।"

"हम भी तो शरीक थे !" मंझू मुस्कराये, "चोटी की रंडियाँ और गाने बजाने वाले मौजूद थे, अजी और तो और क़ासिम अली खाँ, मुन्ने खाँ भी बुलाये गये थे।"

"भई वल्लाह !" मुन्ने साहब उछल पड़े, बन्दा मज़े करता है, जो छोकरी उभरी पहले उसकी ख़िदमत में।"

"और फिर शहर की क़ैद नहीं, दुनिया भर की गानेवालियाँ तक खिंच आती हैं !" सादिक़ ने कहा।

मंझू साहब बोले—"भई उसके टक्कर का आज कोई नहीं, मैं कहता हूँ हिन्दोस्तान में हो तो ले।"

"भई सच तो है !" सादिक़ ने गर्दन हिलाई, "अजी जो नाचना सिखाता है, दरअस्ल पूछो तो छोकरी को रंडी बना देता है ! कमाल है, यार उसमें भी, यार रंडी पर जोबन आ जाता है, बीसियों बेढ़ंगम, बेकेंडे बाहर से आईं, महीना भर कालिका परसाद ने तालीम दी फिर जो देखिये सर से पाँव तक बदल गईं, वह तराश ख़राश आ जाती है, अजी और तो और वह सूरत ही नहीं रहती, कुछ से कुछ हो जाती है।"

"यार आजकल क्या कहें तुमसे।" मंझू साहब बोले, "एक रंडी बाहर से आई है। यार लोगों का एक दफ़ा इत्तफ़ाक़ हुआ, मिज़ाज भी बुरा नहीं।"

"हाँ यह तो है !" सादिक़ ने कहा, "मगर हमारे लखनऊ की

माशूक़ियत नहीं है, फीका शलजम ! भई मुझको तो ऐसी औरतें एक आँख नहीं भातीं। अजी एक माल ने नख़ास में अभी थोड़े दिन हुए हैं, कमरा लिया है, अजब चंचल है, बस देखने लायक़ है ! यार लोगों को तो सौदा समाया है, एक दिन बिस्मिल्लाह करके वहीं ढेर हो जायेंगे।"

मंझू साहब ने कहा—"अजी वह क्या माल है, हमने नख़ास की सड़क पर देखा है, अजीब बाँकी तिरछी औरत है, अभी कहीं बाहर से आई है। नहीं मालूम कहाँ से नन्हें मिर्ज़ा के हाथ लग गई, कहीं से उड़ा लाया है, ज़बान तो ख़ैर शहर की नहीं, लेकिन सूरत देखो दंग रह जाओगे।"

"वह है कैसी ?" मुन्ने साहब ने पूछा।

"कैसी है !" सादिक़ ने जवाब दिया, "ऐसी कि मिलने के लायक़, अभी मजमा भी कम होता है, नक सिक से ठीक, सिन भी अच्छा है। ठीक शबाब का ज़माना है। जवानी है कि इलाही तोबा, फटी पड़ती है, हाथ-पाँव की चलत-फिरत इस ग़ज़ब की है कि हर अदा पर दिल पिसा जाता है। आँख नाक तो ख़ैर अच्छी है मगर बाज़ू और गाल ऐसे भरे-भरे हैं कि जी चाहता है गले से हर वक़्त लगाए रहो। उस पर चितवन इस लगाव की कि एक दफ़ा देखा था अभी तक आँखें लुत्फ़ उठाती हैं। आँखें ऐसी बड़ी तो नहीं हैं मगर उसके चेहरे पर फबती हैं। लाख ज़ेवर एक तरफ़ और एक चितवन एक तरफ़, वह सीधी नाक, आफ़ताबी चेहरा, खिंची-खिंची भवें, घुंघराले बाल, होंठ पतले, मुस्कराने में तो वह भोलापन है कि बयान से बाहर। कमर और कूल्हे ऐसे गोल सुडौल कि हमने तो इस उम्र में किसी के नहीं देखे। नहीं मालूम किस तरह एक बारिस्टर साहब पहुँच गए हैं। जब देखो एक बड़ी ऊँची सी टमटम पर सवार सदर हज़रत गंज से चले आते हैं। कोट पतलून छोड़-छाड़ एक पच्चीस तीस रुपये की मुन्देल मुन्डे सर पर बाँकी रक्खे हुए सब्ज़ या ऊदी ग्रन्ट का घुटना डाले, बारीक कामदानी का अंगरखा, प्याज़ी कुर्त्ते पर पहिने पक्के नवाबज़ादे बने चले जाते हैं। आठ नौ बजे तक ठहरते हैं, पचास रुपया रोज़ देते हैं, नन्हें मिर्ज़ा कहता था।"

"अजी यह सब ज़ीट है !" मुन्ने साहब आँखें फाड़ कर बोले, "यह पचास रुपया रोज़ तो नन्हें मिर्ज़ा की दून है, आजकल हिन्दोस्तानी बारिस्टरों की आमदनी कहाँ ? वल्लाह दो-दो तीन-तीन रुपये पर मारे फिरते हैं। बाज़ों को तो खाना भी नहीं मिलता, कोट पतलून विलायत से चलते वक़्त जो बनवा लिये थे वही अब तक अदालत में पहन कर जाते हैं। बल्कि एक आध को हमने देखा है, चूतड़ों पर पेवन्द लगे हुए थे। जो कुछ मिल जाता है वही रंडी को दे देते होंगे। नन्हें मिर्ज़ा इसको बड़ी बात समझें, साहब बारिस्टर साहब तक हमारे यहाँ आते हैं, फ़ायदा कुछ नहीं, यह क्या कम है कि उनका नाम लेकर औरों में गर्म बाज़ारी रहेगी।"

"रंडो न ठहरी मुक़दमा बाज़ी ठहरी !" सादिक़ बोला।

"उसके मुक़दमे की पेशियों में भी अदालत की तरह लाखों हज़ारों ऐसे गल जाते हैं।" मुन्ने साहब ने कहा।

"गर्म बाज़ारी कैसी !" सादिक़ ने पूछा, "यह कहिये बारिस्टर का नाम ले के कमा खाते हैं। हाँ वल्लाह किसी दिन उसके यहाँ पहुँचना है। अभी-अभी बाहर से आई है, शहर के चोंगे चोंचले कम सीखे होंगे। फिर बालिस्टर साहब भी एक जांगलू, उनको थोड़ी देर गिटपिट करने के सिवा आता ही क्या होगा, इसके मारे वह कुछ ज़्यादा दे निकलते होंगे। उँह, उसकी बात नहीं, चुटकी बजाते यूँ उखाड़ दिया होगा तब तक की सनद !"

"अच्छा यार यहाँ के भी धावे हो जायेंगे।" मुन्ने साहब बोले, "यह दिल में क्यों रहे ?"

"पक्की हो गई ?" सादिक़ बोला—"देखो वल्लाह, निकल न जाना, यार तुम कचपेंदिये हो, बाज़ दफ़ा ऐसी घाट देते हो, तुम्हारी बात का एतबार न रहा।"

"नहीं वल्लाह !" मुन्ने साहब हँस दिये, "क़सम हज़रत अब्बास की, एक दिन चलेंगे।"

"आज ही कल में चलो, जी, और नहीं तो क्या हाथी घोड़ा छूटे?"

"और यार बारिस्टर छूटे, हाथ लाना, क्या बात कही है।"

सादिक़ ने ज़ोर से हाथ मार कर ठट्ठा लगाया, "वल्लाह अच्छी कही, ख़ुदा करे।"

"अगर मौक़ा हुआ तो उनको भी साथ ले उधर ही उधर ठेटर चले जायेंगे।"

"अहा हा अहा! यह बात गुर की कही है।"

"अजी यारों को पंजा टेकने की ज़री सी जगह मिल जाये, वह अड़ंगा लगाया हो, चारों खाने चित्त, ख़ुदा देता है, लुटाते हैं। अरे यह बारिस्टर जाँगलू, यह लोग तो मज़दूर ठहरे, इनकी हिम्मत ही क्या?"

"हाँ वल्लाह! यह बात तुमने ठीक कही, इसी में तो आज लखनऊ की आबरू बनी है।"

यकायक मंझू साहब बोले--"हमारा लखनऊ इन बातों में, इस मर मिटे हाल पर भी किसी से दब के नहीं रहा। इतना बड़ा शहर कलकत्ता है, सिर्फ़ मटिया बुर्ज़ के सदक़े में, वहाँ सिवा मछली भात खाने वाले, उनकी हक़ीक़त क्या? मटिया बुर्ज नाक है नाक। यहाँ से लेकर विलायत तक ईरान तूरान में डंके बज रहे हैं जहाँपनाह की ऐयाशी के!"

मुन्ने साहब ने कहा--"अजी कहाँ का ताँता पवाँड़ा निकाला, वह बात तो रह ही गई, कल चलें, किस वक़्त?"

"जिस वक़्त जी चाहे!" सादिक़ बोला—"हाँ वह वक़्त जाँगलू के आने का न हो।"

"अच्छा तो एक बात करो ना, नन्हें मिर्ज़ा से वक़्त पूछ लो।"

"हाँ यह बात ठीक है, ले अब कल सवेरे यहीं आकर रपट बोलेंगे!"

बात ख़त्म हुई और सब अपने-अपने रास्ते चल दिये।

१४

रात के दस बज चुके थे। मुन्ने मियाँ को अपनी टोली के साथ आते हुए देख कर, नन्हें मिर्ज़ा बोले—

"आइये, आइये ! तशरीफ़ लाइये हुज़ूर, बड़ी देर इन्तज़ार में थे।"

"यार सादिक़ ! बुलाओ तो बी साहब को !" मुन्ने मियाँ ने बैठते हुए अपने साथी की ओर देख कर कहा।

"अरे मियाँ नन्हें मिर्ज़ा, ख़बर भी कर दी है !" सादिक़ ने पूछा।

"जी हुज़ूर ! हाज़िर होती हैं, हुक़्क़ा मुलाहज़ा हो हुज़ूर ! क्या अर्ज़ करूँ क्या मिज़ाज पाया है, अल्लाह जीता रक्खे।"

"अरे मियाँ ! तुम भी क्या आदमी हो, बुलाओ भी तो बी साहब को जल्दी ! उन्होंने तो ऐसा पाइंचा भारी किया है, आ ही नहीं चुकतीं।" सादिक़ बोला।

"हुज़ूर क्या अर्ज़ करूँ ! दिल ख़ुश हो जायगा ! वही मसल है कि अपनी दही को कौन खट्टा कहता है ? हुज़ूर गिलोरियाँ मुलाहिज़ा फ़रमाइये, आपसे पर्दा नहीं। आप जैसे दो चार क़द्रदाँ मिल जांय। क़सम हज़रत अब्बास की, मिज़ाज ऐसा भोला पाया है, बहुत भोली है; अभी हुज़ूर बिल्कुल खेगली। देखें क्या देर लगाई है।" नन्हें मिर्ज़ा यह कह कर चला गया और नजिबनिया को साथ लाया। नजिबनिया ठिठक कर खड़ी हो गई। माथे पर हाथ रख कर बोली--"बन्दगी !"

"अरे इधर आओ, इधर आओ, वहाँ कहाँ बैठी जाती हो ?" सादिक़ ने कहा।

"हाँ साहब, वहाँ क्यों !" नन्हें मिर्ज़ा हैरान होकर बोला।

नजिबनिया मुस्करा कर बोली—"दुआ करते हैं !"

"हुज़ूर के जान व माल के लिए !" नन्हें मिर्ज़ा ने जुमला पूरा कर दिया।

मुन्ने साहब जो इतनी देर से चुप बैठे थे बोले—"क्यों साहब नाम क्या है इनका ?"

"हमको हुज़ूर नजमुन्निसाँ कहते हैं !"

"अजी हुज़ूर इनको बिस्मिलाह ख़ानम कहते हैं !"

नन्हें मिर्ज़ा बात काट कर बोला।

"जी हाँ ! यह भी कहते हैं।" नजिबनिया झेंप कर बोली।

"अजी बी साहब, यह तो बताइये कब से आप यहाँ आई हैं ? शहर देखा, लोग कैसे हैं ?" मुन्ने साहब ने पूछा।

"बहुत अच्छा।" नजिबनिया ने जवाब दिया।

"नहीं मतलब यह है किसी चीज़ की तकलीफ़ तो नहीं ?"

"जहाँ ऐसे ऐसे रईस क़द्रदाँ पड़े हों वहाँ तकलीफ़ हो सकती है ?" नन्हें मिर्ज़ा बोला।

"मुल हाँ, मलाई नहीं मिलती।" नजिबनिया ने कहा।

"जी हुज़ूर आदत है।" नन्हें मिर्ज़ा झेंप गया।

"जो कोई दिन नहीं खाती, खाँसी में लहू की टपकी आ जाती है, मलाई कलेजे में तरावट डालती है ना !" नजिबनिया बोली।

नन्हें मिर्ज़ा ने कहा, "जी हुज़ूर बालाई का क्या कहना, अजब तरह का मिज़ाज पाया है और कुछ खाती भी नहीं, बाक़ी दिन रात गिलौरी पर गिलौरी, न आम, न ख़रबूज़ा, न मेवा, न मिठाई, तरकारी, न पौंडा।"

"जो कुछ खा लेते हैं उसी का हज़म करना मुश्किल है।" नजिबनिया ठिनकती हुई बोली।

"हाँ बात यह है कहीं चलना फिरना होता नहीं। किसी वक़्त तो निकला कीजिये, हमारे साथ बग्घी में निकला कीजिये, हवा खिला लायें रात को !" मुन्ने साहब ने कहा।

"अजी हम हाज़िर हैं, हमसे कहिये, सुबह हो कि शाम, हम हवा खिलाया करें।" सादिक़ बोला।

"अजी जाइये, आप ख़ुद हवा खाइये!" मुन्ने साहब ने जवाब दिया।

नजिबनिया बाट काट कर नन्हें मिर्ज़ा से बोली।

"ए मिर्ज़ा, हुक्का जल गया होगा, ताजा चिलम बिठा लाओ।"

नन्हें मिर्ज़ा झेंप कर बोला।

"देखिये अभी ताजा दम भरवाता हूँ, ज़रा दम तो लीजिये।" फिर नन्हें मिर्ज़ा ने मुन्ने साहब को सम्बोधित किया।

"हुज़ूर इस लबे माशूक़ का क्या कहना—

बाजन लागी बाँसुरी और निकसन लागे नाग।"

"आप सोचिये तो, पानी में खड़ा, सर पर आग, धुवें की रेलगाड़ी दम भर में खींचती है। एक घर में रेल क्या मानी इन्जन तक दौड़ा देते हैं। हुक्का पीने का मज़ा मशहूर है, नहाये के, खाए के, सोए के, मुँह धोए के और दो चार जगह ठीक भी नहीं, धूप में, भूख में, आँधी में, अंधियारे में।"

"ले बस, बातें हो चुकी लच्छेदार, देखो वह जनाने की तम्बाखू ही ले आओ आपके लिये।" नजिबनिया बोली।

"जनाने की या ज़नाने का!" नन्हें मिर्ज़ा ने सही किया। फिर मुन्ने साहब की ओर देख कर बोला—

"हुज़ूर यह अभी बाहर से आई हैं। लखनऊ की ज़बान नहीं जानतीं।"

"क्या हुआ तम्बाखू भी ज़नाने का है।" सादिक़ बोला।

नजिबनिया झेंप कर बोली—

"मिर्ज़ा ज़रा तुज़ुम कड़ो अज़े सी बज़ातेज़े नज़ा चज़ा हज़ाय, चुज़ुक रज़ो बज़ो (तुमको ऐसी बातें न करनी चाहिये। चुप रहो)"

"अजी तुम नाराज़ क्यों होती हो। मैं जाता हूँ!" मिर्ज़ा बोला।

मुन्ने साहब नजिबनिया को रुपया देकर बोले--

"अब जाते हैं! किसी दिन इत्मीनान से आकर बैठेंगे।"

मुन्ने साहब, सादिक़ के साथ चल दिये। रास्ते में मुन्ने साहब ने कहा, "सूरत भी बुरी नही, मगर यार इस तरह की औरत मैंने कही देखी है।"

"कल तो बाहर से आई है, आप देखने कहाँ चले गए? हँसती ज़रा मुँह खोल के है मगर वल्लाह आंखें कटीली हैं। मिस्सी तो देखिये तोलों फाँकती हैं, आँखों में काजल लगा है, काली बिल्ली बनी है। मगर यार तबीयतदार है, नन्हें मिर्ज़ा ने इतनी जल्दी ख़ूब बना लिया। शहर की हवा खाकर पर पुर्ज़े दो ही दिन में निकालती है।" सादिक़ बोला।

"हाँ यार यह न खुला नन्हें उड़ा कहाँ से लाया, वल्लाह, माल तो अच्छा है, आने के साथ ही सब सामान लैस कैसे हो गया!"

"इसको न कहिये, लखनऊ है लखनऊ है! घन्टा भर में तो पूरी शादी का सामान हो जाता है।"

"मगर भाई मैं जो कहता था, मैंने इनको कही देखा ज़रूर है। कड़े, चम्पा, बाली, पत्ते का जोड़ सब वैसे ही हैं।"

इतने में एक ख़ुफ़िया पुलिस सआदत नज़ीर मिल गया। सआदत ने देखते ही कहा।

"बन्दगी अर्ज़ है। आज तो बहुत दिनों बाद मुलाक़ात हुई।"

"आओ भाई, सलाम अलैक, अरे हाँ, तुम टोह लगा सकते हो, यह जो यहाँ ठहरी हैं, मुझे ऐसा मालूम होता है इनको कहीं देखा है।" मुन्ने साहब ने कहा।

"अभी तक तो हम गये नहीं, इतना मालूम हुआ, कुछ दिन से इनका आना हुआ, इक्का-दुक्का भले आदमी भी भूले बिसरे आप जैसे

आ निकलते हैं। एक बारिस्टर की बग्घी कभी-कभी देखी गई है।" सआदत ने बताया।

"यूँ ही पूछ लिया, शायद तुम जानते हो। यह माल किस देसावर का है, कहाँ से आया है, कब से रह रहा है।" सादिक़ बोला।

"बस इतनी सी बात, कल ही लीजिये, मगर यार तुम्हारी बातों से कुछ दाल में काला मालूम होता है।" सआदत ने कहा।

"अरे यार नहीं। मैंने यूँ ही पूछ ली और भई मैं इस तरह का आदमी नहीं हूँ। यह तो (मुन्ने साहब की ओर देख के) इन जैसे अमीरों का काम है।"

"हमसे भी उड़ते हो, उड़ के जाओगे कहाँ? बहुत अच्छा, ख़ुदा हाफ़िज़।" सआदत यह कह कर चल दिया।

× × ×

शेख़ साहब और मिर्ज़ा साहब डेवढ़ी पर आए। शेख़ साहब ने सेवती को बुला कर कहा।

"बी सेवती हम लोगों की तरफ़ से आदाब अर्ज़ करो और कहना दोनों ख़ादिम ताज़ा मुबारिक बाद देने आए हैं। वल्लाह आज कोई इनाम दिलवाये, माल कहीं नहीं गया। जूँ का तँ रक्खा है। आमिल साहब ने बहुत मेहनत की, ख़ुद तो ज़बान से नहीं कहते थे लेकिन अब की दफ़ा उनको ख़र्च भी करना होगा, उन्होंने दो तोला मुश्क, पाँच तोले ज़ाफ़रान तो मेरे सामने आग़ा से लाने को कहा और एक सोनार को सोने के पुतले के लिये बुलवाया भी है।"

"पुतला कितने का होगा?" मिर्ज़ा साहब ने पूछा।

"भई मुझे ठीक तो नहीं मालूम, पाँच तोले से भला क्या कम होगा। सवा सौ उसके रखिये।"

"अजी डेढ़ सौ कहिए, कुछ भाव भी मालूम है।"

"हाँ मैं भूला, अच्छा तो अब बेगम साहब से समझा देना, ढाई सौ की फ़िक्र उस दिन के वास्ते कर दीजिए। जिस वक़्त सामान हो जाय उसी दिन बुलाऊँगा। जब माल हाथ आए तो दिल से ख़ुद ही रुपया निकाल कर, सरकार ऐसी नहीं हैं, कौड़ी कौड़ी अगला मिल ज़ायगा। इनाम आदि अलग। आगे क़िस्मत हम लोगों की" शेख़ जी बोले।

× × ×

मुन्ने साहब अपने दोस्तों के साथ गपें मार रहे थे।

"आपको याद होगा।" सआदत कह रहा था, "उस दिन छान-बीन यार लोगों ने अच्छी तरह कर ली है। हाँ कुछ रह गई आज ही कल में खुल जायेगी।"

"हाँ हाँ बताइये क्या पता चला।" मुन्ने साहब ने पूछा

"अजी आप तो कहते थे बाहर की है। जनाब वह शहर ही का रेज़ा है, लोग घर से निकाल लाए हैं। मुझे सिर्फ़ यह मालूम करना है कि वह कौन लखलुट ला परवाह घर है कि यह सब बातें इन बदमाशों ने चुपचुपाते कर लीं।"

"सब तो पूछ लिया, अभी अस्ल नाम नहीं मालूम हुआ, कभी नजमुन्निसाँ, कभी बिस्मिलाह, जिस तरह रंडी की कोई ज़ात नहीं उनके नाम भी सैकड़ों, हज़ारों और एक बात मैं तुमसे कहूँ, मुझे बार-बार शुबहा होता है कि मैंने इसको कहीं देखा है।"

× × ×

नजिबनिया के यहाँ बैरिस्टर साहब का सईस पहुँच कर कहने लगा—

"तो साहब हम को भेजत रहे। कहेन, हम अब न आउब, तुम्हारे हियाँ रकम-रकम कै लोग आवै लाग। और बेगम साहब आप जानें साहब

की कचहरी मा बड़ी बात है, हाकिम का हाथ पकड़ लेते हैं, जौन चाहे तौन आज करा डालैं।"

"अरे भई साहब की ख़िदमत में इनकी तरफ़ से आदाब तसलीमात अर्ज़ करना, वल्लाह कल से जो साहब नहीं आए इनका खाना पीना हराम है, मुँह ओढ़े निढाल पड़ी रहती हैं।" नन्हे मिर्ज़ा ने कहा।

"साहब बड़े ख़फ़ा हैं, कहत हैं हम का सब हाल मालूम भवा, तुम्हारे घर न आऊब।"

× × ×

बैरिस्टर साहब के यहाँ बख़्शू कह रहा था—

"हुज़ूर जो फ़रमायें गुलाम हाज़िर हैं।"

"देखो हमने सब बात सोच लिया, नन्हे मिर्ज़ा को सजा दिलवानी चाहिए।"

बख़्शू रोते हुये बोला—

"मैं तो किसी काम का न रहा, मैं नौकरी पर रहता था, ये पड़ोस में रहता था, बस कुछ ऐसी पट्टी पढ़ाई। मेरा दिल तो कहता है, हो न हो कुछ जादू किया। वह बहुत भोली है यह ले उड़ा। हुज़ूर अब अल्लाह ने चाहा यहाँ से लेके लन्दन तक लड़ूँगा, बे फांसी दिलवाए न रहूँगा।"

"देखो हम सलाह देता है! उस बयान में क्या लिखा जायेगा तुम्हारी मनकूहा है, गवाही के वास्ते कोई मौलवी ठहराओ, दो चार पढ़े लिखे आदमियों की गवाही के लिये कहो, अब तुम कल सबेरे कोठी पर आ जाना। बस जो हम बतायें उस पर चलना, ख़बरदार किसी से न कहना।"

"हुज़ूर जो फ़रमायेंगे गुलाम बजा लायेगा। क़सम प्यारे हुसैन के लहू की जो इसका ज़िक्र भी आए, नाक काट डालिएगा, भला मजाल है अभी फाँसी दिलवा दीजिये।"

१५

शेख़ साहब, मिर्ज़ा साहब और नवाब साहब खड़े बातें कर रहे थे।

"मुबारक हो हुज़ूर !" शेख़ साहब बोले, "अब जाके ग़ुलामों को ख़ुदा ने सुर्ख़रुई नसीब की, बड़ी-बड़ी कोशिशें की गईं, खाना पीना हराम रहा, ग़ुलाम ने तो यह अहद कर लिया था, जब तक पता न चल जायगा हुज़ूर को मुँह न दिखायेगा, करबला चला जायगा, दो एक बातों का इन्तज़ाम करना था मगर ख़ुदा को नमकहरामों का मुँह काला करना मंजूर था। अगर आज ग़ुलाम क़दमों से जुदा हो कर करबला चला जाता तो यह सुर्ख़रुई कहाँ नसीब होती ? हुज़ूर क़सम जनाबे अमीर की बड़ी-बड़ी कोशिशें और तदबीरें की गई हैं, तब जाके कहीं पता चला है, मगर वल्लाह मैं तो मान गया, क्या बात इरशाद फ़रमाई है, ज़मीन व आसमान टल जाते मगर क्या मजाल जो ख़ुदा का हुक्म टले।"

"भला ऐसी भी बात है।" मिर्ज़ा शुरू हो गये, "हुज़ूर जो बात इरशाद फ़रमाते हैं पत्थर की लकीर हो जाती है, मालूम होता है हुज़ूर बचश्मे ज़ाहिर मुलाहिज़ा फ़रमा रहे हैं। वल्लाह, नहीं ख़ादिम ने तो बारहा आज़मा देखा, शेख़ साहब मैं तो क़ायल हूँ और क़ायल क्या मानी मोतक़िद हूँ, इसमें आपने जो जो कोशिशें की हैं मेरा ही दिल जानता है और सिर्फ़ हाथ पाँव ही की नहीं बल्कि अपनी गिरह से ख़र्च करने में भी कोई हिचक नहीं हुई।"

"हज़रत बात यह है !" शेख़ बोले, "सरकार का काम है, जान तक काम आ जाए, जो हिचक करे वह शरीफ़ पला है, जान तक हाज़िर है।"

"हाँ कुछ सुना तो मैंने भी है !" नवाब साहब ने कहा, "आप कोशिश में थे, अब फ़रमाइये कुछ इस खुशी का नतीजा निकलता मालूम होता है, मुफ़्त की ठांय-ठांय और रुपया पैसा का ख़र्च है, मुझे

तो अलबत्ता इन बातों का ऐसा ख़्याल भी नहीं, हाँ बेगम को रात-दिन धुन रहती है, क्या कहूँ अजब समझ की आदमी हैं, एक तो बहुत कुछ चोरी में उठ गया फिर उस पर तुर्रा है, लौंडी साहब, ख़ुदा जाने किस भूल और लापरवाही से ग़ायब हो गई। ज़मीन खा गई आसमान खा गया। आज कई दिन हुए मुग़लानी से इस बाबत बेगम से बातचीत आ गई, कुछ ऐसा नागवार गुज़रा, बावजूदे कि पुरानी और मातबर आदमी थी मगर झल्लाहट में बरतरफ़ कर दिया, वह जो आमिल साहब मिले थे, उनका क्या हाल है, कुछ-कुछ तो उम्मीद बँधी है। अगर क़िस्मत का होगा मिल जायगा, मैंने सुना है आदमी माने हुए हैं।"

"ऐ हुज़ूर!" शेख़ ने कहा, क़सम वहदहूला शरीक की ऐसा आदमी तो आज ग़ुलाम के नज़दीक हिन्दोस्तान में तो है नहीं, हुज़ूर यह शहर अजब चीज़ है, ज़माने की नापुरसानी से गोशे में छिपे पड़े हुए हैं, इन लोगों का ज़माना नहीं रहा, वादा तो पक्का करते हैं बल्कि आज ही कल में माल निकलवाने को कहा है, अगर ख़ुदा को सुर्ख़रुई मन्ज़ूर है इन्शाअल्लाह यह काम हुआ ही ख़्याल फ़रमाइये, ज़्यादा घबराने की ज़रूरत नहीं। किसी ने कहा है जानें लड़ा दें, ख़ुदा जाने कहाँ-कहाँ तलाश करने से और किन-किन तरकीबों से ऐसे लोग मिलते हैं।"

"हाँ साहब आप बजा फ़रमाते हैं!" नवाब साहब कहने लगे, "मशहूर है ढूँढ़े से ख़ुदा मिल जाता है। मगर वल्लाह आपकी कोशिशें और मिट्टी छानना यादगार रहेगा, हाँ भई अगर यह बात हो जाय तो बड़ी मेहरबानी है। क्या वजह, मुझे अब मालूम हुआ कि धीरे-धीरे घर का बहुत सामान निकल गया, जो कुछ बाक़ी था वह मुन्ने साहब ने ठिकाने लगाया। कुछ ऐसे शरीर बदमाश सोहबत में आने लगे हैं कि उन्होंने दूसरी राह पर लगाया है, फिर उसके वास्ते रुपया पैसा की ज़रूरत, मैं तो बेक़ार देता नहीं। हाँ उनके आगे रो पीट की ख़ुशामद-बरामद से कुछ ले मरते हैं। और फिर साहब वहाँ तक ग़नीमत था, मैं

आप से क्या कहूँ, कहने की बात नहीं, जैसा कि मुग़लानी ने कहा है यह टाँग खोलो तो लाज, वह टाँग खोलो तो लाज, लोगों ने दो चार चीज़ें उड़ा देने की ऐसी आदत डाली है कि चलते वक़्त जिस पर हाथ पड़ा ग़ायबग़ुल्ला। और यही बदमाश लुच्चे, शोहदे सरता भरता करने को मौजूद, वह तो मुझसे अब भी पर्दा रहता, उस दिन बी मुग़लानी के कहने पर बातें खुलीं, आमिल साहब को कुछ रुपया देने की ज़रूरत थी। बेगम को व्याज़ोना निकलवाने की हाजत हुई, कुछ चीज़ें तोशाख़ाने से निकालने गईं वहाँ देखा तो सफ़ा पाया, अल्लाह यह क्या मामला है? कोई आता जाता नहीं, हो न हो यही ज़ाते शरीफ़ हैं, मगर यह बात ज़बान पर लाने लायक़ नहीं, सुन के चुप हो गईं। ख़ैर, यह भी ख़ुदा की मेहरबानी। औलाद भी दी तो ऐसी, मेरी तो आस टूट गई, नालायक़, नंगे ख़ानदान, अब आपने ज़रूरत जो बताई तो फ़िक्र हो गई।"

"हुज़ूर ने जो फ़रमाया, आज तक ग़ुलामों को जो ख़बर हो!" शेख़ बोले, "निहायत रंज हुआ, ख़ैर ख़ुदा से उम्मीद है आगे चलकर संभल जाएँगे, आख़िर उनकी तालीम में कितना रुपया ख़र्च किया गया, कैसे-कैसे लायक़ उस्ताद, मास्टर मुक़र्रर हुए, फिर स्कूल में जाने के वास्ते ख़र्च गवारा किया गया। लड़का तो अपनी तबीयत से माशा-अल्लाह नेक, रईसाना मिज़ाज का है; हाँ सोहबत ज़रा ख़राब है। हुज़ूर का इशारा हो तो सब का आना जाना बन्द कर दिया जाय। वल्लाह ग़ुलाम तो दंग हो गया, जो कुछ कहें सर आँखों पर, बड़े अफ़सोस की बात है, हमारी ज़िन्दगी पर कि जिस सरकार से परवरिश हुई हो उसको ऐसी कठिनाइयों का सामना करना पड़े।"

"अब इन बातों का कोई इलाज नहीं!" नवाब साहब ने कहा, "हाँ एक तरकीब समझ में आती है, बेगम भी कहती हैं कि शायद जो बदमाश उनके पास आते हैं उनका आना जाना बिल्कुल बन्द कर दिया जाय, ख़्याल कीजिये चार दिन में कहीं बात ठहर जायगी, उस वक़्त बदनामियाँ मुझको कितना शर्मिन्दा करेंगी।"

"बिल्कुल ठीक है हुज़ूर !" शेख़ बोले, "उसका बन्दोबस्त हो जायगा, तकलीफ़ फ़रमाने की ज़रूरत न होगी।"

"वल्लाह मुझे खाना पीना हराम है, ज़रूर कोई राह निकालिये। इस लड़के से जैसी मुहब्बत थी उतनी ही नफ़रत हो गई। ग़ौर करने की बात है, मेरा लड़का और ऐसा आवारा ? मैं तो आज ही आक़ कर देता, बेगम से मज़बूर हूँ, उनका यह हाल है कि जब तक घर में नहीं आता दिन भर खाना नहीं खाती और मैं तुमसे क्या कहूँ, कहने के लायक़ नहीं। अरे साहब मुझे मालूम हुआ है कई जोड़े और कई ज़ेवर बनवा-बनवा के साहबज़ादे की रन्डी को ख़ुद माँ देती हैं। भला यह भी कोई इन्सानियत है। वाह री आपकी मुहब्बत। मामला क्या कहूँ मज़बूर हूँ, वरना आज ही कहता मँगाओ सवारी मैके जाओ, साहबज़ादे को भी लेती जाओ, नानी नाना देखेंगे, ख़ुश होंगे !"

"हज़ूर यह बातें माफ़ करने के लायक़ हैं, इन्सान है, फिर ममता के आगे कुछ नहीं सूझता। यह भी मुहब्बत का एक दर्जा है, जो जान से प्यारा होता है उसका दिल ख़ुश करने को सब ही कुछ किया जाता है। कुछ माँएं ऐसी ही होती हैं, माँ के कलेजे का वही हाल जान सकता है जिसके दिल में औलाद की ऐसी ही मुहब्बत हो। ऐ हुज़ूर, माँ बच्चे की मुहब्बत में दरिया में फाँद पड़ती है, आग में कबाब हो गई, कोठा से बच्चों के साथ कूद पड़ी हैं--हालांकि पागल से पूछिये तो यही कहेगा-अपनी जान बचाना बेहतर है--अरे जब हम ही न रहेंगे तो हमारे बच्चे के साथ मुहब्बत करने वाला कौन रहेगा ? मगर इन्सान की बात यह है कि यह बाते बेख़ुदी और बेचैनी में उस वक़्त कुछ सुझाई नहीं देती अपना ख़्याल ममता के आगे रहता ही नहीं कि अपना नफ़ा नुक़सान देखें। जिन लोगों में बच्चों की मुहब्बत बे इन्तेहा होती है तमाम अक़्ल और समझ की बातें उसके आगे सुझाई नहीं देती, अगरचे बाद को समझ में आती हैं, मगर दिल तो ठहरा एक, फिर एक वक़्त में ममता और अक़्ल एक साथ नहीं आ सकती, ख़्वाह-मख़्वाह एक दूसरे में

पहले बाद हो ही गया। जिसमें जो चीज़ तेजी से है बस वही पहले होगी। इसी तरह माँ की ममता सबसे पहले ख़ुदा ने बनाई, तो वजह कमतरी के नाक़िस ज़ेहन में यही आती है कि ख़ून का जोश है। ऐ हुज़ूर, बच्चा माँ का टुकड़ा है, जब एक अंग पर शोक पहुँचने का डर होता है तो दूसरा अंग उसकी रोक पर तैयार हो जाता, आँख में मामूली सा पड़ने का ख़्याल गुज़रा और पल्कों ने पुतली को दामन में छिपाया, फिर यह आँखों की ज्योति ही हैं। आँखों के तारे कहलाते हैं। इसी सबब से, बस इस ख़्याल को अपने दिमाग़ से निकाल दीजिए। यह बातें ख़ुदावन्द करीम ने रक्खी हैं मगर हाँ इन्सान ज़ी फह्म व ज़ी अक़्ल बनाया है। मौक़ा और मस्लेहत समझना उस पर लाज़िम है, नहीं इन्सान और हैवान में क्या फ़र्क़ है? मगर औरत बेवक़ूफ़ होती है, माफ़ कर देने के लायक है। ख़ुदा ने मजबूर बनाया है। हुज़ूर यह बड़े मर्दाना अक़्ल और ज़ब्त का काम है कि हर हाल में अक़्ल का दामन न छूटे। हुज़ूर गुस्ताख़ी माफ़, यह बात तो हमने सरकार ही में देखी। भला किस हाल में क्या मज़ाल जो अक़्ल और समझ के ख़िलाफ कोई बात कर बैठें। और हुज़ूर इन औरतों का क्या मुक़ाबला, अगर यह अक़्लमन्द हों तो मर्द हैं, यह भी उनकी बड़ी अक़्लमन्दी है। अपने घर बार के इन्तज़ाम में इस होशियारी और समझदारी को सर्फ करती हैं। इन बातों पर ख़ाक डालिये, दिल न दुखाइये, यह भी इन्सान हैं। इस तरह के मामले आ ही जाते हैं, अगरचे अक़्ल बराबर बताती है, अगले ज़माने वाले दफ़्तर के दफ़्तर स्याही कर गए हैं मगर होता वही है जो दुनिया में उस वक़्त से लेकर अब तक हो रहा है। दुनिया इसी का नाम है, वल्लाह बाज़ वक़्त ख़्यालात आते हैं, दुनिया छोड़ देने का जी चाहता है।"

"भई वल्लाह शेख़ साहब!" मिर्ज़ा बोले, "तुमने मेरे जी की कही और इस तरह से बात को चोंचले के साथ हुज़ूर में अर्ज़ किया कि दूसरे की मज़ाल नहीं, वल्लाह सब बातें मेरी समझ में आ गई।"

"हाँ हाँ!" नवाब साहब ने कहा, "शेख़ साहब, तुम्हारे बयान में

ऐसा ही असर था, मैं बजाए ख़ुद बहुत कुछ क़ायल हो गया, अच्छा अब यह तो फरमाईये क्या किया जावे ?"

"हुज़ूर जो आपकी समझ में आये, मैंने जो आया अर्ज़ कर दिया, हुज़ूर मालिक हैं, सब के कद्रदान हैं।"

"अच्छा तो लाला बन्सीधर के यहाँ जाइये, मैं रुक्क़ा लिखे देता हूँ। ज़्यादा कहने सुनने की ज़रूरत नहीं, जो मुनासिब हो उनसे कहकर रूपया ले आइये। हमारा उनसे हिसाब होता रहेगा। इस वक़्त की ज़रूरतें तो निकल जाए, मैं समझता हूँ कि बहरहाल दो हज़ार में काम निकल जाएगा। और जो बचेगा और ख़र्च में काम आएगा।"

"जी देखिये ! अर्ज़ करता हूँ, हिसाब लगा लूँ, सिर्फ़ अन्दाज़ा है, कमी वेशी होती रहेंगी।"

"हाँ भई बार-बार उनको तकलीफ़ न देना पड़े, आजकल किसी के यहाँ रुपया हर वक़्त तो मौजूद नहीं रहता और ख़ास के हमारे बन्सीधर साहब दोस्त जिन का यह है दो चार रुपये ऊपर रख लिये बाक़ी कोठो में दाख़िल कर दिया। ज़्यादा रकम हुई बैंकघर भेज दिया। और भई अस्ल बात तो यह है मुल्क़ में रुपया का थोड़ा आसानी से, बिला इन्तेज़ाम किये बड़ी बड़ी महाजनी कोठियाँ तो एक दम से दे नही सकती हैं। रह गया बन्दोबस्त करना, फिर वह हर वक्त हाज़िर नहीं, ख़्वाह-म-ख़्वाह एक दो दिन की मोहलत की ज़रूरत होती है, अरे भई अब रुपया पैसा, इज़्ज़त आबरू, अक़्लमन्दी, वेवक़ूफ़ी जो कुछ है वह इन्तेज़ाम और बन्दोबस्त से, अगर यह है तो एक मामूली सा काम भी सुहूलियत और आसानी से नहीं हो सकता, चाहे आप महाजन, राजा बाबू, ताल्लुक़ेदार बल्कि लाट साहब तक हो। मैं तो यहाँ तक कहता हूँ, ख़ुदा की ख़ुदाई में अगर कुछ है काम की बात तो यही इन्तेज़ाम और बन्दोबस्त।"

"जी हुज़ूर बन्दोबस्त का क्या कहना !" मिर्ज़ा बोले, "देखिये सरकार में तीस बरस के बाद नया बन्दोबस्त किया जाता है तब जाके तीस बरस

तक चल सकता है। गाँव-गाँव, खेत-खेत, पैदावार, मालगुज़ारी, हज़ारों झगड़े, सब इस बन्दोबस्त के सबब से।"

नवाब साहब मिर्ज़ा की नासमझी पर मुस्कुरा कर बोले—"अच्छा अब जाके रुपये का बन्दोबस्त कीजिए, यह रुक्का लीजिए।"

१६

नवाब साहब की बैठक में सआदत और मिर्ज़ा साहब बातें कर रहे थे।

"क्यों साहब ? आप कहाँ आए हैं ? किसके पास आये हैं ?" मिर्ज़ा ने पूछा।

"जी यहीं से आया हूँ !" सआदत धीरे से बोला।

"यह वक़्त तो नवाब साहब के बाहर आने का नहीं, किसी और वक़्त आइये।"

"नवाब साहब से नहीं मुन्ने साहब से कुछ काम है !" सआदत मुस्करा कर बोला।

"मुन्ने साहब से क्या काम ? आ हा हा ! आप उनके मिलने वालों में हैं !" मिर्ज़ा गर्म हो गए, "तो अब उनसे मुलाक़ात नहीं होगी।"

"क्यों ?"

"अजी क्यों क्या मानी। बस इस वक़्त चले जाइये, दोस्ताना आप से करते हैं, उनसे अब मुलाक़ात नहीं हो सकती। इस तरह के लोगों को नवाब साहब नापसन्द करते हैं। नहीं मालूम कहाँ-कहाँ के शोहदे लुच्चे छाँट-छाँट के मुलाक़ात के लिये पैदा किये हैं। आप ही लोगों ने

ग़ज़ब ख़ुदा का बच्चे को मतऊन और बदनाम कर रक्खा है। बस बाज़ आइये इस रस्मो मुलाक़ात से, अपनी मुहब्बत बस छप्पर तर रखिये, क्यों वेफ़ायदा लड़के पर ख़फ़्गी दिलवाते हैं आप ?"

"तो क्या अब मुन्ने साहब घर से निकलने से मना कर दिए गए हैं ? और जनाब आपने छूटते ही सख़्त क़लामी शुरू कर दी, मुझे बड़ा अफ़सोस है, देखभाल के किसी को कहते सुनते हैं, या सब धान बाइस पन्सेरी ? ऐ जनाव मैं उन लोगों में नहीं हूँ, मैं तो एक उन्हीं के फ़ायदे की बात कहने आया था, बहुत अच्छा जाते हैं। जो मुमकिन हो इतना कह दीजियेगा, एक शख़्स सआदत आया था और ज़रूरी काम जिसके बारे में आपने कहा था उसी पर आप से कुछ ज़रूरी बातें करनी थीं, मुलाक़ात नहीं हुई फिर कहीं आपसे मुलाक़ात होगी कह दिया जायगा।"

"अजी जनाव यह आप कहते किससे हैं। आप यहाँ न आया कीजिए, न उनसे कहीं और मिला कीजिए, हम लोगों को हुक्म है कि आप लोगों से न मिलने दें। संग ख़राब है, रईस का लड़का, आप लोगों की आवारगी, कच्ची लकड़ी, बस अपनी मेहरबानी ही रखिये, कुछ कहा सुना नहीं जायेगा।"

"अजी ग़ुस्से को थूक डालिये, कुछ हाल तो बताइये, मामला क्या है ? ख़ैरियत तो है ?"

"बहुत उम्दा !" मिर्ज़ा व्यंग्य से बोले, "ग़ोया बिल्कुल भोले बने जाते हैं, यह सब आप ही लोगों की संगत ने नतीजे पैदा किये हैं, अब मुन्ने साहब से हाथ धो रखिये। एक क्षण तो आपसे मुलाक़ात होगी नहीं, इस तरह के लोग इस क़ाबिल नहीं। लाहौल वला, आजकल ऐसे-ऐसे लुच्चे हैं, जहाँ चारो बैठे किसी रईस के लड़के से साहब सलामत हुई दो ही पट्टियों में ऐसा चंग पर चढ़ाया दोनों जहान में उसका थल बेड़ा न लगा। वाह साहब वाह, आप लोगों से शैतान ने पंनाह माँगी, जिस घर में घुसे भीख मँगवा दी। न इज़्ज़त का ख़्याल न आबरू का, न रुपये

पैसे का, सिर्फ़ अपनी हा हा हू हू, दिल्लगी से वास्ता और कुछ मतलब नहीं। लाहौल वला, आजकल का ज़माना इस क़ाबिल नहीं, इल्म, तहज़ीब, शराफ़त, ऐसे लुच्चों की संगत में सिवा नशेबाज़ी और आवारगी, रंडीबाज़ी के दूसरा काम नहीं आता है। हम तो हज़त साफ़-साफ़ कहते हैं, आप लोगों की संगत से ख़ुदा बचाये, इसी में हज़ारों घर बरबाद हुए और इनको क्या, बस अन्दाज़े से इधर का ध्यान भी न लाइयेगा। गए वह दिन जब ख़लील खाँ फ़ाख़्ता उड़ाते थे। वह तो कहिये बड़ी जल्दी ख़ैर हो गई, आप लोग हरगिज़ किसी शरीफ़ से मिलने के लायक़ नही !" मिर्ज़ा साहब ने घूर कर चौकीदार की ओर देखा और तेज़ी से बोले—"देखो, तुमको हुक्म देते हैं कि मुन्ने साहब के मिलने-जुलने वाले जब आएँ हरगिज़ यहाँ दम भर ठहरने न दो, नहीं तुम अपनी नौकरी से हाथ धो बैठोगे।"

"अजी आप कुछ तो बताते नहीं !" सआदत बोला--"ख़फ़ा होते चले जाते हैं, ख़ैरियत तो है, मिज़ाज कैसा है ? आज कुछ सरकार की ख़फ़गी हुई या घर से लड़ के आए हैं, कहिये ! रात अच्छी तरह कटी थी या नहीं, आप तो मालूम होता है आज बिल्कुल हत्थे पर से उखड़े हुए हैं, हम तो इन्सानियत से पूछते हैं, आप इसका जवाब देते हैं, बिगड़ बिगड़ के।"

"वाहियात बातों का जवाब ही क्या ? जवाबे जाहिलाँ बाशद ख़ामोशी !" मिर्ज़ा तेज़ स्वर में बोले, "अस्ल यह है सरकार को यह सोहबत पसन्द नहीं और साहब उनकी मर्ज़ी, अख़्तियार है, अपने घर का हर आदमी बादशाह है, बस ! आपको हुक्म नहीं है आने का, इन्सानियत से पेश आते हैं, नहीं दम भर जो ठहरने देता, वल्लाह ! देखने से आँखों में लहू उतर आता है।"

"अजी आप सुनाते किसको हैं, जाते हैं, न आयेंगे, कभी पेशाब करने भी न आयेंगे, हमको क्या ग़रज़ पड़ी है, कुछ किसी के ग़ुलाम नहीं, हम तो सिर्फ़ मुहब्बत के बन्दे हैं, आपके कहने से मालूम हो गया।

ग़रें डब्बे किसको दिखाते हैं, आपका कौन दवैल है, या मुन्ने साहब किसको मान अभिमान दिये देते हैं। और यह लोफ़र, लुच्चे, लफ़ंगे होंगे जो ऐसी बातें सुनते होंगे, यहाँ लाखों पर तो पेशाब न करें, अच्छा ले अब जाते हैं।" सआदत यह कह कर बाहर चला गया।

थोड़ी देर में मुन्ने साहब भी आ गए।

"लीजिये साहब!" मिर्ज़ा साहब उन्हें देखते ही बोले, अब जो बन्दोबस्त किया गया है घर पर हमले होने लगे, आपके वह शैतान के भाइयों में से एक तशरीफ़ लाए थे, मैं मौजूद था, कह दिया गया, मुलाक़ात न होगी। आप लोग यहाँ का आना जाना बन्द कीजिये, सरकार की मनाही है। अच्छा हुआ आपका सामना न हुआ, हम सब की आबरू गई होती, इतने दिन की ख़ैरख़्वाही मिट्टी में मिल गई थी!" यह कह कर उन्होंने मुबारक की तरफ़ इशारा किया, "और इस बेचारे का तो कहीं दुनिया में ठिकाना न लगता, उम्र भर की नमकहलाली पर दाग़ आ जाता, और रोटियों से बदतरफ़ हो जाता, वह घाटे में, आजकल जैसा ज़माना है ज़ाहिर है, ताक़त व जवानी थी नहीं, इस सरकार के क़दमों पर सब निछावर हो गई, भला अगर बरतरफ़ी होती तो भीख मांगे भी न मिलती, इनके वास्ते उल्टी गंगा बहती, दाने-दाने को हैरान होते, नौकर चाकर, इनको अब कौन रखता, अब तो यह आदमी से चुटकी में लंगूर हो गए हैं। अपाहिज़, रतौंधी आती है कहिये इस सरकार में बुरेहाल भलेहाल चले जाते हैं, दूसरी जगह जाएँ, खड़े तो होने न पाएँ। बस यह सुलूक़ आज तक होता था, बुरी बला टली, देखिये हुज़ूर आपके दोस्तों की बदौलत यह इनाम मिलने वाला था, वह तो कहिये मैं मौजूद था, मैंने साफ़-साफ़ कह दिया, आइन्दा आप लोगों की मनाही है।"

"अरे भई नाम तो बताओ कौन साहब थे?" मुन्ने साहब ने पूछा।

"कौन साहब क्या मानी, कोई आपके संग का लफंगा होगा?

नशेबाज़, जुवाड़ी, किसी रन्डी का भाई, बस इस तरह के दोस्त तो आपके रह गये हैं, क्या कोई रईस, नवाबज़ादा, शाहज़ादा आता है ?"

"या अल्लाह ! नाम भी नहीं पूछा आप भी क्या आदमी हैं, आख़िर इसकी शर्मिन्दगी मेरे सर हो गई, जब मिलेंगे शिकायत करेंगे, यह तो ग़ोया उनकी नहीं मेरी हतक़ है।"

"ऐ हज़रत क्या आपने मुझको भी ऐसा अहमक़ बनाया, नाम वग़ैरा मैंने सब पूछ लिया है, उनकी वज़ा देख ली, वह थे ही इसी लायक़।"

"अरे भई नाम क्या था ?"

"नाम था सआदत ! फिर आप क्या कीजियेगा ?"

"आपने बड़ी ग़लती की, अफ़सोस। अरे साहब वह तो हमारे बड़े दोस्त हैं, उनसे एक काम भी था, आप किसी को देखते भालते भी हैं या सिर्फ़ कुर्क़ बिठाते हैं, आप जानते हैं वह कौन हैं ? वह ख़ुफ़िया पुलिस है !"

मिर्ज़ा धीमे होकर बोले--"हुआ करें ! सूरत से तो मालूम नहीं होते थे, अभी कल का लौंडा, साहब ख़ुफ़िया पुलिस हो गया, यूँ जो आप फ़रमायें सब कुछ हैं ! ख़ुफ़िया पुलिस क्या लाट के बेटे सही, मगर यहाँ तो एक कमज़ोर सा दुबला पतला लौंडा, बे वर्दी पहने, बाज़ारी लुच्चों जैसा हमारे सामने आया। हम कोई गुप्त विद्या तो जानते नहीं ? कुछ उनके माथे पर लिखा न था, हमने सरकार के हुक्म की तामील की, डरिये आप, हमको क्या ग़रज़ पड़ी है ? वह आपके दोस्त हैं, यार ग़ार हैं। हम निवाला हैं हमपियाला, ख़ुशामद कीजिये आप, यहाँ किसको ग़रज़ पड़ी है ?"

"मैं और लोगों को नहीं कहता, मगर उनके न मिलने से एक बड़े काम का हर्ज़ हुआ।"

"और हुज़ूर वह कह गए हैं हम न आयेंगे, एक बड़ा ज़रूरी काम था !" मुबारक बोला।

"अरे भई वह तो मैं भी कहता हूँ!" मुन्ने साहब जल्दी से बोले, "अफ़सोस बड़ा हर्ज़ हुआ। वह आदमी काम का है। ख़ैर देखा जायगा उससे तो अब मिलना ज़रूरी है, मिर्ज़ा साहब तो कुछ बात समझते ही नहीं।"

× × ×

मुन्ने साहब नख़्ख़ास से गुज़र रहे थे। इतने में सआदत नज़र आया।

"अजी हज़त!" मुन्ने मियाँ ने जल्दी से आवाज़ दी, "सलाम अलैक, मिज़ाज शरीफ़, आप तो वल्लाह, इस तरह चले जाते हैं गोया अलैक सलैक ही नहीं। वल्लाह आप की मुरौवत की क़सम खाना चाहिये, वल्लाह, उस रोज़ आप आये, मुझे बेईमानों ने ख़बर न की, बड़ा अफ़सोस है, निहायत रंज हुआ, बस इन्हीं बातों से तो घर मुझे जहन्नम से बदतर मालूम होता है।"

"ख़ैर हज़त!" सआदत बोला, "आपने साहब सलामत की, आदतन मुझे भी जवाब देना लाज़िम आया, मुसलमानी तरीक़े के ख़िलाफ़ था जो ख़ामोश रहता, मगर इसमें शक नहीं, किये की सज़ा ख़ूब पाई। वाक़ई हम हैं इसी लायक़, वल्लाह मुझे रंज नहीं। साहब हर शख़्स को अख़्तियार है, कोई हमको जाने क्या? ऐसे काम पर मुक़र्रर हैं जब तक कोई पहचान वाला न हो जान कैसे सकता है। कोई वर्दी तो पहने नहीं, और दूसरे बहुत से कामों में छिपाना भी ज़रूरी है। क्या वाहियात पेशा है। मैं जब कान्सटेबिल था, मज़े में था, वर्दी पहनी लाट साहब के बराबर हो गये, अब यह तो उलटी सज़ा है, मगर भाई पेट बुरी बला है। आजकल यही ग़नीमत है, चाहे रास्ते गली में कोई दस जूते भी मार ले। मिर्ज़ा साहब ने तो बड़ी तहज़ीब की, हमको उनका शुक्रगुज़ार होना चाहिये, यह सब आपकी मुहब्बत के कारण है। ख़ैर, कल से तोबा की इसी वजह से कहा है, बड़े आदमियों की मुलाक़ात में अपना ही

उल्टा नुक़सान होता है। भई इसी मारे मुझे साहब सलामत में हिचकिचाहट हुई। आपके कहने के मुताबिक़ उस काम को मैंने अच्छी तरह पूछ लिया है। दर अस्ल वह मामला कहीं बाहर से नहीं आया, यहीं का है। किसी घर से निकल आई है, कोई आदमी करीमबख़्श नामी है, वह घर से निकाल लाया है। कुछ दिन ले जा के एक मकान में रक्खा, वहाँ एक ज़रदोज़ साहब पहूँच गये, उनका सितारा चमका, उड़ा लाए, वह उस कारख़ाने में काम करता था और घर बार, माँ बाप का पता नहीं। वही कारख़ानादार साहब बहुत अच्छे आदमी थे, वही खाना-पीना देते थे, और धीरे-धीरे सब काम सुपुर्द कर दिये थे। ऐसा कि माल मसाला देना, काम देना उसी के हाथ था, क़रीब उन्हीं का मकान ख़ाली था, उसी में पड़ा रहता था। मियाँ करीम ने भी उन नेकबख़्त के वास्ते मकान लिया था। फिर तुम जानो ख़ाली मकान, भूतों का राज, यह एक ही लुच्चा, लक्का सग्गा हो गया। कारख़ाने का बहुत सा माल उड़ा लाया। ऊँट की चोरी झुके-झुके क्योंकर हो सकती है? चार ही दिन में भाँडा फूटा। निकाल दिये गए, अब यह बी साहब को गले में बांधे निकले, माँगने खाने को। औरत भी तरहदार थी, कुछ माल भी ले के निकली थी। मैंने सुना है किसी बड़ी चोरी में इनकी और करीम बख़्श की कुछ शिरकत भी थी। बल्कि एक ज़माने में पुलिस छानबीन की भी गई थी, मगर अमीर का घर लखलुट कारख़ाना, ऐसा कुछ पेच पड़ा, कुछ उल्टा दे दिला कर यह लिखवाना पड़ा कि माल फिर मिल गया। फिर मियाँ करीम ने बहुत सर मारा, किसी ने कुछ पता न बताया। दूसरे यह कि जो माल उस चोरी में लोगों ने उड़ाया था, उसमें बहुत से छँटे हुए बदमाश, आदी मुजरिम शरीक थे। कुछ ज़ेवर और असबाब तो इन नेकबख़्त के हाथ लगा और नक़दी रुपया कुछ मियाँ करीम को मिला। चुनान्चे अब जाके उन्होंने लकड़ी की दूकान रक्खी है। बल्कि आज वह जो नुक्कड़ है उस पर वह जो ऊँची सी टाल है इन्हीं की है। अब दरिया से किश्तियाँ की किश्तियाँ लाते हैं। चार पैसे के आदमी हो गए। इधर इनकी आशना नन्हें मिर्ज़ा ज़रदोज़ी छोड़छाड़ के उस

डोम को नख़्ख़ास के कमरों पर उठा लाए; एक बारिस्टर साहब भी फँस गए हैं चुनानचे हाल में मैंने सुना है मियाँ करीम ने उन्हीं के मशवरे से नालिश फ़ौजदारी दायर की है।"

"भई वल्लाह तुमने ख़ूब टोह लगाई, भला यह तो बताओ, यह सब बातें तुमको क्योंकर मालूम हुईं!"

"अजी बस इसको न पूछिये, हमारा मुहकमा ही ऐसा है, सब बातों को इधर उधर सुन के ख़ुफ़िया तहक़ीक़ात करके पूरा सिलसिला कायम कर लेता है। कुछ काग़ज़ात से पता चला है, जिस जिस मुहल्ले में रहे हैं उनके भंगियों से सुराग लगा है और बहुत सी बातें तो नजबुन ने अपनी एक बड़ी राज़दार सैयदानी से बयान की हैं। वह उसके यहाँ बहुत आती जाती है। ग़रज़ कि उसका एक अलग लम्बा क़िस्सा है, आपको उससे कोई ताल्लुक़ नहीं। वह कहिये आपकी मुहब्बत और इनायत इस क़दर है कि इतना हाल बयान कर दिया, वरना इन बातों को आप क्या जान सकते हैं? यह हमारे मुहकमे की राज़ की बातें हैं, अगर हुक्काम को मालूम हो जाय अभी मुसीबत में फंस जांय, फिर इलावा बदनामी के रोटियाँ बाद हों जांय। आप अपने काम से काम रखिये। सिर्फ़ इस वजह से कि आइन्दा मुझे आपका कोई काम करना मन्ज़ूर नहीं यह आख़ीर ख़िदमत है। मैं दोस्ती के हक़ से अलग होता हूँ, आप इन बातों को याद कीजियेगा। हाँ इतना आख़ीर दफ़ा कहे जाते हैं कि आज से हमसे आप से साहब सलामत न होगी और यही आपके और मेरे हक़ में मुनासिब भी है। मगर एक बात दोस्ताना और कहता हूँ, मुझे आपके ढंग अन्दर से लेकर बाहर तक के अच्छे नहीं मालूम होते।"

ख़ैर मुन्ने साहब ठंडी साँस लेकर बोले, "अच्छा भाई, तुम्हारी अगर यही मर्ज़ी है तो हमको क्या कलाम? मगर यार यह तुमने साहब सलामत छोड़ने की बुरी सुनाई। बड़ा अफ़सोस है, ऐसा दोस्त और सच्चा आदमी कहाँ मिलेगा? मैं जानता हूँ, कल मिर्ज़ा साहब की बातों ने आपको रन्ज पहुँचाया। ख़ैर मैं क्या कहूँ, इन नालायक़ों से बहुत ज़िच हूँ। बल्कि

बाज़ मामला में तो यही जी चाहता है, लानत भेजो घर बार को। यह उम्र, ऐश आराम बेफ़िक्री की है, यह लोग हमारे जानी दुश्मन हैं। बहुत सी बातों का ख़्याल आता है नहीं एक आध की जान ले लेता। भई मजबूर हूँ घर से, बाहर निकल के कहाँ जा सकता हूँ ? कोई दोस्त आशना भी नहीं ऐसा जो अपने घर में बरस दो बरस आराम दे सके, अब्बा उठते निकाल देने को कहते हैं, वालदा साहिबा के दम से मैं पड़ा हूँ।"

"ख़ैर आप दिल को संभालिये, आसान तरकीब तो यह थी।"

"अभी तो वह भी मुमकिन नहीं, मुझे तो कोई इन्कार नहीं, नौकर चाकर, खाना कपड़ा कुछ नहीं तो दो सौ रुपया में होना चाहिये, दोस्त अहबाब की खातिर मदारात के वास्ते सौ रूपया महवार चाहिये, एक गाड़ी घोड़ा, आप समझिये नौरोजी की दूकान एक बोतल रोज़ चाहिये अगर चार दोस्त जमा हो गए तो दो तीन की नौबत पहुँचती है। कोई हफ़्ता नहीं जाता, उसका बिल पचास साठ का न अदा करता हूँ, ग़रज़ कि यही बातें है, जिन से मजबूर हूँ।"

"यह तो ठीक है मगर नौकरी पेशा को इन बातों से क्या वास्ता, तो फिर मुनासिब है कि आमदनी के मुवाफ़िक ख़र्च रखा जाय।"

"भई क्यों कर मुमकिन है ? अरे भई तुम्हीं बताओ, किस किस बात को कम करूँ, और अगर इसी तरह से रहना है तो ज़िन्दगी का क्या मज़ा ? और बड़ा ख़र्च मैंने बताया ही नहीं, पाँच चार रूपया इधर उधर ख़र्च हो ही जाते हैं, और कभी की फ़रमाइश ऐसी होती है, जब तक कोई ग़ैर मामूली फ़िक्र न की जाय टलती ही नहीं।"

"चूँकि मैं आपका दोस्त हूँ और अब कोई ताल्लुक़ रखना मुनासिब नहीं इस वास्ते साफ़ साफ़ कहता हूँ, माफ़ फ़रमाइयेगा, गोकि मैं कुछ भी नहीं और न नसीहत करता हूँ बस अख़ीर बात कहता हूँ कि जिस आराम व आसाइश को आप चाहते हैं वह आपके तरीकों और घर के

ढंगों से कभी मिलने वाली नहीं। बल्कि फ़िक्रें ज़्यादा हो जाएँगी, अच्छा अब आदाब अर्ज़ करता हूँ।"

मुन्ने साहब की आँखों में आँसू आ गए--"मुझे ऐसे दोस्त को रुख़सत करके बड़ा अफ़सोस मालूम होता है। मगर भई, बस ही क्या है? चंदा खूब मार खाता है, उस मरदूद मिर्ज़ा पर मुझे बड़ा गुस्सा मालूम होता है। बार बार यही जी चाहता है, यह बात जो हुई महज़ इसी वजह से हुई है तो सही, इसी बात पर और इन बातों को खूब करूँ। दुश्मनों को ख़ूब जलाऊँ, लीजिए साहब और वन्दोवस्त कीजिए, अपनी नहीं कहते, रोज़ चकमे देके हज़ारों के रुक्के लिखवा ले जाते हैं। अभी कल की बात है, पाँच हज़ार घर में आया, सब शेख़ साहब और उनके पेट में गया किसी ने कहा है कि गा बजा के सब अपना कर लिया। मैंने सुन गुन पाई, वाल्दा से कहा था और कोई बड़ी बात नहीं। कल ढाई सौ रूपये की मुझे ज़रुरत थी, उन्होंने वादा किया था, जिस तरह से बनेगा मुझे देंगी। मगर वहाँ ऐसा लेखा डेवढ़ा बताया कि सब इन्हीं बेईमानों के कट्टे लगा, वल्लाह ख़ूने जिगर पी के रह गया, इन लोगों को देख के मेरी आँखों में लहू उतरता है, बार-बार यही जी में आता है, हज़रत तो यूँही सब इन बेईमानों को खिला देंगे, तो सही इससे दूना ख़ुद ख़र्च किया जाता तो है ही। यह तो मजाल ही नहीं कोई मना करे। मगर आप समझिये कुछ हमारा भी हक़ है, अरे हम कब ऐश करेंगे, दोस्त अहबाब को कब खिलायेंगे? ज़िन्दगी का मज़ा क्या, अरे मियाँ, एक बार मर के फिर जीने को आएँगे? दुनिया में रहता क्या है? यही नेकनामी, यही बदनामी!"

"हाँ यह तो बात ठीक कही आपने, मगर इसको तो सोचिये हिम्मत के यह मानी नहीं है कि बाप दादा की दौलत पर यह सारी झाँझ निकाली जाए। भला आदमी ख़ुद कुछ कमाये फिर यह ख़र्च करे, फ़िर यह मज़ा भी है, कोई अगर कहे तो यही कहे ख़ूब कमाया ख़ूब लुटाया।"

"हाँ यह तो आप ठीक कहते हैं मगर जनाब मेरा बहुत जी जलता है यही ख़्याल आता है।"

"अच्छा तो मैं आपको खुदा के सिपुर्द करता हूँ, खड़े खड़े देर हो गई। आपको तकलीफ़ भी होगी, कहिये अब इधर से कहाँ जाइयेग ?"

"भई अब सीधा घर जाऊँगा, आज सिर्फ़ तुम्हारी तलाश में निकला था, ख़ुदा ने मुलाक़ात करादी। और जो आप की राय हो चलें कमरे में दम भर वहीं बैठें, ग़म गलत करें।"

"नहीं मैं अब तो वहाँ न जाऊँगा और न ज़रुरत है, हाँ आप जहाँ चाहें खुशी से जांय।"

"नहीं मेरा भी अब जी नहीं चाहता।" मुन्ने मियाँ गम्भीर स्वर में बोले फिर हाथ मिलाते हुए कहा "अच्छा भाई, रुख़सत, ख़ुदा हाफ़िज़।"

सआदत गले से चिमट गया, आँखों में आँसू आ गए—"मुन्ने साहब सच जानो, मुझे तुमसे मुहब्बत थी मगर अफ़सोस है।"

"खुदा हाफ़िज़!" मुन्ने साहब भारी स्वर में बोले। और दोनों दोस्त दो अलग अलग रास्तों पर चले गए।

१७

नन्हें मिर्ज़ा ने नजिबनिया को सम्बोधित करते हुए कहा—"अजी तुमने सुना ? ग़ज़ब हो गया, वल्लाह कल से तो मेरा खाना पीना हराम है और इस मारे रात को आया भी नहीं। वह तो कहो ख़ुदा ने एक वकील साहब के दिल नेकी डाल दी, तब उन बेचारों ने छुड़ाया। क़सम जनाबे अमीर की अजब शरीफ़ आदमी हैं, उनसे यहीं की बस यूँही

जान पहचान थी, वेकहे सुने ख़ुद सीन सिपर हो गए और ख़ूब-ख़ूब काम किया।"

"क्यों ख़ैर तो है? यह कौन वकील थे, कुछ ख़ुलासा तो कहो, अध कही बात मुझको नहीं भाती आख़िर हुआ क्या?" नजमुन्निसा बोली।

"अजी ठहरो! पेट में साँस तो समा ले, मैं दौड़ता हुआ हवालात से छूट के भागा आता हूँ, क़सम हज़रत अब्बास की मुँह से कोई बात नहीं निकलती, तुम परीशान न होना, ओखली में सर दिया है तो धमकों का क्या डर, कर ले वह भी दुश्मनी जितनी उससे की जाए, मैं क्या कहूँ अचानक फँस गया, वल्लाह, मुझे कोई ख़बर न थी, सीधे स्वभाव चला आता था, पुलिस के एक सिपाही ने काग़ज़ दिखलाया, और निकाल के हथकड़ी डाल दी। लाख कहता हूँ! भाई यह क्या मामला है, हँस के फ़रमाते हैं चलो तुम्हारा चालान हो गया। अरे भाई कुछ सुनोगे भी, अच्छी ज़बरदस्ती है, कौन जुर्म किया है, आख़िर वजह तो मालूम हो, चलने में क्या है? हम ठहरे रिआया, तुम हाकिम, जहाँ चाहो ले चलो मगर बता तो दो। सिपाही साहब कहने लगे, ऐसे भोले, इनको कुछ मालूम ही नहीं, चोरी नहीं की, डाका नहीं डाला और की तो मेहरिया भगा लाए। तब मैं जाके समझा, कुछ दाल में काला है। उसी तुम्हारे आशना की कारस्तानी है, वल्लाह उस वक़्त से मेरे हवास दुरुस्त नहीं, मैंने जी में कहा बुरे फँसे। और जो कहीं भी सुन-गुन पाता बन्दा वहीं से दो तीन होता, जो तुम्हारे यार साहब मिल जाते तो यह जी चाहता था दाँतों से बोटियाँ नोचूँ। मगर बँधा ख़ूब मार खाता है। मैं समझ गया दुश्मनों में फँस गया, यार अब बुरी हुई, अफ़सोस है कोई ख़बर करने वाला नहीं। लाख कहता हूँ यह तो मकान है खड़े-खड़े हो आने दो, मैं अभी आया, न यक़ीन आये साथ चलो, बस दो-दो बातें करना है। मगर वह एक ही शैतान का बेटा दूसरे उस तरफ़ से कुछ दे दिया गया होगा, मेरे पास उस वक़्त झंझी भी नहीं, बिल्कुल

दे ख़र्च, वह तो कहो हाथ में दो अँगूठियाँ पड़ी थी। कमर बन्द में चाकू था। मैंने कहा भाई यह ले लो अपना काम करो। और उसके बाद देखा जायगा, मगर वह लोग तुम्हीं जानो, एक ही बेमुरौवत।"

"ग़ज़ब हो गया।" नजिमुन्निसा बोली, "किसी तरह यहाँ तक आ जाते तो जितने में राज़ी होता दिया जाता।"

"मैं तो लाख-लाख कहता रहा, उन लोगों ने सुना भी नहीं, बल्कि जब मैं ज़री ठिठक रहा, तो एक ने पीछे से घूँसा मार के आगे ढकेल दिया।" नन्हें मिर्ज़ा की आँख भीग आई, गम्भीर स्वर ने बोले, "चार आदमी राहगीर जमा हो गए, बस तुमसे क्या कहूँ? तू चल और मैं चलूँ, बाज़ार में ठग लग गए, एक बात से मजबूर था, चारों तरफ़ से लोग मुझको घेरे थे, जी तो यही चाहता था वहीं खड़े-खड़े वारा-यारा हो जाए, इतने में आपके मियाँ यार साहब भी आ गए।"

"ख़ुदा ग़ारत करे यार को, हज़रत अब्बास का अलम टूटे, या शेरे ख़ुदा क्या देर लगाई है, फ़ना क्यों नहीं कर देते। तुम हर दफ़ा बार-बार जो कहते हो मुझे गुस्सा छूटता होगा अपनी अम्माँ बहिनिया का इतनी की गुनहगार हैं। राँड पड़ोस का मामला, दीनी भाई अलबत्ता बनाया, मैं तो सीधे स्वभाव की आदमी, छल प्रपंच क्या जानूँ? कहीं मकान लिया उसमें ठहरा दिया। अगर जो ऐसी बात होती तो क्या दुनिया में जवान, जहाँ अपने हमउम्र गभरू न जुड़ते थे, जो ऐसी बूबक का साथ देते? यह कहो वक़्त पड़े पर गदहे को बाप बनाते हैं, अगर कुछ नियत बदली होगी तो वह जाने।"

"अजी नियत कैसी? यह तो मुझे अब मालूम हुआ है, उसने सवाल दिया है, साहब मेरी मनकूहा थी, नन्हें मिर्ज़ा घर से सीढ़ी लगा कर आधी रात को भगा लाए हैं।"

"मनकूहा होगी उसकी माँ! बड़ा ब्याहने चला आया, सात पीढ़ी कोई ब्याहता नसीब हुई थी? मुवा तूफ़ान लगाता है, तोले बाँधता है,

चूल्हे में झोंकूँ उसके मनक़ूहा को, नौज ख़ुदा तो न करे मेरे दुश्मन ब्याहता हों, ख़ुदा उस दिन के लिए मुझे ज़मीन का पैवन्द कर दे, भला सरकार पूछे खाने को भी कौड़ी तेरे पल्ले है। बड़ा चला है मनक़ूहा करने, तो सही सब हाल भरी कचेहरी में न खोल दिया हो ? उल्टी हथकड़ियाँ पड़ जायेंगी। वह समझता क्या है अपने को ? क्यों बे फ़ायदा मुँह खिलाता है अपनी वाली पर आऊँ तो मिट्टी में मिला कर रख दूँ। मियाँ का दुनिया जहान में कहीं ठिकाना न लगे, काला पानी हो, तब मैं नजमुन्निसा अपने नाम की और वह होता कौन है ? करने वाला ब्याह हम क्या किसी की लौंडी बाँदी हैं ? अपनी ख़ुशी, ख़ान आदमी, जहाँ जी चाहा, जिससे राज़ी हुए, यह हमारी ख़ुशी की बात है।"

"अजी तुमको मालूम नहीं, यह बेईमान जब तक फाँसी न पायेगा चैन न होगा, हाँ और सुनो, वह जो बालिस्टर साहब कभी-कभी आते-जाते थे उनको वकील किया है।"

"अख़्ख़ाह, अख़्ख़ाह ! बालिस्टर को किए हैं, उसके पास खाने को तो था नहीं, पैसा कहाँ पाया, हो न हो कुछ इसमें भी चाल है। बालिस्टर साहब आजकल ज़री गए हैं ना, ओह कोई बात नहीं, मैं यूँ तो उनको सीधा कर लूँगी।" वह चुटकी बजाते हुए बोली।

नन्हें मिर्ज़ा बोले—"मैंने कहा चलो अच्छा है, हमको ख़र्च न करना पड़ेगा, घर की बात है, कहीं जाना नहीं।"

"अच्छा तो अब पेशी कब है, क्या करना चाहिये ?"

"करना क्या चाहिये ? यही तुम कह देना।"

"तो क्या मेरी भी पूछा गाछ होगी, देखो मिर्ज़ा जहाँ तक हो सके इस बला को टालो, और जो मुझसे मामूली सी बात पूछी गई तो मैं प्याज के से छिलके उधेड़ कर रख दूँगी, क्या फ़ायदा बात बढ़े ? गन्दी बात जितनी कुरेदी जाएगी उतनी बदबू फैलेगी।"

"मैंने कल से दाना मुँह पर जो रक्खा हो तो उसी कमाई की मार पड़े, मेरे हवास कहाँ थे ? भूख प्यास सब ग़ायब थी वल्लाह किस तरह से रात कटी है तुमसे नहीं कह सकता। ख़ुदा दुश्मन को भी नसीब न करे, यह तो कहिये बेचारा वकील राह चलते आड़े आए नहीं आप जानिये हज़ारों बरस की दोस्ती मुलाक़ात, सब तरह का सलूक करो मगर आजकल वक़्त पर भाई साहब हर एक से मुमकिन नहीं। ख़ुदा उसके बच्चे सलामत रखे, मुश्किल कुशा अली उसके उसी तरह आड़ी पर काम आएँ। अच्छा एक चिलम पी के फिर जाता हूँ उनके यहाँ, जो सलाह बतायें की जाये। तुम समझो, ऐसे दोस्त रोज़ कहीं मिलते हैं। वल्लाह रोयाँ रोयाँ मेरा दुआयें देता है, मेरी खाल की अगर जूतियाँ बनायें उफ़ तक न करूँ, वह तो गोया उन्होंने बेदामों ग़ुलाम बना लिया !"

"हाँ बेहतर है, इन सब बातों की सलाह उन्हीं से पूछना चाहिये, जो सलाह वह दें वही ठीक है।"

"अच्छा मैं तो अब चला, तुम इत्मीनान से बैठो, घबराना नहीं; तुम्हें मेरी जान की क़सम, वक़्त ही तो है, बड़ों-बड़ों पर पड़ जाता है। ले भला हम क्या चीज़ हैं ? बादशाह पैग़म्बर तो बचे नहीं, ग़ज़ब ख़ुदा का, रसूल के निवासों पर बीबियों पर क्या-क्या ज़ुल्म नहीं हुए ?"

"ख़ैर अच्छा !" नजमुन्निसा ने ठंडी साँस ली, मजबूरी का नाम शुक्र है, मैं दिल मसोसे कमरे में बैठी रहूँगी। चैन आराम तो ख़ुदा को मन्जूर ही नहीं; जब तक यह काँटा न निकल जाये भला चैन यहाँ किस पिच्छलपाई को आ सकता है। रात ही को मेरा माथा ठनका था। अन्दर वाला कहता था ख़ुदा ख़ैर करे, मेरी बाईं आँख फड़कती है और मैंने अदबदा के देखा है, जब मेरा दाहिना बाज़ू फड़कता है ज़रूर किसी न किसी दुख का सामना होता है।"

× × ×

नन्हें मिर्ज़ा ने वकील साहब को सम्बोधित किया—"हुज़ूर क्या अर्ज़ करूँ ? मैं उम्र भर का गुलाम हो गया, बल्कि उसको भी उज्र होगा मगर मुझे नहीं, वल्लाह आपने मर्द का काम किया। ख़ुदा आपको इसका बदला देगा। हुज़ूर कह तो नहीं सकता, मैंने कहा छूट के पहले सीधा आपके पास हो आऊँ। नहीं कहेंगे, अजब पाजी था, मिलने भी नहीं आया, यह तरीक़ा भले आदमियों का नहीं है। अपने एहसान करने वालों का एहसान न माने। मैं तो कहता हूँ आज अगर आप कह दें तो आग में फाँद पड़ू, वल्लाह, क़सम जनावे अमीर की अगर हिचक करूँ तो मेरे बाप के नुतफ़े में फ़र्क़ है अब तदबीर का मौक़ा मिला है, कुछ ऐसी पैरवी चाहिये, इस झंझट से हुज़ूर की बदौलत छुटकारा मिले। और मैं कहता हूँ, आज यह बालिस्टर साहब बख़्शू की तरफ़ से आये थे कैसे ? यह तो हमारे मेहरबान हैं बल्कि बी साहब भी जानती हैं। उनको किसी तरह यक़ीन ही नहीं आता, कहती हैं तुमको धोका हुआ होगा, वह न होंगे। आख़िर हमारी मुलाक़ात का इतना भी हक़ न मानेंगे ? यह तो इन्सानियत से दूर है, मैंने कहा बैठो होश की दवा करो, यह सब बालिस्टर आजकल इन्सान होके विलायत से कब आते हैं ? अजी जो बन्दर होता है वह तो बन्दर ही है। सितम तो वह इन्सान करता है जो बन्दर होता है, उनके यहाँ इन्सानियत, आदमीयत क्या चीज़ है ? हद हो चुकी, बाप को बाप, माँ को माँ नहीं समझते, फिर भला औरों को क्या उम्मीद ? अजी, यह तो समझो रुपया की लकड़ी के बल बन्दर नाचता है। जैसे मेहनताना पर यह लोग कचेहरी में काम करते हैं।"

"ख़ैर अच्छा ! इन लम्बी बातों से क्या हासिल ?" वकील साहब बोले, "मगर बालिस्टर साहब को ऐसा चाहिये नहीं, हम लोगों ने सुना है, यह विष बोया हुआ तो उन्हीं हज़रत का है। अपने को बड़ा लायक़ समझते हैं, लियाक़त का यह हाल, ज़ाब्ता तक मालूम नहीं। जो कुछ पढ़ा होगा विलायत का पढ़ा होगा। नज़ीरें तक तो उनके पास है नहीं,

यहाँ ख़ुदा की मेहरबानी से सब मसाला हर वक़्त मौजूद, बाज़ी-बाज़ी किताबें तो खुद अदालत की आल्मारी में नहीं निकल सकती। बल्कि लाला से पूछो, अक्सर किताबें जूडीशियली में हमारी माँग ली जाती है। तुम कोई फ़िक्र न करो, वह बड़ी बात ही क्या है, चुटकी बजाते यूँ छुड़ा लेंगे, तुम घबराओ नहीं और बी साहब से कह देना हमारे होते हुए रंज करे तुम्हारी जूती, जब तक हमारे दम में दम है तुमको छुड़ा के लायेंगे, और नन्हें मिर्ज़ा यह तो कहो, तुम मुस्तक़िल वहीं रहते हो, या कभी-कभी जाते हो ?"

"जी हुज़ूर अब आप से साफ़-साफ़ कहूँ, उस शख़्स को यही गुनहगार यहाँ लाया है लेकिन यह झूठ है निकाल के नहीं लाया। वह ख़ुद होशियार है, समझदार है, अपनी नेकी-बदी जानती है। किसी की ब्याहता नहीं, खुद अपनी मालिक है, बल्कि आज तो कहती थी कौन वकील साहब हैं जो ऐसे हम लोगों पर मेहरबान हैं। मेरा जी चाहता है मैं मिल के ज़बानी शुक्रिया अदा करूँ; मगर इसी में हिचक है, न मालूम किस मिज़ाज के आदमी हैं, नहीं वकील साहब को क्या ? अदना-आला उनके दरबार में अपने-अपने मुक़दमे लेकर जाते हैं। यह तो कहो कोई मोलवी तो हैं नहीं, इनका यह हाल कहने को बिला अल्लाह रसूल का नाम लिये काम नहीं चलता। वे शरा के निवाला नहीं तोड़ते नमाज़ एक दिन की नहीं छूटती, दुआ तोबा हर वक़्त पढ़ी जाती है। वे इस्तेख़ारे क़दम नहीं रखते, और नियत का यह हाल पूरा बकरा पायें, वे हलाल हज़म कर जाएँ। औरत की सूरत देखी नहीं, रास्ते गली में या कमरे पर शैतान का सामना हुआ नहीं, अपनी जान पर लाहौल भेजते-भाजते ख़ुद लाहौल हो गये। इसी मारे मैं कुछ हिचकिचाती हूँ, शायद मेरा चौचहला दरवाज़े पर उतरने न दें। नहीं मैं जाके जूतियों पर सर रख देती। और यह तो मेरी मजाल नहीं कुछ अर्ज़ कर सकूँ, वही बात है, चूनी कहे मुझे घी से खाओ।"

"मिर्ज़ा साहब आप बी साहब को मेरी तरफ़ से इत्मीनान दिला

दीजियेगा, कहियेगा परेशान होने से हम ख़ुद परेशान होंगे। आप सुख से मकान में बैठें, आप ही की परेशानी से तो हम लोग मेहनत करते है, वल्लाह अगर एक लाख का मेहनताना का मुक़दमा आये तो वापस कर दूँ। और यूँ आने को जिस वक़्त आपका जी चाहे बिला झिझक तशरीफ़ लाइये आपके वास्ते दिल में जगह है, हाँ अगर कोई फ़ुर्सत का वक़्त हो तो और अच्छा है, मजमे में न मुक़दमा समझा जा सकता है न हमारे दिल को इत्मीनान होता है।"

"ऐ हुज़ूर उनको क्या आजकल कमरे के दरवाज़े भी नहीं खोलती है। उनका तो कहना है, दिल सर्द हो गया, यहाँ के लोग मिलने लायक़ नहीं हैं, जिस वक़्त खुशी हो बिला तकल्लुफ़ फ़रमाइये, वहाँ कोई मजमा भी नहीं, मगर हाँ हुज़ूर की फ़ुर्सत का वक़्त होना चाहिये, इसका ख़ुदा की मेहरबानी से यह हाल है किसी वक़्त फ़ुर्सत ही नहीं, एक आता है एक जाता है, मुक़दमे वालों का ताँता लगा है। नाम ही ऐसा है, सैकड़ों कोस से लोग, राजा बाबू, अड़ियल महाजन, चले आते हैं, किसी से बात करने की मुहलत नहीं। हुज़ूर ग़ुलाम सच कहता है, इस शहर का नाम लीजिये, मुमकिन नहीं जो हुज़ूर का नाम न लेते हों। सच पूछिये तो लखनऊ हुज़ूर ही के नाम से चलता है जैसे महाराजा चन्दू लाल के नाम से हैदराबाद आज तक चल रहा है। फिर क्यों न हो, क़ानूनी लियाक़त, मुक़दमे का रख रखाओ, हर एक की ख़ातिरदारी, क़ानूनदानी, इज़्ज़त आबरू कचहरी दरबार में, सरकार में, यहाँ तक कि लन्दन तक हर शख़्स की ज़बान पर मशहूर है। क़सम है जनाबे अमीर की ऐसा वकील तो बड़ा-बड़ा बालिस्टर भी नहीं देखा, ख़ुदा ने बात ऊँची की है, लाट साहब मानते हैं।"

"अरे म्याँ मिर्ज़ा!" वकील साहब ख़ुश होकर बोले, "कुछ घबराने की बात नहीं, हमारा जवाब तो यह है कि मुद्दई झूठ कहता है, मगर इसके वास्ते एक बात करनी होगी, यानी बी साहब के इज़हार की ज़रूरत होगी। बस किसी दिन यह दो चार बातें उनको समझाना है, मेरी

यह आदत है कोई बात अधूरी नहीं करता, मुक़दमे को चारों चूलों से खुद अपने हाथ से ठीक कर लेता हूँ, क्यों? वह इतनी होशियार है कि कचहरी में जो पूछा जावे ठीक-ठीक जवाब दे लेंगी? घबराएँगी तो नहीं? उनका बयान अगर ठीक हो गया, तो सारी बालिस्टरी वहीं मिट्टी में मिला दी हो, बल्कि उल्टे दावा नन्हें मिर्ज़ा की तरफ़ से उसी वक़्त दफ़ा १२२ ठोंक दिया हो। वह अभी लौंडे हैं, वकालत आके सीख जाएँ भला यह भी बड़ी लियाक़त है। एक ग़रीब आदमी को फ़ौजदारी में फाँस लिया, वह औरतज़ात तुम्हारे लेने में न देने में। उसे बेचारी और मजबूर समझ के उस पर आप बड़े मर्द हो गये। मगर क्या करें, मुक़दमे नहीं वल्लाह मुहर्रिरी भर में इतना कमा लेता हूँ जितना महीने में उनको नसीब न होता होगा। और बना चाहते हैं, साहब लोग, कोठी में रहें, ऊँचे पहियों की टमटम पर हवा खाने निकलें, कोट पतलून पहने फिर साथ ही उसके बैरा, ख़ानसामाँ, पंखा कुली, धोबी, मेहतर, एक दो दर्जन नौकर चाकर, दस पाँच कुत्ते, कल्बवर, उल्टा किटकिट जाया चाहते है। शराब कबाब की आए दिन दावतें दिया चाहें, सुबह शाम पाँव गाड़ी पर सैर की जाए, भई, आख़िर समझो कुछ इसमें रुपया लगता है या नहीं, अब भाई इलाक़ा जो था बेच के खा गए। बाबा ने जो रियासतें ले-लेकर मेरे नाम जमा किया था वह तालीम के ख़र्च में उठ गया, अब शाहख़र्ची हो तो कहाँ से? इसी मारे दो-दो एक एक रुपया पर कचहरी में पड़े फिरते हैं।"

"हुज़ूर बजा है, लियाक़त होना और बात है, अब इस गुलाम के वास्ते क्या हुक्म होता है? हाज़िर रहूँ या किसी और वक़्त आऊँ?"

"अच्छा हमारा नौकर शाम को आयेगा, जो मुनासिब होगा कहला भेजेंगे, तुम जाके इतमीनान से घर में बैठो, जल्दी क्या है, अभी तो पेशी को कई दिन हैं।"

× × ×

शेख़ साहब ने नवाब साहब को सम्बोधित किया --"हुज़ूर के इक़्बाल से सब काम ठीक हो गया, मेरे तो होश उड़ गये थे, वाह रे सरकार की हिम्मत और इस्तेक़्बाल। ज़रा होकर पर बल नहीं ? ओह अहा रुपया पैसा क्या माल है, मगर हुज़ूर बड़ा जिगरा चाहिये, यह ख़ुश क़िस्मती कि ऐसी आली हिम्मत सरकार की सेवा में है। इतनी उम्र ऐसी ही सरकार में बसर हुई, इज़्ज़त आबरू के साथ, ख़ुदा से सुबह शाम यही दुआ है, बक़िया उम्र इसी दर की चौखट पर गुज़रे। कल कुछ लोगों में इस तरह काना-फूसी अदालत में होती थी जिससे मालूम होता था कि चोरी के माल का पता लग गया, सुना है कोई बालिस्टर साहब छानबीन कर रहे हैं, खुद किसी ने उनके दिल में भी डाल दी, मुझे टोक के रोक लिया, बड़ी देर तक मुक़दमा पूछते रहे। मैंने सारा हाल बताया कहने लगे कुछ डर नहीं, हम ऐसा मुक़दमा लड़ देगा कि सब हाल आईना हो जाएगा आईना, हम सब माल, मैं मुलजिमों के सरकार में न पहुँचा दें तो मेरा नाम बालिस्टर नहीं।"

"तो मैं कहता हूँ आख़िर इतनी मेहनत करने की क्या बात है, कोई काम बिला पैसा के नहीं होता। अरे भई आजकल का ज़माना तुम देखते नहीं, कहते हैं और की बला अपने सर कोई लेता है ? यह ज़माना अजब बेमुरौवत का है, वे मेहनताना आजकल पाँव की च्यूँटी तक काम नहीं करती। भला यह लोग तो बिल्कुल अंग्रेज़ हैं ? इनकी सब बातें ऐसी होती हैं जिनमें कोई न कोई अपना फ़ायदा ज़रूर होता है, फिर बताओ यह बालिस्टर साहब जो ख़ुदा वास्ते को इतनी मेहनत करेंगे, आख़िर उनको, क्या कोई अपना मुक़दमा मेहनताना वाला नहीं है, वल्लाह, बे मुरौवती तो इनकी हरकत से पैदा है। और आजकल अगले ज़माने की तरह जो कोई काम अल्लाह के लिये कर दिया जाये उसको अगले ज़माने की हिमाक़त समझते हैं। ख़ैर भई रस्मे ज़माना यही है, इस पर किसी को इल्ज़ाम नहीं दे सकते। मै जानता हूँ विलायत में कोई किसी को बे रुपया के पूछता भी न होगा। अपना बाप ही क्यों न

हो ? रह गया कोई काम ख़ुदा के वास्ते कर देना उसका यह हाल है इनके नज़दीक ख़ुदा ही नहीं, वास्ता कैसा ? वहाँ जो कुछ है मैंने अक्सर किताबों में देखा, रुपया और ख़ुद ग़रज़ी। और यहाँ भी देखिये वही उनकी हरकतें मसल है, दुनिया है और मतलब, मतलब है और अपना। भई सच कहूँ यह बात मेरी समझ में किसी तरह नहीं आती, तुम कहते हो, तुमको बुला के ख़ुद उन्होंने सब हाल पूछा। भई ख़ुद देखा नहीं, अक़्ल से पहचाना, उनको ऐसी क्या पड़ी थी जो तकलीफ़ उठाते। हो न हो कोई भेद इसमें ज़रूर है। भला मालूम हुआ है बालिस्टर साहब का मिज़ाज किस क़िस्म का है ? मुझसे उनसे कभी की मुलाक़ात भी नहीं। वह मेरे यहाँ की दिक्क़तों, तकलीफ़ों को क्या जाने ? जो तरस खाकर उनके दिल में मेरी तरफ़ से जगह हो, भई मेरी अक़्ल कुछ काम नहीं करती और यूँ भी तुमको अख़्तियार है जो चाहो कार्रवाई करो, मैं मना नहीं करता।"

"हुज़ूर का वजा इरशाद हुआ।" शेख़ ने कहा, "अस्ल की बात तो यही है; हाँ एक बात समझ में आती है, चूँकि यह चोरी बहुत भारी है और ज़ाहिर है, सरकार का नाम मशहूर है, सब हुक्काम को ख़बर है, पुलिस को भी इसी वजह से ज़्यादा फ़िक्र है, यक़ीनन उसका सुराग़ लगाने में कोई इनाम रक्खा गया होगा, उसके वास्ते यह सब कोशिश होती है, ख़ैर इससे हमको क्या वास्ता ? यह सरकारी इन्तज़ाम है।"

"हाँ भई हाँ ! यह बात सोची जा सकती है, मगर फिर इसमें यह डर है हमको ज़रूर ख़बर होती, आज तक इस कार्रवाही की अस्ली जो ख़बर हो ?"

"हाँ हुज़ूर, भला ऐसी बात थी, ग़ुलाम के कान तक बात पहुँचती और सरकार में न अर्ज़ करता; मगर मुमकिन है ग़ुलाम के कान तक न पहुँचती हो, जैसे पुलिस की इस मामले मे बहुत सी छोटी बड़ी कार्रवाइयों की शायद इस मारे इत्तला ज़रूरी न समझी हों कि कौन इन छोटी-छोटी बातों की इन्तेला दे। हमारी सरकार से वास्ता ही क्या ? सूची तो दख़िल

ही है, जब पहचान की नौबत आयगी मिला लेंगे। और फिर अगर ज़रुरत हुई तो हम कहीं भागे नहीं जाते। तो बात क्या हैं पुलिस को अच्छी तरह राजी कर दिया गया है, वह तो समझिये रुपये के गुलाम है। बड़े बड़े तो चिलमों पर आग रखते हैं, यह पचास चालीस के नौकर क्या माल ? हाँ हुज़ूर याद आया मुझे, क्या बताऊँ। ऐसा बदहवास हो रहा हूँ कि भूलने का मरज़ बढ़ गया है, जिस वक़्त बालिस्टर साहब ने मुझे बुला के कहा, मैं अक़्ल से समझा इसमें कुछ हो न हो उनकी मर्ज़ी होगी। ख़ैर हो न हो हम इसमें भी बाहर नहीं, शायद मतलब यह होगा कुछ शुक्राने के तौर पर अपनी तरफ़ से देने लेने की बातचीत हो। अगर वाक़ई उनकी नियत ऐसी है, अब हिम्मत या बे अटकल ठहरे, अगर हमारा फ़ायदा होता हुआ नज़र आएगा। हम ख़ुदा उनके साथ रिआयत करेंगे। क्या कुत्ते ने काटा है, बना बनाया बिगाड़ देंगे। मगर अभी उन्होंने अपनी ज़बान से कुछ कहा नहीं, हमने भी कहा इस वक़्त छेड़ना ठीक नहीं। पहले सरकार में इत्तला करदी जाय, अब वक़्त यहाँ पर यह है कि अगर यह कहा जाता है, इनाम आपकी मेहनत का हक़ है। वह तो आप को गर्वनमेन्ट गले गले पानी दिलवा देगी, तो एक तरह की बे होती है, मुमकिन है वहाँ ऊपर ही ऊपर उन्हीं लोगों से जोड़ तोड़ हो जाए और ले दे के माल सरता भरता करें गर्वमेन्ट तक पहुचने न दें, अगर सूरत है तो कुछ वादे ही की।"

मिर्ज़ा साहब जो अभी तक चुप थे यकायक बोले, "मेरी राय में कुछ वादा कर देना चाहिये।"

"हाँ, यह बात तो मेरे नज़दीक भी मुनासिब है।" शेख़ बोले।

"अरे भई शेख़ साहब।" नवाब साहब बोले, "तुम जानते हो, मैंने तुम को हर तरह का अख़्तियार दिया है। आज कल मेरी अक़्ल कुछ काम नहीं करती। जो कुछ मुनासिब समझो कार्रवाई करो, मेरा यह हाल है आना जाना, यार दोस्तों के मिलना छूट गया है।"

"ख़ुदा न करे!" शेख़ बोले, "हमारी ज़िन्दगी बेकार हैं अगर किसी

तरह की फ़िक्र हुज़ूर को होने दे। अगर ज़िन्दगी है, अल्लाह ने चाहा तो जैसी अब तक होती रही हैं, कोई फ़िक्र की बात न कही जाएगी। इस वक़्त एक चाल ग़ुलाम की समझ में आती है, अब जो बालिस्टर साहब से मिला जाए तो कुछ रूपया भी साथ हो, सिर्फ़ दिखावे के लिये और उन से वादा कर दिया जाए, इसलिये कि उनको यक़ीन हो, उनका अपनी सरकार में एतबार है और रुपया पैसा की कमी नहीं है, हुज़ूर इसमें बहुत सी बातें हैं, समझने के लायक़ !"

"तो अब क्या करना चाहिये ?" नवाब ने पुछा।

"हुज़ूर करना यह है कि अगर इस वक़्त रूपये में कोई दिक़्क़त हो तो फिर कोई रुक्क़ा लाला के नाम लिख दीजिए। सिर्फ़ उनको दिखाना तो है ही उनको, बजाय रुपया के एक तरह की बात बता के दिखा दिया जाएगा।"

"अच्छा तो रुक्क़ा लिखे देता हूँ, कितने का ?"

"इतने का हो कि एतबार करले, दस पाँच के रुक्क़े में काम नहीं चलता और फिर लाला को दिया भी नहीं जायगा, वहाँ से वापस आ के चाक ही हो जाएगा। वह तो सिर्फ़ बालिस्टर को दिखाना है। यही एक तीन चार हज़ार का काफ़ी होगा।"

नवाब साहब ने तीन हज़ार का रुक्क़ा लिख कर दिया और शेख़ साहब जेब में रख कर चलते हुए।

१८

करीम बख़्श सरिश्तेदार के जवाब में बोला—"हुज़ूर ! मैं अस्ला, जैसी चाहिये क़सम ले लीजिये, ग़रीब आदमी, नौकरी करके बसर

करता हूँ। हाँ अब लकड़ी की टाल रख ली है, सुबह से शाम तक, ख़ुदा रोज़ी देने वाला है, खाने को देता है। हुज़ूर नौकरी करके चार पैसे जोड़ के कुछ बाज़ार का रुपया क़र्ज़ दाम करके घर के लोगों का असबाब रख के दूकान रक्खी। कुछ बड़ी पूँजी तो है नहीं, यही दस बीस की बात है, खाने भर को ख़ुदा देता है, हुज़ूर सच है यह गुलाम के निकाह में है।" नजिबनिया की तरफ़ इशारा करते हुए कहा—"हुज़ूर निकाह हो गया है, चार पंचों में ब्याह लाया हूँ, ऐ देखिये साहब सब गवाह हैं। सैयद इरफ़ान अली ने निकाह पढ़ाया था, फिर साहब मज़े से घर में रहती थीं ? तावेदार आदमी घर में हर वक़्त तो रहता न था, काम पर जाता था इसमें ऐसा हुआ कि नन्हें मिर्ज़ा का आना जाना शुरू हो गया। पास पड़ोस का मामला, यह ठहरी औरतज़ात, कमसिन, कच्ची लकड़ी, न मालूम क्या पट्टी ऐसी पढ़ाई कि सब ले देके दोनों चलते हुए। घर में आये, देखा तो कानी चिड़िया नहीं, हुज़ूर इतनी दौड़ा-धूपी, पूछ ताछ की, कौन बताये, इस सफ़ाई से ले गये, कानों कान किसी को ख़बर न हुई, लोगों से पूछने पर मालूम हुआ इक्के पर ले गये थे। इक्का वाला गवाह है। एक चौराहे पर जाकर उतर पड़े, हुज़ूर आगे पता नहीं चलता, ख़ुद नन्हें मिर्ज़ा के उस्ताद से पूछा।"

"वेल ! उस्ताद कौन ?" हाकिम ने प्रश्न किया।

"हुज़ूर इनके जो उस्ताद हैं, भला सा उसका नाम है ! मोटे से हैं, गोरे चिट्टे हैं अधेड़ उम्र होगी। बड़े नेक हैं, मैं रोता था, तसल्ली दी, घबराओ नहीं, देखो ख़ुदा क्या करता है। उनको बुलाया, इन्होंने उनके सामने भी हैकड़ी की थी, आँखें दिखाई, कहा अकेले दुकेले समझ लेंगे। ख़बरदार इस गली में न चलना। हुज़ूर उस्ताद ने इनको निकाल दिया, सब माल मसाला पास रहता था, सब घुमा दिया। इसी बात पर कारख़ाने से निकाले गये, मेरी नौकरी में बल आया जाता था, हार के ओड़ते ओड़ते बैठ रहा, बड़ी तलाश के बाद टोह लगी। साहब इनको ले जाके कमरे पर बिठाया है, सब में मेरी बे आबरूई हुई। नुक़सान इस

शादी में बहुत हुआ। मैं तो हुज़ूर मर मिटा, खाने पानी की अलग तकलीफ़, नौकरी छूट गई, अब जाके पता लगा इनका। मैं चाहता हूँ यह मेरे साथ कर दी जायें तकलीफ़ न होगी, खाना कपड़ा देने को मौजूद, मज़े से घर में रहें हुज़ूर दो मकान मेरे अपने हैं, एक में ख़ुद रहता हूँ, एक किराये पर उठा दिया है। बाप दादा का मकान है, मगर हाँ—हूँ के सौ-सौ दो-दो सौ के और इस नन्हें मिर्ज़ा को सज़ा हो जाए जो रुपया मेरा उठा है सरकार दिलवा दें।"

हाकिम ने जिरह प्रारम्भ की। बख़्शू जवाब में बोला—"जी हुज़ूर मुझे किसी ने सिखलाया नहीं, मेरा तो घर ही उजड़ गया। जब से मालूम हुआ है यही हज़रत हैं, दुश्मनी हो गई है। और हुज़ूर किसको न होगी, इससे पहले कोई दुश्मनी न थी, सूरत तक नहीं पहचानता था। यह ग़लत है, दस्तूरी पर इनसे झगड़ा हुआ था, मैं इनको भगा नहीं लाया, हाँ इतना हुआ, जब यह आई चार आदमियों को बुलवा के चार बोल पढ़वा लिये; इसको सब गवाह सुनते थे। किसी साहब ने मेरे यहाँ रहने को नहीं कहा था, यह जैसा दस्तूर है निकाह के बाद मेरे घर आई थीं, मैं इनकी ख़बरगीरी के वास्ते तनख़्वाह नहीं पाता था। न कुछ मुन्ने साहब ख़र्च देते थे। हाँ लकड़ी की टाल अलबत्ता करता हूँ; चोरी छिपे कुछ बेचता नहीं, और टैक्स नहीं देता हूँ। मैं किसी मुक़दमे में सज़ा नहीं पा चुका हूँ। बालिस्टर साहब जो यह खड़े हैं मैं जानता हूँ। हाँ, और एक दफ़ा कोठी पर गया था, इनके मुहर्रिर साहब टाल पर से बुला ले गये थे मेरे वकील हैं, मैंने इनको कुछ दिया नहीं, ग़रीब आदमी हूँ, अद्धी की हैसियत क्या कहूँ? इनके देने के लायक़ मेरा मुँह नहीं, न इन्होंने मेहनताना चुकाया, तरस ख़ुदा से रहम करके मुक़दमा करते हैं मुहर्रिर कहता है बावरची-ख़ाने के वास्ते तुम्हारी दूकान से हमारा बावरची दस बीस रुपया की महीने में लकड़ियाँ ले जाया करेगा। साहब का खाना तो कोयले में पकता है, बड़े शाह ख़र्च हैं। बिल्कुल अंग्रेज़ी खाना होता है साहब, मैं अब किसी का नौकर नहीं, मगर हाँ

पहले एक नवाब साहब के यहाँ था, उनका मकान यहाँ से कोई तीन आना डोली होगा। मेरे मकान से आप समझिये बहुत देना होगा कोई दो आने, मुझसे किसी चोट्टे से मुलाक़ात नहीं, न किसी के साथ चोरी में कहीं गया। हुज़ूर नौकरी वाला आदमी, मेरा यह तरीक़ा नहीं। जब से दूकान रक्खी है दूकान पर बैठता हूँ; मैं चोरी के माल पर पेशाब करता हूँ। मैं सेंध होने और चोरी होने में किसी का साझीदार न था। मैंने हिस्सा नहीं लिया, न रुपये पैसे में, किसी चोर का नाम नहीं बता सकता। मेरा घर तो उजड़ गया, मुझे अपने निकाह का ख़र्च याद नहीं, और न मुझे यह मालूम है, मेरे घर में क्या-क्या था और बीवी क्या-क्या लेकर निकल गई, मेरे कोई लड़का नहीं हुआ। अगर लड़का होता तो यह बात न होती, इनको औलाद की तो मुहब्बत होती। अगर उस घर में न रखता तो नन्हें मिर्ज़ा भगा ले जाते, मुझसे मुन्ने साहब ने इनकी ख़बरगीरी के वास्ते नौकरी को नहीं कहा।"

× × ×

हाकिम भी देखते ही हुए उसके मुश्तरी,
सुनिये कि रूबकारी हुई पहले लौंडी की।

"वेल! मुसम्मात! तुम क्या बोलता?" हाकिम ने पूछा।

"हुज़ूर, जो पूछिये, मैं किसी की बीवी नहीं!" नजिबनिया घबरा कर बोली।

"जो मुद्दई कहता है सब ठीक है?"

"हाँ हुज़ूर ठीक है। मुल मैं इसकी बीवी नहीं, इसके साथ निकल विला शक आई। मैंने कहा तुम मेरे दीन दुनिया के भाई, मैं तुम्हारी बहन, तुम मुझे एक दिन, मकान में, कहीं ले के, मुन्ने साहब बता देंगे चलो, पहुँचा आओ। और तो बात क्या थी, मुन्ने साहब के घर में रहते थे।"

"मुन्ने साहब से ब्याह हुआ था?"

"नहीं हुज़ूर, आपकी समझ में ब्याह आता है, क्या कोई किसी के यहाँ यूँ ही नहीं रहता ? फिर साहब उनकी माँ हम पर शुबहा करने लगी, बहुत ख़फ़ा रहती थी, खाना कपड़ा नहीं देती थी, दो-दो दिन फ़ाक़े से रही ।"

"वेल तुम क्यों नही चला गया ?"

"हुज़ूर को ख़ुदा सलामत रक्खे, मल्का विक्टोरिया बनाये, बन्दा, बन्दी ऐसी साहब घर से बाहर क़दम न रक्खो । मरो सड़ो वहीं रहो । फिर आप जानिये, जनाबे अमीर की क़सम कई दफ़ा ऐसी बोटी मार मारी कि बदन में बटें पड़ गईं ।" नजिबनिया ने हाथ खोल कर दिखाते हुए कहा ।

"वेल ! अच्छा ! अच्छा क्या हुआ ?"

"हुज़ूर फिर एक मुग़लानी वह बड़ी गुस्ताख़ थी, वह और नमक मिर्च लगाती थी । साहब मेहरबान एक दिन की बात है हमको बुख़ार आया, उठने को जी नहीं चाहा, मुन्ने साहब ने पानी माँगा । हमारा जी न चाहा, उस पर खाना उस दिन न मिला । हमारी उनकी कुछ रंजिश थी, बेगम साहब ने पहले जूती-जूती फिर छड़ी-छड़ी मारना शुरू किया, कपड़े फट गये, कहा हरगिज़ न बनवाऊँगी । हुज़ूर एक-एक बात की तकलीफ़ कहूँ, जो मुझ पर गुज़री है । ख़ुदा पाँव की च्यूँटी को भी न दे, सारा घर दुश्मन हो गया, मुन्ने साहब से अकेले में क्या बातें होती हैं । तूने हमारे लड़के को ख़राब किया, आख़िर हमारे और मुन्ने साहब की सलाह हुई तुमको यहाँ से ले जाके अलग रक्खेंगे । यह सरकार में नौकर था, हमको अलग घर में ठहरा दिया, वहाँ बख़्शू आया करते थे, इनके बीवी बच्चे भी हैं, वह भी इसी घर में रहते थे, फिर तत्तो-थम्मो हो गई, फिर हमको मुन्ने साहब ने बुला लिया, ख़ुदा मुग़लानी को ग़ारत करे, वह बड़ी दुश्मनी रखती थी हमसे । थोड़े दिनों के बाद उशग़ला छोड़ दिया, हम सब कोठरी में क़ैद हुए ।"

"कितनी देर तक क़ैद रहा ?"

"जी हुज़ूर !" नजिबनिया आँचल से आँसू पोछ कर बोली, "बहुत घन्टे तक कोई बीस पचीस घन्टे हुए होंगे, सरकारी सिपाही आए, फिर मैं जी कड़ा करके निकल आई। ऐ कोई हमको क़ैद करे घर में बड़ा हुल्लड़ मच गया। मुन्ने साहब ने रात को हमसे कहा, यह ज़ेवर है जाके बख़्शू के यहाँ रख आओ। उसको समझा दिया, उस दिन से साहब, बेगम साहब जान की दुश्मन हो गई, मैंने किसी से कहा नहीं।"

"तुमको मुन्ने साहब ने मना किया था ?"

'जी हुज़ूर नहीं, यह बात किसी से कहने लायक़ की थी ? हमारे और मुन्ने साहब के बीच की बात थी, कौन अपना सर मुडंवाता। यूँ घर भर लहू का प्यासा बन रहा था, नवाब साहब सुनते वहीं ज़मीन में खोद के गाड़ न देते। भाई कर तो कर नहीं ख़ुदा के ग़ज़ब से डर। फिर एक दिन छज्जे के नीचे खटोला बिछाए हम लेटे थे, वहीं पानी बरस के निकल गया था। बस ऊपर से छज्जा ऐसा गिरा, उठ न जाऊँ तो सब मेरे ही ऊपर। किसी का कुछ नहीं जाना, मेरी तो जान गई थी। उस दिन से मैंने मुन्ने साहब से कहा अब सर से पानी ऊँचा हो गया, यहाँ रहना ठीक नहीं। अगर जो तुमको मन्ज़ूर है मुहब्बत रखना तो दूसरी जगह लो। उन्होंने कहा, अभी मेरा हाथ पत्थर तले है, मौक़ा होने दो देखा जाएगा। फिर कुछ समज के बख़्शू के यहाँ हमको भेज दिया। मगर अबकी दफ़ा अपने यहाँ हमको न ले गया, काहे से एक औरत हम से दुशमनी करती थी। और बख़्शू से फ़ौजदारी करती थी, लेजा के हमको रक्खा कहीं और मुहल्ला का नाम मालूम नहीं; साहब मेहरबान घर में कानी चिड़िया नहीं, कौवा हकनी बनी घर में बैठो। हाँ कभी न कभी बख़्शू पानी, पान की ख़बरगीरी करने आया जाया करता था। बस साहब, इसी को जो चाहो समझो, नौज ! मैं इस मुए की बीबी बनती, यह भला क्या खाके हमसे ब्याह करेगा। ऐ हुज़ूर सब झूठ, इसके आप बीवी बच्चे घर में बैठे इसकी जान को कोसते हैं। मैं तो इससे पैख़ाने में लोटा भी न रखवाऊँ, नौज दूर पारछाईं फूई, जहाँ मेरी दाई ने हाथ

धोए हों वहाँ इसको अपने सर पर से सदक़ा कर के छोड़ूँ; मुवा, खूसट।

"वेल वेल ! नन्हें मिर्ज़ा की क्या बात ?"

"हुज़ूर को ख़ुदा सलामत रक्खे, देखिये मैं सब कहती हूँ। जी ठिकाने हुए हुज़ूर, औरत मानी घबरा गई हूँ, दम ले लू तो सब बताऊँ। मैं कोई बात छिपाऊँगी नहीं, आँखों क़सम, नन्हें मिर्ज़ा की यह बात, हमको भगा नहीं लाए। बख़्शू झूठ कहता है, हम अपनी ख़ुशी से आप निकल खड़े हुए, आप जानिये मुन्ने साहब ने तो आना जाना छोड़ दिया। हम किस के ऊपर बैठे रहते, ख़ुदा रोज़ी देने वाला है, एक दर-बन्द हज़ार खुले। हम किसी की बहू बेटी नहीं, अपनी ख़ुशी चाहे जहाँ चले गए, जहाँ चाहे बैठे, किसी की लौंडी बाँदी, और ज़ेवर असबाब जो हमारे पास है मुन्ने साहब का दिया हुआ है। और हुज़ूर बख़्शू झूठ कहते हैं, हम इक्के पर नहीं आए, नन्हें मिर्ज़ा ने यही कहा था, इक्का न आएगा, डोली अगर कहो आए।"

"वेल तो तुम नन्हें मिर्ज़ा के साथ भागा ?"

"जी हुज़ूर आप समझे नहीं, मैं दरवाज़े पर किसी की ताक में थी, कोई आता जाता उधर से निकले सवारी मंगाऊँ। यह उधर से निकले, मैंने हाथ जोड़ के कहा हमारा एक काम नहीं कर देते, तुम्हारी बड़ी मेहरबानी होगी, या अल्लाह, आदमी के काम आदमी आता है। इन्होंने कहा जो कहो हम हाज़िर हैं, मैंने कहा, ऐ ख़ुदा तुम्हें जीता रक्खे, भैया मुझे एक डोली ला दो, जो कहार माँगेंगे इस वक़्त दूँगी। ऐ लो वह झपाक से जाके डोली साथ ही लाये, मैंने अन्दर से दुलाई दी, जो मेरा असबाब था लाके रखवाया और निकल खड़ी हुई।"

"वेल ! कहाँ निकल गयी ?"

"हुज़ूर जहाँ ख़ुदा ले जाये, किसी की लौंडी बाँदी तो थी नहीं ? फिर साहब एक के यहाँ उतरी, मकान ख़ुद ही किराया को लिया। और रहने लगी। और हुज़ूर यह बख़्शू बड़ा चोर है, इसने चार चोरों को

सरकार में जहाँ यह था बुला लाया, जहाँ तक मिला असबाब ढो डाला। सच पूछो तो घर भर में सुथराई दे दी, ऐसी दुनिया में भंगिन भी नहीं देती। और सुनती हूँ चोरों से अब भी साँठ-गाँठ है। बल्किन उन्हीं के रुपया से टाल लगाई है। और सरकार में कानों कान ख़बर नहीं। मैं तो इसको जानती हूँ, बड़ा बेईमान, पल्ले सिरेका दग़ाबाज़, मुवा झप-झालिया, फ़रेबिया, जालिया, रुपया में बारह आना खा जाता है। हमेशा इसकी यही हालत है, हमसे भी यही कहता था कोई चीज़ उड़ा दो, मुझे लाके बाहर दे दो। मैंने कानों पर हाथ रक्खे, ख़ुदा उस दिन के लिये मुझे उठा ले, जहाँ आदमी रहे ऐसा काम न करे। वाह तुमने कोई चोर छिनार बनाया, हाँ एक दिन इतना कहा, क्या कहूँ तुम्हारे साथ निकाह कर लेता; मैंने एक दोहत्थड़ मारा, खी-खी-खी हँसने लगा, मुवा बे ग़ैरत। मैंने कहा यह क्या हँसते हो, अपने जनमों को रोते हो। मुवा बे ग़ैरत, मैंने कहा जाके अपना मुँह बनवाओ, ठीकरे में भूत की सूरत तो देखो अपनी, चूनी भी कहे मुझे घी से खाओ। ख़ुदा की शान देखो, ख़बरदार! ऐसी बात हमारे सामने न कहना नहीं तो प्याज़ के छिलके से उधेड़ कर रख दूँगी। जो अभी कह दूँ सर पर चौताला बजने लगे, घर की राह भूल जाओ, अभी किसी से पाला नहीं पड़ा, दही के धोखे कपास न खा जाना। वाह हमको यह बातें अच्छी नहीं लगती। हुज़ूर, फिर इसने क्या किया, हमारे कमरे में चोरी करा दी, वह तो कहिये मैं चौंक उठी, बी जानो, आप जानिये अफ़ीमी आदमी, दिन भर ऊँघा करती, रात भर जागती है, जब देखो खुर-खुर कर रही है, उसने आहट पाई, कफ़न फाड़ के बोली, ऐ तू कौन? यह सब चोर सर पर पाँव रख कर भागे, भदर-भदर, बल्किन उसका जूता भी एक छूट गया, मैंने फेंक दिया। घर में देखा सब ले गये, नन्हें मिर्ज़ा उस दिन न थे; नहीं तो एक-एक को चिमट जाते, कचूमर निकाल दिया होता, चोरी का मज़ा।"

"क्या-क्या गया?"

"हुज़ूर, क्या बताऊँ लुट गई, पोत का छल्ला तक तो बाक़ी रहा

नहीं, लोटा कटोरा, ऐ देखिये साहब मेहरबान, पानी पीने को मुए आठ बजे तक तरसती रही और पेशाब का यह हाल। कहता था, अब लग के कभी निकलूँगा ही नहीं, पेट फटा जाता था, तब तो मैंने कहा, बला से नजिस कपड़े होंगे, फिर पाक कर डालूँगी। सर से पाँव तक अल्लाह का दिया सब ही कुछ था, अपनी हैसियत से सब चीज़ें बन गई थीं। ऐ देखिये साहब मेहरबान, नाक की नथ एक ने बनवा दी थी, लालचन्द जौहरी ने जोड़ी ला दी थी। घर भर का ऐसा मुकेला चोरों ने सरीहन मुँह दर मुँह उतार ली, कानों के बाले पत्ते बड़े मज़े से लिये। मुझे निगोड़ी पर पतझड़ आ गया, उस दिन से सूख के हड्डी चमड़ा रह गया। कंगन मुओं ने हथियाये, चूहे दत्या मूस ले गये, जौशन खींच लिये, अन्तियाँ उतरा ली। मेरे हाथ पाँव में जैसे सिकत ही न रहा, और यह मुआ बख़्शू जो अब बड़ा साहूकार बन के कहता है निकाह हुआ है गर्रे डब्बे दिखा के कहता था कमरबन्द से कुन्जियाँ खोल दो, जो अपनी जान बचाना हो! मैंने कहा मुए, मैंने पहचान लिया, रह तो सही, तेरी टुन्डियाँ कसवाऊँगी, पड़े पड़े जेलख़ाना में न कीड़े पड़ जाएँ तब की सनद।"

"वेल! रपट थाना में किया?"

"जी हुज़ूर कौन करता? घर में कोई मर्द ज़ात था नहीं।"

"वेल तुम्हारा घर का आदमी कहाँ है?"

"जी हुज़ूर! कोई नहीं।"

"वेल तो तुम रन्डी है रन्डी?"

"जो हुज़ूर समझें।"

वेल! अच्छा! तो तुमको फिर अदालत बोलायेगा, "तुमको आना होगा।"

"जी हुज़ूर, सर आँखों से जब आप याद कीजिये आधी रात को याद कीजिये हाज़िर है, अदालत का हुक्म टल सकता है?"

११

शेख़ साहब ने नवाब साहब से रूखे शब्दों में कहा—"हुज़ूर ! आपका हुक्म पहुँचा मैंने कहा काम करना चाहिये, गोकि मैं उस वक़्त दर्द सर और तप में चूर था। लाला साहब के यहाँ अभी नई नौकरी लगी है, उन्होंने कहा बरसों के काग़ज़ पड़े हैं ठीक करो। क्या अर्ज़ करूँ, सिर्फ़ इस ख़्याल से कर लिया कि एक तो इस सरकार की बदौलत लाला साहब से बरसों से हर तरह की मुलाक़ात है। क़सम ख़ुदा की अगर दूसरी जगह जाऊँ और सौ रुपया तनख़्वाह हो तो गवारा नहीं, फिर इस बात को सोचता हूँ कि इसी सरकार के मामलात लाला साहब के साथ हैं और बहुत से मेरे अपने हाथों के तमाम काम जैसे हिसाब किताब, ज़ायदाद वग़ैरा कचहरी के काग़ज़ात, जो इस ग़ुलाम के समझे हैं कोई दूसरा उनका जानकार नहीं हो सकता। गोकि काग़ज़ में सब मौजूद है, मगर एक काग़ज़ों से देखा हुआ हाल और दूसरा अपने हाथ के किये हुए मामले में बड़ा फ़र्क़ है। नहीं तो हुज़ूर के इक़बाल से बाहर यार दोस्तों के ख़त आते रहते हैं, हुज़ूर की मर्ज़ी भी यही थी। किसी बात का छिपाना पुरानी नमक ख़्वारी के ख़िलाफ़ है। रूबकारी के दिन फ़िदवी हाज़िर था। करीम बख़्श और मुसम्मात के इज़हार सब सुने, कचहरी के कर्मचारी कहते थे तुमको इससे क्या वास्ता ? यहाँ से चले जाना मुनासिब है। मगर मैंने कहा, काम अपना निकाल लेना चाहिये, कचहरी के कुत्ते तो आप जानते हैं, कुछ उनको जब दे दिला के राज़ी किया तो उन्होंने ठहरने दिया। करीम बख़्श के बयान से मालूम हुआ वह भी इस चोरी में शामिल था। अच्छा हुआ निकाल दिया गया, बड़ी नमक हरामी की बात है। मैं समझता हूँ अब आमिल साहब के पास जाने आने की ज़रूरत नहीं, अगरचे उन्होंने सब पते ठीक दिये और कहा था किसी वक़्त तुम आओ। मैं जफ़र के ज़ोर से उसका

नाम भी निकाल दूँ, तो अब मालूम हो गया, ख़ुद उसकी जोरू ने बयान दिया।"

"यहाँ तक नौबत पहुँची?" नवाब साहब ने पूछा।

"जी हुज़ूर नौबत क्या मानी! ख़ुद ही उसने नालिश की और ख़ुद ही उसके यहाँ चोरी की।"

"नहीं मालूम आप क्या कहते हैं मेरी समझ में नहीं आता।"

"हुज़ूर इस मुक़दमे में एक रन्डी पेशेवर मुद्दआ अलैहा है। कहती है मैं खुले आम पेशा करती हूँ, हुज़ूर क्या कहूँ? यह मुन्ने साहब हैं नहीं, इससे कुछ वास्ता बताती है। उसका बयान है मैं भी इनके यहाँ रहती थी, बेगम साहब ने उसको निकाल दिया। करीम बख़्श बीच का आदमी था, नाम भला सा बताती है और सारा हुलिया कहती है। ख़ुदा जाने उसका दीन ईमान, आजकल सोहबत भी अच्छी नहीं है, ज़माने का यही रंग है।"

"भई मेरे तो हवास गये।"

"अजी हुज़ूर फ़िक्र की क्या बात बल्कि कहिये तो मुक़दमे से चोरी का सुराग़ लगता है। अब सब माल मिल जायेगा। अच्छा हुआ, आमिल साहब को माल देना न पड़ेगा। मगर एक बात है यह सब मुक़दमा समझा हुआ एक बालिस्टर साहब का है, चुनानचे मैंने उन्हीं के ज़रिया से पान सौ के मेहनताना पर सवाल दे दिया। अपने यहाँ के माल पर दावा किया, मगर बात ऐसी आ पड़ी कि ख़ामोशी मुनासिब मालूम हुई।"

"हाँ वल्लाह यह बात तो अच्छी थी।"

"हज़्त बात यह है कि उस दिन की कार्रवाई बिल्कुल मुज़िर थी। पुलिस ने उस मुक़दमे में लिख दिया था। सब माल घर ही में मिल गया। हमको किसी पर शुबहा नहीं, वही रिपोर्ट थानेवालों ने की। अब अगर चोरी के माल का दावा किया जाता है तो उल्टा मुक़दमा

क़ायम होता है। वह तो कहिये कि बालिस्टर साहब ने बड़ी कोशिश की। मगर अदालत ने इस बिना पर हमारा दावा ख़ारिज कर दिया कि कोई सुबूत नहीं और इस ख़ता पर, कि अदालत को बेफ़ायदा तकलीफ़ दी गई एक हज़ार रुपया जुर्माना किया। वह तो कहिये उसी वक़्त ग़ुलाम जेलख़ाना जाता मगर बालिस्टर साहब बड़े शरीफ़ आदमी हैं। उन्होंने अपनी ज़मानत पर छुड़ा के मुझसे कहा, आप तो लम्बे हो जाइये और चार बजते जुर्माना की रक़म दाख़िल कीजिये। मैं यहाँ का हाल जानता था। लाला साहब बे रुक़्क़ा के अब न देंगे, उन्होंने कहा था कोई जायदाद नहीं, बल्कि उस पर दो तीन दफ़ा कोतली दस्तावेज़ें हो गईं अब रत्ती भर कसर नहीं, समझ बूझ के रुपया दिया जायगा। बस घर आया जो कुछ असबाब, ज़ेवर सामान था सब रेहन रख दिया। वल्लाह पानी पीने को कटोरा तक बाक़ी नहीं। जान बची, उस वक़्त मैंने कहा, अपनी पुरानी सरकार में कह आऊँ, वह तो दुनिया ही है।"

"अच्छा भई देखो कुछ फ़िक्र करता हूँ। वल्लाह मैं तो इस मुक़दमे में बहुत ही ज़ेरबार हुआ। अफ़सोस है आप ऐसे कारगुज़ार अहलकार मुझसे अलग हो गये। मिर्ज़ा साहब घर में बीमार पड़े हैं, जो-जो आदमी मेरे आराम के थे, एक-एक करके सब बरतरफ़ हो गये।"

× × ×

नवाब साहब ने बेगम से कहा, "बेगम! एक बात कहना है; इस वक़्त एक बड़ी ज़रूरत हैं, शेख़ साहब आए हैं और किसी तरह कुछ न हो सका। यहाँ कुछ नहीं, महाजन ने भी जवाब दे दिया है। वल्लाह लाला साहब से मुझे उम्मीद न थी। हमारा उनका मामला बरसों से चला आता था रत्ती भर का बल नहीं पड़ा, सूद जो उन्होंने माँगा हमने पाई पाई से मुजरा कर दिया, कहते थे लाख रुपये तक देने को हाज़िर हूँ। चौक की दुकानें तक रेहन हो गईं, क़ब्ज़ा हो गया, घर का असबाब था। ज़रूरत के वक़्त उन्हीं के यहाँ रेहन हुआ। देखो तुम्हारे पास कोई

चीज़ हो इस वक्त निकालो, आगे कहीं बन्दोबस्त कर दिया जायगा। इस वक्त काम तो निकले।"

"तो अब इतना भी नहीं जो इस वक्त अड़ी ज़रूरत पर काम आए। मेरे पास कुछ भी नहीं, नहीं कौन बड़ी बात थी। एक एक करके जब ज़रूरत पड़ी गिरवी से काम निकाला, उस दिन एक ज़रूरत से मैंने देखा ज़ेवर का सन्दूक ग़ायब! मैंने कहा कहीं असबाब में दब गया होगा किसी वक्त तलाश करूँगी। तब से हाथों के तोते उड़े हुए हैं, इसी बात पर मुग़लानी से हुज्जत हुई। बर तरफ़ किया और जो ज़ेवर असबाब थे, जोड़े थे, अलग थे, टपके थे सब चोरों के कट्टे लगा, जो बचा खुचा था उसी दिन से ग़ायब है जिस दिन से नजिबनिया गई, अब जो पूछती हूँ सब उसी का नाम लेते है"

नवाब साहब ग़ुस्से में बोले—"आपको मालूम भी है, वह कमरा लेकर आपके सपूत की बदौलत रन्डी हो गई, कमाती है, उसी से तो सब मालूम हुआ।"

"लो बस, सब कुछ कही, मुन्ने साहब का सब्र न समेटो, अभी कल का बच्चा, मुँह से दूध की बू तक गई नहीं।"

"अजी बच्चा है, दरजनों बच्चे जना कर रख देगा, वह अवारा हो गया है। उसके सोहबत में तमाम दुनिया के छुटे हुए भरे रहते हैं।"

"तुम्हीं ने खराब किया। मैं तो घर की बैठने वाली, मैं इन बातों को क्या जानूँ! ऊई, यह भी उस पर तूफ़ान।"

"बस क्यों बकती हो वाहियात। मेरे सामने तुम्हारी नालायक़ी ने लाख घर ख़ाक किया, मुझे भी भीख माँगने के लायक़ कर दिया। मैं तो वल्लाह बाज़ वक्त चाहता हूँ किसी तरफ़ मुँह काला करूँ।"

"यह हमने किया या तुमने, लो साहब अपनी बला हमारे सर। अच्छा मैंने घर ख़ाक कर दिया तो कोई सुघड़ लाये होते, यहाँ तो जान मिट्टी में मिला दी। और कुछ भावे नहीं, यह अपने तुम जानो तुम्हारा

काम जाने, क्या ख़र्च करती हूँ। साहब दावतें हैं, जल्से हैं, यह कौन करता है, मुझे क्या दो फुलके खाने वाली।"

"अच्छा फिर दो ही पैसे में बसर करो। यह झगड़ा आये दिन का उठ नहीं सकता, अब संभल के चलो, अब भी कुछ नहीं गया। तुम्हारी समझ में कोई बात आती नहीं।"

"ख़ूब समझते हैं। अब क्या ऐसे अहमक़ ठहरे, तुम्हारी चितवन आज बहुत दिन से बदली हुई है, हँसी दिल्लगी की बात ही नहीं करते। मियाँ को जो मन्ज़ूर हो साफ़-साफ़ कहो।"

"अच्छा तो इस तरह तो मेरे साथ बसर हो नहीं सकती। आप जाइये अपने मैके, तुमको बड़ा गुरूर है अपने छब्बीस रुपये के वसीक़े पर बस!"

"क्या तुम्हारा दिया हुआ है, जो आज छब्बीस रुपये होते, घर में फ़ाक़ा था, हिसाब तो करो, आज कै महीने हुए हैं तुमने कौड़ी दी है, न मालूम कर्ज़ दाम से क्योंकर बसर करती हूँ। जनाबे अमीर की क़सम, बाल-बाल क़रज़े से बँधी हुई हूँ। बाज़ार में आदमी का निकलना दुश्वार है। और उल्टे आये हैं हमसे माँगने, आज अगर हज़ार होता तो मैं बाज़ार ही का देती।"

"हाँ तो यह कहिये यह और धौंस है, अपने बाज़ार का कर्ज़ा भी कर रक्खा।"

"लो साहब, ज़िन्दा जान उसका ख़र्च ही नहीं। साढ़े चार सौ तो बजाज़ के हो गये, आज दो महीने से पलंग की चादरें नहीं हैं। बज़ाज मारकीन नहीं देता। डेढ़ सौ रुपया बनिये का हो गया। पचहत्तर घी वाले का, पचास गोश्त वाले के। चावल ज़ाफ़रान वग़ैरा फरकत के लाला जगमोहन मारवाड़ी के कोई पौने दो सौ का हिसाब हो गया। किसको किसको कहूँ, कुबड़िन के फलियों, आमों, ख़रबूज़ों के दाम कोई तीन बीसी बताती है। ले कुछ नहीं तो हज़ार रुपया तो चटर पटर अदा हो।"

"ख़ुदा की पनाह, तुमने मुझको बिल्कुल डुबोया। मँगवाओ डोली सवार हो जाओ अभी, सूरत से नफ़रत हो गई है।"

"और यहाँ किसको नहीं है, जब देखो घर में रोनी सूरत बनाये आते हैं, साहब इनको हज़ार रुपया दे दो, नहीं समझते हैं। ख़ुद कौड़ी-कौड़ी को हैरान।"

"बस-बस ज़्यादा न बोलिये अपने किये की ख़ूब सज़ा पाई, मगर तुम भी ऐसी सज़ा पाओगी याद करोगी, आप जाइये इसी वक्त जाइये दोनों लड़के छोड़ जाइये।"

"तुम दोनों लड़कों के लेने वाले कौन ?"

"अरे ! हम कोई हैं ही नहीं ?"

"अच्छा साहब तुम जानो तुम्हारी औलाद !"

"मैं तो समझा था किसकी बकरी कौन घास डाले, अगर तुम नहीं मानती हो न सही।"

"मेरे और मेरे बच्चों के वास्ते ख़ुदा का दिया हुआ सब कुछ है। वह तो कहो मेरे घर का वसीक़ा था, अगर आज न होता, तो तुम्हारी बदौलत फ़ाक़ों की नौबत आती। आज दिल टुकड़े-टुकड़े हो गया, जहाँ ज़बान से इतनी बात निकली सर से ऊँचा पानी हो गया, नहीं मालूम ख़ुदा को क्या मन्ज़ूर है, ख़ैर ? हम तो जाते हैं, मगर यह समझ लो मैंने तुम्हारे घर को अपना घर हमेशा समझा। अपने हिसाबों नवाबी थी तो यह थी, बादशाही थी तो यह थी, यह तो ख़ुशी का सौदा था, हाँ अगर ख़्याल है तो तुम्हारे आराम का, यूँ तो ख़ुदा रोज़ी देनेवाला है, उसने रोटी देने का वादा किया है, ख़ुदा जाने तुम्हारी समझ में क्या आया ?"

"बस ज़्यादा न बको, बेहतर है अपना धन्धा चलता करो, कुछ आप मेरी ख़ुदाई नहीं, रानी रूठेंगी अपना राज लेंगी, किसी का सुहाग न लेंगी।"

बेगम फूट-फूट कर रोने लगीं--"देखो फिर मैं कहती हूँ, तुम्हारे दिल में क्या समाई है, मैं तो ख़ैर जो हुक्म दो मौजूद हूँ, मगर दिल दुखाना किस मज़हब में लिखा है ?"

"दिल दुखाना क्या मानी ? बदमाश की हरकत से बचने का ख़ुदा भी हुक्म देता है, तुम मेरी दुश्मन और जानी दुश्मन, अब चली हो बातें बनाने ? ना साहब अब मैं तुम्हारी सूरत न देखूँगा, मैं इन्सानियत से सब बातें तुम्हारी सहता जाता था। जानता था आज नहीं, कल संभलोगी, वह तो और बिगड़ती ही चली जाती हो ग़ज़ब ख़ुदा का रुपया पैसा सब ख़ाक़ में मिला दिया, जायदाद जो थी ख़ाक में मिला दी बाल-बाल क़र्ज़दार हो गया, किसी को मुँह दिखाने के लायक़ नहीं जायदाद जो थी महाजन के घर पहुँची।"

"यह न कहो, ख़ुदा न करे हमारी दुश्मन मुद्दई घड़ी भर का बुरा चेतने वाले अभी चौक की दूकानें हैं, हिसाब करो, पन्द्रह रुपये महीने की आमदनी है फिर यह मकान है, भला कुछ न होगा तो दस हज़ार का होगा।"

"कौन कहता है, वह दूकानें कमबख़्त गिरों हो गईं। सूद पर बाहर करा दिया लाला ने। उन्हीं का क़ब्ज़ा है, मकान पर भी सारे क़र्ज़े का बोझ है।"

"यह तो तुम जानो, आख़िर इसमें मेरी क्या ख़ता, मैंने तो यह भी नहीं रक्खा, आज वक्त पर यह बात भी खुली।"

"अच्छा इस बेकार बकवास से क्या, अब कोई तदबीर नहीं, तुम हँसी ख़ुशी अपने मैके जाओ, ग़ज़ब ख़ुदा का यह मेरे साथ हद की दुश्मनी है तुमने वल्लाह भीख मँगवा दी भीख, जिस वक्त ख़याल आता है आँखों में लहू उतर आता है, और साहब सौ बात की एक बात यह है, हमारी तुम्हारी एक राय नहीं, जो काम चाहिये इस तरह नहीं हो सकता, बस मैंने अहद कर लिया अब इस घर में तुम्हारा रहना मुनासिब नहीं।"

"मैं हट नहीं करती पर जो काम आदमी करे सोच समझ के करे, जिस दिन से तुम्हारे घर में आई तुमने मैके नहीं जाने दिया, अब एकाएकी जाने का कौन तरीक़ा है और फिर नंगी लुच्ची, क्या भरी पुरी जाती हूँ। लोग देखेंगे, दुश्मन ख़ुश होंगे आओ भगत करेंगे, तुम्हारी क्या नेकनामी होगी और मेरी कौन सी ज़िल्लत बाक़ी रहेगी?"

"तो क्या मैंने ले लिया, घर में बैठ के सब तुमने लुटा दिया।"

"अच्छा जो हुआ तुम्हारे ही घर में हुआ, अभी मैं कहती हूँ बरसों खाती न चुकता, क्या मैं ग़रीब मुफ़लिस माँ बाप के यहाँ से आई थी। सब ही कुछ दाम दहेज़ था।"

"अच्छा अब इन बेकार बातों से क्या मतलब, बस अब मुनासिब तो यह है सवार हो जाओ।"

"कहती तो हूँ, यह कौन क़रीना है, मान न मान मैं तेरा मेहमान।"

"अच्छा वहाँ जाके क्या कहूँगी, एकाएकी जो उतर पड़ूँगी और यह सब झगड़ेंगे तो लोग क्या कहेंगे?"

"यह अपने तुम जानो वह जाने, हमारी बला जाने।"

"या अल्लाह यह कैसी समझ हो गई, न उल्टी मानते हैं न सीधी—तुम न पानी के नीचे हो न ऊपर, यह आज क्या समाई है?"

"जो समाई है हम ख़ूब जानते हैं। बस अब तुम जिस तरह बने-जाओ और इस वक़्त जाओ, जब तक तुम न जाओगी। वल्लाह दाहिने हाथ का खाना हराम है, बस अब जो ठन गई ठन गई। मैंने अहद कर लिया है, कोई काम तुम्हारी राय से नहीं करूँगा। अगर ख़ुदा भी आज आके मुझसे कहे तो मानने वाले को कुछ कहता हूँ।"

"ले बस-बस, ख़ुदा खुदा करो, हद हो गई। कुफ़्र की बात ज़बान से न निकालो, हम तो जाते हैं। इतना कहे जाते हैं, यह आदमी के हवास की बातें नहीं, ख़ुदा को न मालूम क्या मन्ज़ूर है। आज तक तो ऐसी बातों का सामना होता तो इतनी उम्र काहे को कटती।"

"ले अब डोली मँगाता हूँ, चलती फिरती नज़र आइये।"

"तो क्या सचमुच जायें, फिर हम कहाँ रहेंगे।" सकीना ने पूछा।

"तुम अपनी माँ के साथ रहना और कहाँ रहोगी।" नवाब साहब बोले।

"अच्छा तो आप कहाँ रहेंगे?"

"हम भी आ जायेंगे किसी दिन।"

"सकीना माँ को देख के और इशारा पा के कुछ कहने को थी मगर 'अच्छा' कह के चुप हो गई। नवाब साहब बाहर निकल आये-- हाँ शेख़ साहब! नवाब साहब बोले--"मुझे ख़याल नही रहा, मैं घर में ऐसी बकवास में फँस गया था, अच्छा इस वक्त तो आप जाइये, कुछ फ़िक्र कर दी जायेगी।"

"बहुत अच्छा मैं घर जाता हूँ, जब ज़रूरत हो किसी से इत्तला दे दीजियेगा, आजकल तबीयत ठीक नहीं है। ज़्यादा बैठ नहीं सकता, मेरा हर्ज़ होता है।"

"यह झगड़ा ख़त्म ही समझिये, अगर मन्ज़ूर है कुछ कार्रवाई कर दी जायेगी वरना मजबूरी है, ले रुख़सत।"

× × ×

सआदत ने कोर्ट इन्सपेक्टर को सम्बोधित किया—"यह लीजिये।" उसने रिपोर्ट बढ़ाई, "छानबीन के बाद मैंने यही रिपोर्ट तैयार की है इसमें बहुत सी कार्रवाइयाँ मुझे करनी पड़ी। एक साहब भी इसमें शामिल मालूम होते हैं, बहुत कुछ उनकी निस्बत सुना गया है, और अजब पेचीदा मामला है, बल्कि एक आध दफ़ा रास्ता गली उनसे साहब सलामत भी हुई है, पहचानता भी हूँ।"

"अच्छा मुझे दीजिये देखूँ, ज़रूरत के वक्त शायद पढ़ना हो, मामला भी समझ लूँ।"

इन्स्पेक्टर ने पढ़ना शुरू किया--"जनाबे आली ! गुज़ारिश यह है आपके हुक्म के मुताबिक़ ताबेदार ने छान बीन इस मुक़दमा दायर किया हुआ है करीम बख़्श का जो मुहल्ला........दुकान न०........में लकड़ी की टाल रखता है, छानबीन करने से मालूम हुआ है कि अभी थोड़े दिन हुए दुकान उसने रक्खी है, जब से नवाब साहब के यहाँ चोरी हुई यह चोरों से साँठ गाँठ रखता था। अफ़वाह है उसी रूपये से इसने यह दुकान रक्खी है और मुसम्मात नज़िबनिया नवाब साहब के यहाँ बतौर मामा के रोटी कपड़े पर ख़ुराक पोशाक पर कमसिनी से थी। घर में अख़्तियार बहुत था, मालूम होता है उस मुसम्मात और नवाब साहब के बेटे मुन्ने मिर्ज़ा साहब का नाजायज़ ताल्लुक़ था। बेगम साहब इसी वजह से उस मुसम्मात के साथ बुरा बरताव करती थीं। मुन्ने साहब ने उसको भगा के दूसरे मकान में रक्खा और काम में बीच वाला करीम बख़्श था, यह भी उनका नौकर था। उसके बाद मुस्म्मात, मुहल्ला........ मकान न०........में जाके ठहरी, और नाम नज्मुन्निसा बदल लिया नन्हें मिर्ज़ा ज़रदोज़ी के क़ारख़ाने में काम करनेवाला एक कारीगर था, जो छान बीन से इतना मालूम हुआ है कि उस कारख़ाने के मालिक सरदार मिर्ज़ा ने उसको पाला, और पढ़ाया था। बड़ी खोज के बाद यह पता चला कि उसकी माँ एक मुख़्तार के यहाँ काम करती है, मुस्म्मात से उसका ताल्लुक़ हो गया और लेके निकल आया, सरदार मिर्ज़ा साहब ने बदनियत की रिपोर्ट थाने में भी की, वहाँ से हिदायत नालिश की गई। उसके बाद मुसम्मात पेशा रन्डी करने लगी, और उसके यहाँ मिस्टर... बालिस्टर भी आना जाना रखते थे। बल्कि मशहूर था पचास रूपया माहवार पर नौकर रक्खा था। मुन्ने साहब भी उसके यहाँ आते जाते थे, उस पर नाराज़ होके बालिस्टर साहब ने सलाह नालिश की। लकड़ी फ़रोश करीम बख़्श को दी, उसने दुश्मनी की वजह से यह मुकदमा दायर किया-मुसम्मी करीम बख़्श की एक बीबी पहले की और दो औलादे हैं। और मुसम्मात नजमुन्निसा से निकाह नहीं हुआ, मुसम्मात करीम बख़्श चोरी के मुक़दमा में और भी हिस्सेदार बताता है। वह आजकल शहर में नहीं

हैं, शायद वह देहात के हैं, जुर्म करने के लिए छिप कर शहर आते होंगे। नजिवनिया को भी वहुत सा चोरी का माल मिला था, उस के यहाँ जो मौजूद है और जिसको वह अपना ख़रीदा हुआ कहती है उसमें से ज़्यादातर नवाब के यहाँ का है और करीम वख़्श ने जो दुकान रखी है वह पहले कोई रुपये वाला न था वल्कि शुबहे पर मशहूर तो है कि नवाव साहब ने उसको बरतरफ़ कर दिया है।"

रिपोर्ट पढ़ लेने के बाद इन्सपेक्टर बोला—"तो मेरी राय यह है कि आप ख़ुद चल के साहब को समझा दें, यह आपको अपने हाथ से देना चाहिये, मैं इस वक्त बगंले पर जाता हूँ, बेहतर है आप भी चलिये।"

साहब से मिलकर सआदत ने कहा—"हुज़ूर जो मुक़दमा सुपुर्द हुआ था उसकी छान बीन करके रिपोर्ट हाज़िर हैं।"

"वेल ! अच्छा पढ़े।" मजिस्ट्रेट बोला।

"हुज़ूर इसमें एक बात की और खोज करनी है। अभी तक उन लोगों का पता नहीं लगा, जो नवाब साहब की चोरी में शरीक हुए थे, शायद वह लोग बाहर होंगे, अल्लाह ने चाहा तो ज़रूरत पड़ने पर हुज़ूर के इक़वाल से उनकी भी तलाश की जावेगी।"

"वेल ! अच्छा, करीम के मुक़दमे में मुन्ने साहब, नन्हें मिर्ज़ा, मुसम्मात करीम को फिर अदालत तलब करती है।"

"बहुत ख़ूब।"

× × ×

बेगम रोती हुई मैके में उतरी, माँ ने देखते ही पूछा—"ख़ैर तो है बेटी ? आज यूँ बे सामान कैसे आना हुआ, शान न गुमान, सब अच्छे तो हैं ?"

बेगम रो के बोली—"हाँ खैरियत है, अभी बताती हूँ। तावेदार को क्या बहाना, कहीं और ठिकाना नहीं है, इसीलिये चली आई इसी घर

में इतनी से इतनी बड़ी हुई, आप लोगों ने तो जो हक़ था अदा किया, क़िस्मत की बात है, यही लिखा था।"

"चलो अच्छा हुआ, मगर कुछ हाल तो मालूम हो, कौन बात हुई-अफ़सरद्दौला इस मिज़ाज का था नहीं, कोई बात ऐसी ही होगी। देखो, उनकी राय हुई तो मैं बुलवाती हूँ, वाह यह भी कोई तरीक़ा है। हाँ बेटी जिस कमरे में तुम्हारा जी चाहे अपना असबाब रखवाओ, देखो बहुत से कमरे सेहनचियाँ ख़ाली पड़ी हैं, जो बहुत दिन ठहरने का सामान हो तो वैसा बन्दोबस्त करो, और जो दो ही एक दिन की बात हो ख़ैर, देखो शहर से असबाब ले जाने की पुकार मची है! ऐ बेटी क्या घर का सब असबाब उठा लाई हो? हाँ क्या हुआ? सकीना और मुन्ने साहब भी आते होंगे।"

"जी हाँ वह भी सब आते हैं, और सकीना तो मेरे साथ आई है।"

"तो मुन्ने साहब के लिये भी मर्दाना में जगह ख़ाली कर दी जाये?"

× × ×

शाम को भिशतिन ने आकर यह सन्देशा पहुँचाया--"अफ़सरद्दौला ने बहुत-बहुत बन्दगी अर्ज़ की है और कहा है कि मैं ख़ुद ज़बानी आकर कहूँगा, अभी मोहलत नहीं है नहीं मैं बेगम को ख़ुद बग्घी पर सवार करके पहुँचा जाता, अभी आप थोड़े दिन इनको अपने साथ इजाज़त देंगी? यह आपके यहाँ रहें। इसके बाद दूसरा बन्दोबस्त हो जायेगा, उनका यह भी घर है वह भी घर है और किसी बात का बोझ उठाना न पड़ेगा, आगे तो आप अपनी बेटी के साथ करेंगी मैं रोकता नहीं, कुछ ऐसी ही बात है जो मैंने आपको तकलीफ़ दी है। कभी-कभी हो सकेगा तो खुद भी आकर देख जाया करूँगा, आजकल कचेहरी के काम हैं, परेशान हूँ।"

× × ×

हाकिम ने अपना फ़ैसला सुनाया--"इस मुक़दमे में करीम बख़्श मुद्दई और नन्हें मिर्ज़ा मुद्दआ अलैक हैं। सुबूत मुद्दई के इस बयान का नहीं है कि नजीबन मुद्दई की ब्याहता है बल्कि बयानात से ज़ाहिर होता है कि वह दाश्ता किसी और शख़्स मुन्ने साहब की थी, लिहाज़ा दावा ख़ारिज। इस मुक़दमे में एक चोरी का पता चलता है जो नवाब साहब के मकान में हुई थी और जिसकी रिपोर्ट भी की गई थी। इसी छानबीन के लिये पुलिस से दरख़्वास्त की गई कि खोई चीज़ों का पता लग गया है, किसी पर शुबहा नहीं। अदालत को मुनासिब मालूम होता है कि नजीबन और मुन्ने साहब, नन्हें मिर्ज़ा को बतौर गवाह अदालत में तलब करे और मुसम्मी करीम बख़्श मुद्दई इसी वक्त से हवालात में हो। मुसम्मात नजीबन और नन्हें मिर्ज़ा को हुक्म दिया जावे कि तारीख़ पेशी को अदालत में हाज़िर रहें और मुन्ने साहब के नाम सम्मन भेजा जावे कि तारीख़ पेशी पर हाज़िर हों। अगली तारीख़ पर मुक़दमा दर पेश हो।"

× × ×

"अच्छा सलूक किया तुमने! फाँसी पर क्यों न चढ़ा दिया।" करीम बख़्श ने नजिबनिया से कहा।

"झगड़ा तो बेढ़ब पड़ गया।" नन्हें मिर्ज़ा बोले।

"क्या अपनी जान फंसवाती?" नजिबनिया बोली—"इनकी सज़ा यही है। हम तो जो सच्ची-सच्ची बात है यहाँ से लेकर ख़ुदा के यहाँ तक कह देंगे।"

"अरी नेकबख़्त ख़ुदा-ख़ुदा कर।" बख़्शू ने कहा--"क्यों जूतियों समेत आँखों में बैठी जाती हो। ख़ुदा जाने किसके भरोसे पर इस तरह तुम बातचीत करती हो, तो इसका सही मज़ा कोई दिन चक्खो।"

बालिस्टर साहब जो चुप खड़े हुए थे यकायक बोले, "कोई बात नहीं मियाँ करीम, डरो नहीं, हम भी इसकी अपील करता है।"

"हुज़ूर ऊपर ख़ुदा है नीचे आप ।।आप ही के संभाले यह नाव संभलेगी ।" बख़्शू रोकर बोला ।

"हाँ अब रोते हो, तब न सूझी ।" नजिबनिया बोली ।

"अजी नहीं मालूम किस लिये साहब ने बुलाया है । ख़ैर दूध का दूध पानी का पानी हुआ ।" नन्हें मिर्ज़ा बोले ।

"हाँ भाई अब क्यों न कहोगे ।" बख़्शू बोला—"जिसके मुँह में चावल होते हैं ऐसे ही चबा-चबाकर बातें करता है । ख़ैर कुछ डर नहीं । ख़ुदा न बिगड़े मुक़दमा बिगड़े तो बिगड़े ।"

"ले जाओ अब !" कान्सटेबिल तेज़ स्वर में बोला, "चलो, अपनी-अपनी तरफ़ । आवाज़ जायेगी—सब अभी जेलख़ाने में बन्द कर दिये जाओगे ।"

× × ×

"अज़ी शेख़ साहब ! मुझे अब क्या करना चाहिये, ?" मुन्ने साहब ने पूछा ।

शेख़ रुखाई से बोले—"हज़त असल में यह बात है कि मुझे कुछ मालूम नहीं । मैं तो अब दूसरी जगह नौकर हो गया हूँ । आपकी सरकार से ताल्लुक़ नहीं । वैसे जो अदालत कहे वह कीजिये । वकील वग़ैरा का काम होता तो मैं अभी चलता ।"

"भला ऐसा कौन वकील है जो बिला कुछ लिये दिये सलाह दे ।" मुन्ने साहब धीरे से बोले ।

"तो चुप हो रहिये, आप बतौर गवाह तलब किये गये हैं ।"

"पुलिस का सिपाही मुझे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पहुँचा, और सम्मन दिया । मैं कचेहरी के कामों को अस्लन जानता बूझता नहीं । फिर सुनता हूँ फ़ौजदारी में क़ैद होती है, बेंत पड़ते हैं ।" यह कहते-कहते मुन्ने साहब की आँखों में आँसू आ गये ।

"तारीख़ तो आने दीजिये। मैं हर वक़्त हाज़िर हूँ। अल्लाह ने चाहा तो कोई तकलीफ़ न होगी।"

"हाँ शेख़ साहब, ऐसे वक्त में हम लोगों के दुश्मन गली की ठिकरी तक है।"

"अजी आप लोगों की उम्र में ठिकरी सभी की दुश्मन है।" शेख़ हँस दिये।

"वल्लाह ! यह तो आबरू पर बनी है। आपको ज़िला जगत सूझी है।" मुन्ने साहब मुस्करा कर बोले।

"बस जाइये ! घर में जाके मज़े कीजिये, फिर देखा जायेगा।" शेख़ साहब यह कह कर चल दिये।

× × ×

अदालत में इस मुक़दमे की पेशी थी। सब के बयान हो रहे थे। मुन्ने साहब ने मजिस्ट्रेट की ओर देखा और बोले--"हुज़ूर ! मुझे कुछ मालूम नहीं। सुनता हूँ चोरी हुई थी। कुछ चीज़ें मैंने नजिबनिया के पास देखी थीं। मैं कभी-कभी उसके पास रन्डी समझ के जाया करता था। वल्लाह ! जो मुझे ख़बर रही हो कि यह वही है जो मेरे यहाँ से भाग गई थी ! मुझे उससे आशनाई न थी। लाहौल वला क़ूवत ! हमारे घर में लौंडी थी।"

"हुज़ूर ! ख़ुदा की क़सम मैंने नहीं भगाया।" नन्हें मिर्ज़ा ने बोलना शुरू किया--"यह ख़ुद कमरे में बैठीं। मैंने कोई सौ रुपया अपने पास से ख़र्च किया। यह पड़ोस में थीं। दीवार से झाँकती थीं।"

"हुज़ूर !" करीम बख़्श बोला, "मैं बाज़ आया। हुज़ूर मुझको छोड़ दें। नालिश मैंने बारिस्टर साहब के कहने पर की है। शहीदे करबला के लहू की क़सम मै उस चोरी में शरीक नहीं था। हाँ सलाह दी थी। देबी रमज़ान करीम वग़ैरा था। हाँ पाँच सौ रुपया मुझको अपने हिस्से का मिला इससे मुझे इन्कार नहीं।"

नजिबनिया जल्दी से बोली--"हाँ यह सामान मेरा है। मुझे इन्हीं लोगों ने दिया। मैं नहीं जानती किसका है। यह भी उसी सरकार में नौकर थे। इसी मारे तो मुँह बोला भाई बना लिया। नन्हें मिर्ज़ा बेचारे का क्यों सब्र समेटूँ ? मैंने अपनी ख़ुशी से कमरा लिया, फिर बारिस्टर की नौकर हो गई। मुन्ने साहब एक दफ़ा रन्डी समझ कर आये थे। एक दफ़ा बारिस्टर साहब ने मना किया था कि और कोई न आया करे।"

हाकिम ने ग़ौर से सब के बयानात सुने। कुछ देर सोचने के बाद उसने अपना फ़ैसला सुनाया--"करीम और नजीबन अपना जुर्म मानते हैं। लिहाज़ा अदालत उनसे पाँच-पाँच सौ की ज़मानत माँगती है। जो यह दे नहीं दे सकते, बस यह उस वक्त तक हवालात में रहें और एक हफ़्ते के अन्दर ज़मानत न अदा हो, तो एक साल क़ैद बा मशक्क़त।"

× × ×

नन्हें मिर्ज़ा नजिबनिया से जेलख़ाने में मिल कर बोले—"क्या कहें करीम ने तो वह किया है कि दुश्मन से दुश्मन भी न करेगा। अगर आज मुझे फाँसी भी हो गई होती तो इतना दुख न होता।"

नजिबनिया ने ठंडी साँस भरी, "क्या कहें क़िस्मत का लिखा, यह भी कराया इसी बख़्शू ने। मुवा ख़ुदाई फ़ौजदार। ख़ुदा ने चाहा कीड़े पड़ेंगे। आप डूबा दूसरों की भी दुनिया ख़राब की।"

"अजी तुम क्यों परेशान होती हो। यूँ चुटकी बजाते दिन कटते हैं। मगर वल्लाह जिस वक्त आटा पीसने और सन खोलने का ख़याल आता है जिगर पर बरछियाँ पड़ती हैं। कई दफ़ा कुछ खा के सो रहने का जी चाहा।"

"यह तो कहो बख़्शू के कारण यह सब हुआ। वह कमरा फिर हमको मिलेगा ? और हमारा ज़ेवर कहाँ गया ? हाथ गले का तो मुए

दरोग़ा ने छीन लिया। और कुछ सिपाही लोग ले गये। ले अब जाते-जाते इतना रुपया कहाँ से आयेगा?"

"अजी तुम दिल छोटा न करो। पहले लाख रुपये की जान तो बचे।"

"हाय मैंने कौन-कौन से जतन सोचे थे। ख़ुदा ने जो माँगा दिया। वह दरजा दिया कि बड़े-बड़े इज़्ज़तदार क़दमों में नीचे सर टेक देते थे। बालिस्टर साहब आये वहाँ से हम पर हुकूमत करने।"

"मैंने तो जी में कहा था। साहब ऐसा ही है तो घर ले जाये। किसी से क्यों मिलने दो। बनते हैं आबरूदार। अरे इसके लिये बड़ा दिल चाहिये।"

"भला यह तो गड़हिया में मुँह धो डालें यूँ अपना मुँह सोंधा करने को जो चाहें कर लें। दरोग़ा हँस-हँस कर बातें करते हैं। सब को मैंने डाँट दिया। ख़बरदार! अपनी इज़्ज़त अपने हाथ। तुम्हारी यह मज़ाल बुरी आँख डालो। हाँ यह तो बताओ कोई सूरत हो सकती है? फिर किसी हाकिम के यहाँ अर्ज़ी दें।"

"हाँ एक आध दोस्त ने तो मुझे निढाल देख कर सलाह दी है। अजी अपील करके छुड़ाओ। मैं भी कई मशहूर वकीलों के यहाँ अपने वकील के साथ गया। मगर सब ने कहा, चलेगी नहीं। तुम्हारे और बख़्शू के बयान बुरे हुए इसी में फँस गई।"

"फिर मैं व बख़्शू यह न कहती तो क्या कहती। मुन्ने मिर्ज़ा क़सम हज़रत अब्बास की। उसको देख तन बदन में आग लग जाती है। जी चाहा भरी कचहरी में मुँह नोच लूँ, दाँत से नाक काट लूँ। जी खोल के कोसने दिये, और साहब हँस-हँस के पूछे जाते थे। मैं सीधी साधी आदमी। मुझे ख़्याल ही न आया। मेरे हक़ में कांटे बोये जाते हैं। बल्कि एक दिन हाकिम का आदमी आया कहा, साहब तुमसे बड़ा ख़ुश है, हमको हुक्म दिया है किसी दिन बंगले पर लाओ, मैंने सोचा हाकिम मेहरबान हो गया है, तो बख़्शू को काला पानी करा के छोड़ूँगी।"

"वकील कहते हैं जो-जो हमने बताया था मुन्ने मियाँ के बारे में अगर वही बयान होता तो मुक़दमा जीता था।"

"मुझे किसी का सब्र समेटने का जी न चाहा, बात मेरे मुँह से न निकली बार-बार ज़बान तक आती थी मगर कह न सकी जैसे किसी ने मुँह में कील दिया हो।"

"यह तो सारा विष बोया है इसी करीम ने अभी तो बच्चा हवालात में हैं? जाते कहाँ हैं। न मज़ा चखा दिया तो नन्हें मिर्ज़ा नाम नहीं! ऊँट जब पहाड़ के तले आता है उसको मालूम होता है मुझसे भी कोई ऊँचा है।"

"हाँ आख़िर कब तक पत्तों की आड़ में केरी छिपेगी। एक दिन चोर ढोर का मज़ा मिल जायेगा। ख़ुदा की लाठी में आवाज़ नहीं होती। तुम अपने दिल में मैल न लाओ यह भी दुनिया की बात है, जिसको ख़ुदा चढ़ाता है उसी को गिराता है, मुई पांव की च्यूँटी क्या ऊँचे से गिरेगी?"

"अच्छा तो अब बताओ, अबकी जो आएँ, तुम्हारे लिये क्या लायें?"

"नहीं कुछ तकलीफ़ उठाने की ज़रूरत नहीं, यहाँ देने दिलाने के लिये दो एक दुअन्नियाँ चवन्नियाँ लेते आना, तुम समझो, सिपाही उपाही इनाम के लिये मुँह खोले रहते हैं।"

"अच्छा तो यह तीन दुअन्नियाँ मेरे पास थीं।" नन्हें मिर्ज़ा जेब में हाथ डाल कर बोले, "सो एक सिपाही को दे दिया। बाक़ी यह दो है। मैं एक दोस्त से क़र्ज़ लाया था, अच्छा ले अब चपरासी जल्दी करता है, जाते हैं। ख़ुदा के हवाले करते हैं, फिर अल्लाह ने चाहा अगले इतवार को आयेंगे, रुख़सत।" नन्हें मिर्ज़ा यह कह कर आगे बढ़ गये, नजिबनिया एक टक उन्हें जाता हुआ देख रही थी।

शब्दसूची

[निम्नलिखित पंक्तियों में कुछ ऐसे शब्दों के अर्थ और तात्पर्य दिये गये हैं जिनका प्रयोग इस उपन्यास के हिन्दी अनुवाद में आवश्यक था—]

शब्द	अर्थ
ख़िल्क़त	मानव जाति
बुल्बुले हज़ार दास्तान	चहकने वाली बुल्बुल
पुर आशोब	दुख भरा
जायज़	उचित
हज़त	अस्ल शब्द हज़रत है, श्रीमन्, हज़त अधिक प्रयोग के कारण बोलते हैं।
मरासिम	सम्बन्ध
कज़ियों	समस्या
हुम्क़	बेवक़ूफ़ी
यक न शुद दो शुद	एक तो एक उस पर दूसरी भी !
ख़ुदा न ख़्वास्ता	अल्लाह न करे
मिज़ाज शनास	स्वभाव पहचानने वाला
ख़ासा तनाविल फ़रमाकर	खाना खाकर
ख़ाना साज़	घर का बना
क़दम बोसी	पाँव चूमना
मुरख़्ख़स	विदा
नोश करना	चखना

शब्द	अर्थ
हदीस	मुहम्मद साहब की वे शिक्षायें जो क़ुरान शरीफ़ में नही हैं। और, जिनका पालन जीवन के लिये शुभ होता है
ज़ामिन	गवाह, ज़मानत लेने वाला
शबे बरात	मुसलमानों का एक त्योहार, जिसमें घर दीपों से सजाया जाता है।
ख़ुसूस	विशेषतः
आश्ना	जानकार प्रेमी
फिरागत (फ़िरागत)	छुटकारा
बुर्दा फ़रोशी	लड़कियाँ बेंचना
सज्दए शुक्र	कृतज्ञता के लिये भगवान के आगे शीश झुकाना।
हवा ज़दगी	हवा लग जाना, सरदी, ठंड खा जाना।
दौलतख़ाना	शुभ निवास
लाहौल वला क़ूवत इल्ला बिल्लाहो अलीयुल्अज़ीम	किसी चीज़ से घृणा प्रकट करने या क्रोध प्रकट करने के अवसर पर बोलते हैं।
सुबहान अल्लाह	प्रशंसा या व्यंग्य के अवसर पर कहा जाता है।
बरब्बे काबा	काबे के रब की क़सम, काबा (एक तीर्थ) रब (पालनहार) ईश्वर की सौंगध
बजा	ठीक, उचित
मादर ब ख़ता	हरामी

शब्द	अर्थ
ख़िफ़्फ़्क़ानी	घबराया हुआ, जल्द घबरा जाने वाला।
नंगे ख़ान्दान	वंश के लिये अपमानित।
आक़ करना	पुत्र को जायदाद और अपने सम्बन्ध से वंचित कर देना।
पीरो मुर्शिद	श्रीमन् महोदय,
कनीज़	लौंडी, दासी।
ख़ुद सरी	अपनी मनमानी करना।
शिम्र	मुहम्मद साहब के पौत्र इमाम हुसैन को कर्बला के मैदान में मुहर्रम की १० वीं तिथि को शहीद करने वाला। शिम्र मज़ीद की फ़ौज का एक पदाधिकारी था।
कलाम अल्लाह	मुसलमानों का धार्मिक ग्रन्थ—क़ुरआन।
मुख़्तसर	संक्षिप्त
वैन	रोना पीटना
फ़यल्सूफ़ी	दार्शनिक
आफ़ियत	कुशलता
क़ौले मरदाँ जानदारद	मर्दों के प्रण में जान होती है।
ख़ुदा हाफ़िज़	अल्लाह रक्षा करने वाला है।
अशराफ़	शरीफ़ का बहुवचन, किन्तु एक के लिये भी लखनऊ में प्रयोग होता है।
नऊज़ बिल्लाह	ख़ुदा न करे।

शब्द	अर्थ
क़ज़ा	मौत, नमाज़ (पूजा) का समय निकल जाना ।
वज़ू	नमाज़ के लिये कुछ विशेष नियमानुसार हाथ मुँह धोना ।
सलाम फेरना	नमाज़ ख़त्म करना ।
मुस्तफ़ा	मुहम्मद साहब का नाम
फ़स्द	गर्मी, चोंगी लगवाना ।
नातवाँ	दुर्बल
नासेह	समझाने वाला, हर घड़ी शिक्षा-दीक्षा देने वाला ।
नाफ़हम	ना समझ
इश्क़े सनम	प्रिय का प्रेम
रौज़न	खिड़की
क़स्र	महल
यार	प्रिय
रख़ना	दराड़
आहन	लोहा
आशियाँ	घोंसला
मासूक़ (माशूक़)	प्रिय
ख़्वार	नीच, तुच्छ
साया	छाँव, परछाईं
नजिस	अपवित्र
असबाव	सामान
मजलिस	इमाम हुसैन की स्मृति में कथा करना ।
ख़ाकरोबिन	झाड़ू देने वाली ।

शब्द	अर्थ
मुक़र्रर	नियुक्त
माँ	मियाँ, अधिक प्रयोग के कारण लोग माँ बोल जाते हैं।
सक़्क़ा	भिश्ती, पानी भरने वाला।
ख़ासदान	पान रखने के लिये विशेष बर्तन।
फ़हमीदा	समझदार
शातिर	चालाक, चतुर
सुर्ख़रू	सफल
लबे माशूक़	प्रिय के अधर
ख़ुफ़िया	छिपा हुआ, गुप्तचर
फ़िक़रे	कथन
क़ायल	मानने वाला, अपनी बात हटा लेना।
मोतक़िद	श्रद्धा रखने वाला।
आमिल	झाड़ फूँक करने वाला।
वहदहूला शरीक़	वह जिसका कोई साझीदार नहीं, अल्लाह।
इन्शा अल्लाह	अल्लाह ने चाहा तो।
नाक़िस	ख़राब
ज़ेहन	समझ
अह्द	प्रतिज्ञा
मतऊन	जिस पर व्यंग किया जाय।
सख़्त कलामी	कठोर शब्दों का प्रयोग।
वज़ा	ढंग
हमनिवाला हम प्याला	घनिष्ठ

शब्द	अर्थ
नासिर	सहायक
मुशकिल कुशा--जनाबे अमीर--शेरे ख़ुदा	हज़रत अली मुहम्मद साहब के दामाद थे, और बहुत वीर पुरुष हुए हैं; इसी कारण इन्हें शेरे ख़ुदा भी कहते हैं।
रसूल के निवासे--हुसैन--शहीदे कर्बला	इमाम हुसैन हज़रत अली के लड़के और मुहम्मद साहब के निवासे थे, जो कर्बला में १३ सौ वर्ष पूर्व शहीद हुए।
हज़रत अब्बास	इमाम हुसैन के छोटे भाई और उनकी फ़ौज के कमानदार।
शरअ	धर्म के नियम।
इस्तख़ारा	ख़ुदा की राय लेना।
यज़ीद	शाम का बादशाह, जिसने इमाम हुसैन का कर्बला के मैदान में बध कराया था।
मुद्दई	वादी
मुद्दआ अलैह	प्रतिवादी
ज़ेर बार	बोझ तले, बहुत अधिक ख़र्च पड़ जाना।
मुज़िर	हानिकारक।
वसीक़ा	पेन्शन।
दाश्ता	रक्खी हुई रन्डी, बैठाई हुई।
इलाक़ा	सम्बन्ध

का
की
म
ध
ी

इसकी भाषा !

प्रेमचन्द की भाषा हिन्दी और उर्दू का संगम थी ! मुंशी सज्जाद हुसैन की भाषा की भी यही विशेषता है। इसमें आपको आम बोल-चाल का मज़ा, मुहावरों की सुगंध, अवध की मिट्टी की सोंधी-सोंधी महक, गोमती की लहरों की तरल कलकल स्वर लहरी, 'जी हुज़ूरी' का दरबारी अन्दाज़, महलों में बिखरी हुई ज़िन्दगी, बिगड़ते हुए नवाबों का जीवन—इस रंगा-रंगी का वास्तविक चित्रण—सब कुछ मिलेगा !

रूपान्तर की भाषा वही है जो मुंशी सज्जाद हुसैन की क़लम से निकली थी, जिसमें रंगीनी, उपमा, उत्प्रेक्षा और हमारी बोल-चाल की ज़िन्दादिली और मज़ा था।

मूल्य तीन रुपये

ज़िक्रे 'मीर'

(महाकवि 'मीर' की आत्मकथा)

महाकवि 'मीर' से हिन्दी ससार अच्छी तरह परिचित है। उनकी भाषा इतनी सरल और सुबोध है कि हर कोई उनकी कविता का रस ले सकता है। 'मीर' अपने सूफ़ियाना विचारों को बड़ी सरलतापूर्वक ऐसे कह देते हैं जैसे कोई राज़ की बात चुपके से कान में कह रहे हों।

ज़िक्रे 'मीर' महाकवि 'मीर' की आत्मकथा है। 'मीर' की यह आप-बीती हमारा एक महत्वपूर्ण साहित्यिक सरमाया है। कुल तीन चार बरस पहिले यह सरमाया उर्दूवालों के हाथ लगा। अब यह हिन्दी पाठकों के पास पहुँच रहा है।

ज़िक्रे 'मीर' की भाषा मुहावरेदार, चुस्त और आसान है। कहानी कहने का ढंग 'मीर' का अपना है। एक बार हाथ में लेने पर पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ना अनिवार्य हो जायेगा।

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद